जुलाई-दिसंबर 2017 अंक : 92-93
July-December
चुनाव संयुक्तांक
ISSN : 0976-0024

महिला
Mahila

विधि भारती
Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) शोध पत्रिका
Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय के आंशिक अनुदान से प्रकाशित)

मुख्य संपादक
सन्तोष खन्ना

पत्रिका में व्यक्त विचारों से सम्पादक/परिषद् की सहमति आवश्यक नहीं है।

व्यक्तियों के लिए		संस्थाओं के लिए
मूल्य 100/- रुपए	डाक ख़र्च अलग	वार्षिक मूल्य 500/- रुपए
वार्षिक मूल्य 450/- रुपए	**वर्ष 23-24**	आजीवन संस्था सदस्य 20,000/- रुपए
आजीवन सदस्य 4000/- रुपए	**अंक 92**	Citation No. MVB-23-24/2017

विधि भारती परिषद्
बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग
दिल्ली-110088 (भारत)
मोबाइल : 09899651872, 09899651272
फ़ोन : 011-27491549, 011-45579335
E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

'महिला विधि भारती'

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) विधि-शोध त्रैमासिक पत्रिका

अंक : 92-93 चुनाव संयुक्तांक (जुलाई-दिसंबर, 2017)

मुख्य संपादक : सन्तोष खन्ना

परिषद की कार्यकारिणी

संरक्षक : डॉ. राजीव खन्ना

1. डॉ. सुभाष कश्यप (अध्यक्ष)
2. न्यायमूर्ति श्री लोकेश्वर प्रसाद (उपाध्यक्ष)
3. श्रीमती सन्तोष खन्ना (महासचिव)
4. श्रीमती मंजू चौधरी (कोषाध्यक्ष)
5. डॉ. प्रवेश सक्सेना (सदस्य)
6. डॉ. आशु खन्ना (सदस्य)
7. श्री अनिल गोयल (सदस्य)
8. डॉ. पूरनचंद टंडन (सदस्य)
9. श्री जी.आर. गुप्ता (सदस्य)
10. डॉ. उषा टंडन (सदस्य)
11. डॉ. सूरत सिंह (सदस्य)
12. डॉ. के.एस. भाटी (सदस्य)
13. डॉ. शकुंतला कालरा (सदस्य)
14. डॉ. एच. बालसुब्रह्मण्यम (सदस्य)
15. डॉ. उमाकांत खुबालकर (सदस्य)
16. अनुरागेंद्र निगम (सदस्य)

प्रदेश प्रभारी

1. प्रो. देवदत्त शर्मा (उत्तर प्रदेश) 09236003140
2. प्रो. (डॉ.) सुरेंद्र यादव (राजस्थान) 09414442947

परामर्श मंडल

1. श्री एस.पी. सबरवाल
2. प्रो. (डॉ.) गुरजीत सिंह
3. प्रो. (डॉ.) एल.आर. सिंह
4. डॉ. उषा देव
5. प्रो. के.पी.एस. महलवार
6. श्री हरनाम दास टक्कर

विधि भारती परिषद्

बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088 (भारत)

फ़ोन : 011-27491549, 011-45579335, **मोबाइल** : 09899651872, 09899651272

E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

अंक 92-93 में

1.	चुनाव और चुनाव सुधार / **संपादकीय**	--	7
2.	भारत में चुनाव सुधार : एक तथ्यपरक दृष्टिकोण / **डॉ. श्रीमती राजेश जैन**	--	11
3.	चुनाव आयोग व चुनाव सुधार / **डॉ. उर्मिल वत्स**	--	16
4.	लोकतंत्र व चुनाव राजनीति / **रिंकी**	--	24
5.	निर्वाचन प्रणाली और राजनीतिक दल / **डॉ. सुभाष कश्यप**	--	28
6.	भारत का चुनाव आयोग / **सन्तोष खन्ना**	--	41
7.	भारत में चुनाव सुधार : चिंतन के कुछ बिंदु / **डॉ. नीलिमा सिंह**	--	46
8.	भारतीय चुनाव प्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन : (ईवीएम के विशेष संदर्भ में) / **डॉ. दिनेश बाबू गौतम**	--	54
9.	वर्तमान में चुनाव सुधार और निर्वाचन आयोग की भूमिका / **राजेंद्र कुमार मीणा**	--	65
10.	भारत में चुनाव आयोग के समक्ष चुनौतियाँ / **डॉ. प्रीति चाहल**	--	72
11.	चुनाव व्यवस्था और लोकतांत्रिक कसावट / **डॉ. पूनम माटिया**	--	76
12.	लोक सभा और विधान सभाओं के चुनाव साथ-साथ हों / **सन्तोष खन्ना**	--	82
13.	कंपनियों का राजनैतिक चंदा एवं चुनाव सुधार / **विपिन कुमार सिंह**	--	89
14.	चुनाव और चुनाव आचार संहिता / **गीता**	--	97
15.	एक विचार जो हुआ साकार / **रेनू नूर**	--	104
16.	हिंदी उपन्यासों में चुनाव सुधार / **डॉ. साधना गुप्ता**	--	107
17.	लोकतंत्र में चुनाव और भ्रष्टाचार / **आरती**	--	113

खंड : 2
चुनाव और हिंदी

18. लोकतंत्र को शक्ति प्रदान करती हिंदी / **डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरूण'** -- 119

19. चुनावी हिंदी -- हिंदी भाषा का नवीन स्वरूप / **शिखा कौशिक** -- 124

20. भारतीय दलीय व्यवस्था, चुनाव और हिंदी की भूमिका / **कल्याण कुमार** -- 139

21. भारत में चुनावों में हिंदी की भूमिका / **सुनील भुटानी** – 143

22. चुनावों में हिंदी भाषा का विकसित होता मुहावरा अथवा भाषा का संस्कार / **संतोष बंसल** -- 149

23. चुनाव प्रचार में नेताओं का मतदाता से संवाद और हिंदी / **उमाकांत खुबालकर** -- 154

24. भारत के चुनावों में हिंदी की भूमिका / **सुमन** -- 157

25. भारत के चुनावों में हिंदी की भूमिका / **डॉ. उषा देव** -- 161

लेखक मंडल

डॉ. (श्रीमती) राजेश जैन : प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान एवं विशेष कर्त्तव्यस्थ अधिकारी, उच्च शिक्षा सागर संभाग, सागर (मध्य प्रदेश)

डॉ. उर्मिल वत्स : सहायक प्रोफेसर, श्यामा प्रसाद मुखर्जी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

रिंकी : शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. सुभाष कश्यप : पूर्व महासचिव, लोक सभा एवं भारत के प्रतिष्ठित संविधानविज्ञ

सन्तोष खन्ना : पूर्व सदस्य, जिला उपभोक्ता फोरम, राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली, लोक सभा (सेवानिवृत्त) अधिकारी एवं 'महिला विधि भारती; त्रैमासिक पत्रिका की मुख्य संपादक

डॉ. नीलिमा सिंह : एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीतिशास्त्र विभाग, राजर्षि टंडन महिला महाविद्यालय, (संघटक इलाहाबाद विश्वविद्यालय), इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश।

डॉ. दिनेश बाबू गौतम : प्रो. प्राचार्य चंद्र प्रभु जैन कॉलेज ऑफ हॉयर स्टडीस एंड स्कूल ऑफ लॉ, नरेला, जी.जी.एस.आई.पी. यूनिवर्सिटी, द्वारिका, नई दिल्ली

राजेंद्र कुमार मीणा : मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान

डॉ. प्रीति चाहल : सहायक प्रोफेसर, श्यामा प्रसाद मुखर्जी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. पूनम माटिया : (मानद उपाधि), Msc. B Ed. MBA, writer, poetess, anchor, Literary Editor, True Media, Address : 90 B, Pocket A, Dilshad Garden, Delhi-110095

विपिन कुमार सिंह : शोधार्थी, विधि विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद,

गीता : प्राथमिक अध्यापिका, पूर्वी दिल्ली नगर निगम

रेनू नूर : के-292, शकूरपुर, आनंदवास, दिल्ली-110034

डॉ. साधना गुप्ता : राजकीय पी.जी. कॉलेज, झालावाड़ (राजस्थान)

आरती : म.न. 1666, वुलिया कॉलोनी, अलीपुर, दिल्ली-110036

डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरूण' : पूर्व प्राचार्य, 74/3, न्यू नेहरू नगर, रूड़की-247667

शिखा कौशिक काँधला : पूर्व प्रोफेसर (हिंदी), डी.ए.वी. (पी.जी.) कॉलेज, बुढ़ाना, मुजफ्फर नगर, उत्तर प्रदेश

कल्याण कुमार : जी-74, नजदीक दुर्गा मंदिर, भगत सिंह पार्क, सिरसपुर, दिल्ली-110092

सुनील भुटानी : राजभाषा अधिकारी, नेशनल बागवानी बोर्ड, प्लॉट नं. 85, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-18, गुरूग्राम-122015

सन्तोष बंसल : साहित्यकार, ए-1/17, मियाँ वाली नगर, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-87

उमाकांत खुबालकर : 33/11, नोवा अशोक रोड, क्षिप्रा सन सिटी, इंदिरापुरम, गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)-201014

सुमन : शोधार्थी, जे.एन.यू. नई दिल्ली

डॉ. उषा देव : पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, माता सुंदरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सन्तोष खन्ना

चुनाव और चुनाव सुधार

भारत एक लोकतांत्रिक देश है और लोकतंत्र का अर्थ है शासन का संचालन देश के लोगों के द्वारा करना। लोकतांत्रिक व्यवस्था के अंतर्गत सुशासन लोगों द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों द्वारा चलाया जाता है। चयन की यह प्रक्रिया ही चुनाव प्रक्रिया कहलाती है। भारत के संविधान और अन्य कायदे क़ानूनों के अंतर्गत इस चुनाव प्रक्रिया के सफल और सुचारू रूप से संचालन के लिए प्रावधान किए गए हैं जिसमें सर्वाधिक आधारभूत क़ानून यह है कि देश के प्रत्येक 18 वर्ष के वयस्क व्यक्ति को मतदान करने का अधिकार है और यह राजनीतिक अधिकार उसका अत्यंत महत्त्वपूर्ण अधिकार है। इस अधिकार का प्रयोग करने के लिए उसे कई प्रकार की मूलभूत स्वतंत्रता प्रदान की गई हैं, वह किस व्यक्ति या राजनीतिक दल को अपना अमूल्य वोट देगा, इसकी उसको स्वतंत्रता है। देश के प्रत्येक वयस्क मतदाता को मतदान करने के लिए एक मतदाता सूची तैयार की जाती है जिसे निर्वाचक नामावली की संज्ञा दी गई है। इस मतदाता सूची में 18 वर्ष के वयस्क व्यक्ति का नाम शामिल करने के लिए केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या इनमें से किसी भी आधार पर उसे अपात्र नहीं माना जाएगा और न ही कोई व्यक्ति किसी निर्वाचन क्षेत्र के लिए किसी विशेष निर्वाचक नामावली में सम्मिलित होने का दावा कर सकेगा। यह प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 325 में किया गया है। संविधान-प्रदत्त यह राजनीतिक समानता लोकतंत्र का प्राण है। उच्चतम न्यायालय ने आर.सी. पौड़वाल बनाम भारत संघ (1994) मामले में कहा है कि यह राजनीतिक समानता संविधान के धर्म निरपेक्ष स्वरूप को सुनिश्चित करने के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है और यह संविधान का आधारभूत तत्त्व है। इसका अभिप्राय यह है कि मतदान के मामले में सभी नागरिकों को समान अधिकार होगा और किसी को उस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता।

संविधान लागू होने के समय संसद और विधान सभाओं के लिए मतदान की आयु 21 वर्ष थी। 1988 में संविधान में संशोधन कर यह आयु घटा कर 18 वर्ष कर दी गई थी। लोकतंत्र का यह एक रचनात्मक क़दम था। इसका परिणाम यह हुआ कि देश में बढ़ती युवाओं की काफ़ी संख्या को वोट का अधिकार मिल गया। वैसे भी यह अधिकार

संविधान का ऐसा स्तंभ है जो लोकतंत्र को सार्थकता प्रदान करता है और भारत में जहाँ सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक कई तरह की असमानताएँ बनी हुई हैं, इस अधिकार के चलते भारत की संविधान की प्रस्तावना में दिए गए न्याय, स्वतंत्रता, समता, भाईचारे और गरिमापूर्ण जीवन के उद्देश्य को सुनिश्चित करता है।

देश के सभी वयस्क नागरिकों को मतदान करने का अधिकार है। केवल चित्तविकृति, अपराध या भ्रष्ट या अवैध आचरण के कारण अयोग्य होने के कारण वोट देने का अधिकार नहीं होगा। इस महत्त्वपूर्ण प्रावधान के होते हुए भी राजनीति का अपराधीकरण हो गया है यहाँ तक कि घोर अपराधी व्यक्ति चुनाव जीत कर संसद और विधान सभाओं में पहुँच रहे हैं और जब देश की बागडोर ऐसे लोगों के हाथ में होगी तो वहाँ की हालत क्या होगी, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

मतदाताओं के लिए यह जानना ज़रूरी है कि यदि कोई वयस्क जेल में है, सजायाफ्ता है या जेल में निरुद्ध है उसे मतदान करने का अधिकार नहीं है। यदि किसी मतदाता का नाम एक से अधिक निर्वाचन नामावली में है तो उसे एक ही स्थान पर वोट डालना चाहिए। यदि वह एक स्थान से अधिक स्थान पर वोट डालता है तो उसके दोनों स्थानों पर डाले वोट रद्द हो जाएँगे अर्थात् उसके वोट गिने ही नहीं जाएँगे।

मतदाताओं के लिए यह जानना भी ज़रूरी है कि यदि व्यक्ति देश का नागरिक नहीं है, उसे वोट देने का अधिकार नहीं होता है। यदि कोई व्यक्ति किसी सक्षम न्यायालय द्वारा चित्तविकृति का घोषित किया जाता है तो उसे भी निर्वाचन नामावली में शामिल नहीं किया जा सकता क्योंकि उसे वोट का अधिकार नहीं होता है। यदि कोई व्यक्ति भ्रष्ट अथवा गैर-क़ानूनी कार्य के कारण वोट देने से अयोग्य ठहराया गया है तो उसका नाम अगर निर्वाचन नियमावली में हो तो भी उसका नाम फोरन निकाल दिया जाता है। यथा यदि कोई व्यक्ति रिश्वत के अपराध से दंडित है अथवा उसने सती प्रथा का अनुमोदन आदि किया है तो उसे वोट देने का अधिकार नहीं होगा।

प्रश्न उठता है कि क्या किसी व्यक्ति को उसके विरुद्ध अपराध सिद्ध होने पर अथवा जेल में होने पर चुनाव लड़ने का अधिकार है? इसके बारे में अगर हम लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 62(5) देखें तो उसमें कहा गया है कि यदि कोई व्यक्ति जेल में है या सजायाफ्ता है या पुलिस की वैध हिरासत में है तो उसे वोट देने का अधिकार नहीं होगा। क्या वह ऐसी स्थिति में चुनाव लड़ सकता है? उच्चतम न्यायालय के एक निर्णय आने के बाद संसद ने लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 62(5) में एक परंतुक जोड़ कर यह प्रावधान कर दिया कि यद्यपि वोट देने पर रोक लगी है परंतु जिस व्यक्ति का नाम निर्वाचक नामावली में है, उसे चुनाव में खड़े होने की अनुमति होगी। धारा 62(5) में संशोधन की ज़रूरत इसलिए पड़ी थी क्योंकि पटना उच्च न्यायालय ने

2004 में एक निर्णय में कहा था जब कोई व्यक्ति हिरासत में होने के कारण मतदान नहीं कर सकता तो वह चुनाव भी नहीं लड़ सकता। इस निर्णय से उत्पन्न स्थिति का निराकरण करने के लिए धारा 62(5) में परंतुक जोड़ कर यह प्रावधान किया गया कि वोट का अधिकार न होने पर चुनाव लड़ा जा सकता है।

उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णयों के माध्यम से राजनीति में अपराधीकरण पर अकुंश लगाने के भरसक प्रयास किए हैं किंतु तत्कालीन सरकारों ने संसद के माध्यम से उस निर्णय के प्रभाव को समाप्त करने का प्रयास किया है जैसे धारा 62(5) में परंतुक लाकर किया गया। वर्ष 2005 में रमेश दलाल बनाम भारत संघ के मामले में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि संसद सदस्य या विधान सभा के सदस्य को यदि अपने कार्यकाल के दौरान न्यायालय द्वारा किसी अपराध के लिए 2 वर्ष या उससे अधिक का कारावास का दंड दिया जाता है तो उसकी सदस्यता रद्द घोषित हो जाएगी। इसी प्रकार, लिली थॉमस बनाम भारत संघ (2000) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने लोकप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8(4) को असंवैधानिक घोषित कर दिया जिसके अंतर्गत संसद सदस्य और राज्य विधान सभा सदस्य अपराधी घोषित होने पर भी अपील के निपटारे तक सदस्य बने रहते थे। उच्चतम न्यायालय ने भारत के विधि आयोग को 16 जनवरी, 2013 को पत्र लिख कर अनुरोध किया था कि वह चुने गए ऐसे सदस्यों को अयोग्य घोषित करने के बारे में विचार करें जिनके विरुद्ध किसी आपराधिक मामले में न्यायालय में आरोप-पत्र दाख़िल किया गया हो या जिनके विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अंतर्गत जाँच अधिकारी ने रिपोर्ट प्रस्तुत की हो या जिसने अधिनियम, 1951 की धारा 125क के अंतर्गत ग़लत शपथ पत्र फाइल किया हो। उच्चतम न्यायालय के इस अनुरोध पर विचार कर विधि आयोग ने अपने 244वें प्रतिवेदन में इस बारे में सिफ़ारिशें की थीं।

उच्चतम न्यायालय ने बार-बार इस बात को रेखांकित किया है और कृष्णामूर्ति बनाम शिवकुमार एवं अन्य (2015) के मामले में इस बात को दोहराया है कि राजनीति से अपराधीकरण तथा सार्वजनिक जीवन से भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए इस महत्त्वपूर्ण आदर्श को अपनाने के लिए यह अपेक्षित है कि ''नामांकन पत्र फाइल करते समय प्रत्याशियों को अपने संबंध में अपराधिक विवरण, विशेष रूप से घृणित अथवा गंभीर अपराधों अथवा भ्रष्टाचार या नैतिक पतन संबंधी अपराधिक विवरण देना बहुत ज़रूरी है और इस प्रकार की सूचना को दबाने या छिपाने से मतदाता वोट देने के लिए अपनी सही राय नहीं बना सकते है।'' अगर मतदाता को अपने प्रत्याशी के बारे में सही सूचना ही नहीं है तो वह वोट कैसे सही प्रत्याशी को दे सकते हैं। इस तथ्य से हम स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों की आशा ही नहीं कर सकते हैं।

यदि अपराधिक पृष्ठभूमि के प्रत्याशी चुनाव जीत जाते हैं तो उसका बहुत ग़लत

संदेश जाता है। एक तो सभी ओर का कामकाज प्रभावित होता है और वह व्यवस्था में अपने भ्रष्ट कार्यों से सरकारी खजाने को तो नुकसान पहुँचाते ही हैं बल्कि समाज को और भी भ्रष्ट करते हैं। लोग देखते हैं कि जब समाज में एक अपराधी राजनीतिज्ञ बन कर फल-फूल रहा है और अपनी दबंगदी से वह सफल है और साथ ही लूट खसीट कर देश को हानि पहुँचा रहा है तो सामान्यतया लोग ऐसे व्यक्तियों का अनुसरण कर अपराधी या भ्रष्ट बन जाते हैं और इसी कारण देश से भ्रष्टाचार और हिंसा समाप्त होने का नाम ही नहीं ले रही है। वर्तमान सरकार चाहे साफ़-सुथरी है फिर भी देश को एक भ्रष्ट छवि में पहला स्थान मिला है। जब तक राजनीति से अपराधीकरण और भ्रष्टाचार दूर नहीं होगा तब तक देश तेजी से विकास कर ही नहीं सकता। विधि आयोग ने अपने 255वें प्रतिवेदन में कई तरह के चुनाव सुधारों की सिफ़ारिश की है जिसमें अपराधिक मामलों में सुनवाई एक वर्ष में पूरा करने का भी उल्लेख है तथा यह भी कहा गया है कि नामांकन के साथ ग़लत शपथ-पत्र देने पर कम-से-कम 2 वर्ष के कारावास का दंड दिया जाए और इसे भ्रष्ट गतिविधि माना जाए और सदस्यता भी रद्द मानी जाए।

राजनीतिक दलों पर भी कई तरह के अंकुश लगाए जाने की सिफ़ारिशें की गई हैं विशेष रूप से राजनीतिक दलों द्वारा चुनावों पर किए जाने वाले ख़र्च के बारे में सही जानकारी देना शामिल है। ''देश में लोकतंत्र को सक्षम बनाने के लिए चुनाव निष्पक्ष और पारदर्शी होने चाहिए किंतु अब ऐसा प्रतीत होने लगा है कि आजकल चुनाव जीतना ही सब कुछ हो गया है चाहे उसमें नैतिकता को ताक पर ही क्यों न रख देना पड़े।'' ऐसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफोर्मस द्वारा आयोजित 'चुनाव और राजनीतिक सुधारों पर विचार' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में बोलते हुए चुनाव आयुक्त श्री ओ.पी. रावत ने यह बात कही थी। अतः राजनीतिक दलों को अपने आचार-व्यवहार में पारदर्शिता और जवाबदेही के तत्त्वों का समावेश करना होगा। राजनीतिक दलों एवं प्रत्याशियों के लिए चुनाव जीतना ज़रूरी समझा जाता है परंतु इसके लिए उन्हें उल्टे-सीधे रास्ते नहीं अपनाने चाहिए। मतदाताओं को चुनाव के समय पैसे, शराब या कुछ और चीजें देकर उनके वोट ख़रीदना अक्सर सुनने में आता है। इस तरह के कार्य को रिश्वत मानते हुए उसे भ्रष्टाचार माना जाना चाहिए।

राजनीतिक दल अपने मतदाताओं को लुभाने के लिए लेपटाप, टेलीविजन, मोबाइल, साड़ियाँ यहाँ तक कि मंगलसूत्र देने की पेशकश करते हैं। इस प्रकार के प्रलोभनों पर अंकुश लगना चाहिए क्योंकि जो राजनीतिक दल इस प्रकार के वायदे करते हैं, उसे पूरा तो सरकारी खजाने से ही करना होता है; इस प्रकार सरकार की योजनाऐं आदि प्रभावित होती हैं और देश के विकास की दिशा भी गड़बड़ा जाती है।

❑

डॉ. श्रीमती राजेश जैन

भारत में चुनाव सुधार : एक तथ्यपरक दृष्टिकोण

चुनाव लोकतांत्रिक शासन का आधार है। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए चुनाव एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। चुनाव द्वारा ही विधायिका के सदस्यों का चयन होता है, जो देश की नीतियों के निर्धारण और क़ानूनों के प्रणयन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है। भारत विश्व का सबसे विशाल लोकतांत्रिक गणराज्य है, जहाँ जनता के द्वारा जनता के लिए जनता में से प्रतिनिधि चुने जाते हैं। इसके लिए स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव आयोजित किए जाते हैं, जिसके लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 324 से 329 तक चुनाव आयोग की स्थापना तथा चुनाव से संबंधित प्रावधान दिए गए हैं। चुनाव आयोग का कार्य चुनाव का पर्यवेक्षण, निर्देशन और नियंत्रण कर भारत में चुनाव संपन्न कराना है। इसके लिए चुनाव आयोग को संवैधानिक दर्ज़ा प्रदान किया गया है। चुनाव आयोग बिना किसी सरकारी दबाव के स्वतंत्र एवं निष्पक्ष होकर कार्य करें इसलिए उसे स्वायत्ता प्रदान की गई है। लेकिन संपूर्ण भारत क्षेत्र में चुनाव कराना, चुनाव आयोग के लिए गंभीर चुनौती है क्योंकि कश्मीर से कन्याकुमारी तक फैला 132 करोड़ से ज़्यादा भारतीयों वाला विशाल भारतीय क्षेत्र, विभिन्न जाति, धर्म, भाषा, संप्रदाय में विभाजित भारत में, स्वतंत्र निष्पक्ष और निर्भीक चुनाव कराना एक विचारणीय प्रश्न है। इस पर चिंतकों बुद्धिजीवियों को गंभीरता से विचार करना होगा।[1]

चुनाव सुधार की दिशा में किए गए प्रयास : भारत में चुनाव आयोग का कार्य लोक सभा, विधान सभा, राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति का चुनाव कराना होता है। भारत में सीधे जनता संवैधानिक मुखिया प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति और राज्यपाल को नहीं चुनती है, बल्कि जनता के द्वारा चुने हुए जनप्रतिनिधि उन्हें अप्रत्यक्ष रूप से आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के आधार पर चुनते हैं। चुनाव प्रक्रिया अत्यधिक जटिल होने के कारण चुनाव निष्पक्ष नहीं हो पाते हैं इसलिए चुनाव में सुधार की अत्यंत आवश्यकता महसूस होती रही है, इसके लिए कई प्रयास किए गए हैं, जो इस प्रकार हैं :--

1. 1974 में गठित तारकुंडे समिति की संस्तुतियाँ।
2. 1990 में दिनेश गोस्वामी समिति के सुझाव।
3. 1992 में टी.एन. शेषन की सिफ़ारिशें।
4. 1996 में जनप्रतिनिधित्व (संशोधन) अधिनियम।
5. 2003 में निर्वाचन एवं अन्य संबंधित क़ानून (संशोधन अधिनियम)।
6. 2002 में चुनाव सुधार पर न्यायपालिका की पहल आदि।
7. 2005 में न्यायमूर्त्ति आर.सी. लाहोटी की अध्यक्षता वाली पाँच सदस्यीय खंडपीठ का निर्णय।

निष्पक्ष चुनाव को लोकतंत्र की आधारशिला कहा जाता है। निश्चय ही चुनाव लोकतंत्र का भविष्य निश्चित करता है। चुनाव की पारदर्शिता को बनाए रखने के लिए चुनाव आयोग केंद्र सरकार तथा उच्चतम न्यायालय तथा विभिन्न आयोगों द्वारा समय-समय पर अनेकों ऐसे प्रयास किए गए हैं, जो सराहनीय रहे हैं, जिनमें प्रमुख हैं :--

1. सबसे बड़ा और युगांतरकारी संशोधन मतदाताओं के सम्बंध में है। अभी तक मतदाता के लिए 21 वर्ष आयु निर्धारित थी। अब इसे कम करके 18 वर्ष कर दिया गया है। ऐसा इसलिए किया गया है कि देश के युवक शिक्षित और प्रबुद्ध हैं, और देश की राजनीतिक प्रक्रिया में उन्हें सहभागी बनाना श्रेयस्कर होगा। इस संशोधन के आधार पर अनुमानतः 10 करोड़ से अधिक युवाओं ने 2014 के आम चुनावों में अपने मत का उपयोग किया था, जो एक साहसिक लोकतांत्रिक क़दम हैं।[2]
2. मतदाताओं द्वारा इलेक्ट्रॉनिक मशीनों के माध्यम से अपना वोट दर्ज़ कराना।
3. अपराधी व्यक्तियों को चुनावों में उम्मीदवार नहीं बनाया जाना।
4. राज्य सभा और विधान परिषदों के सदस्यों के लिए चुनाव में उम्मीदवार बनने के लिए कम-से-कम 10 निर्वाचक या 10 प्रतिशत निर्वाचक उनके नाम का प्रस्ताव करें। ऐसा इसलिए कहा गया कि केवल वही लोग उम्मीदवार के रूप में आ सके जो गंभीरता से चुनाव लड़ने के इच्छुक हैं।
5. चुनाव आयोग के अधिकारों में वृद्धि कर देने से चुनाव आयोग अपेक्षाकृत अधिक सक्षम हो गया है।
6. नए नियम के अनुसार राजनीतिक दलों के संबंध में ऐसी व्यवस्था होगी कि जो राजनीतिक दल समाजवाद, लोकतंत्र और धर्म निरपेक्षता में विश्वास नहीं करते है उन्हें चुनाव आयोग पंजीकृत नहीं करेगा।[3]

इस प्रकार उपर्युक्त लिखित चुनाव संबंधी सुधारों से स्पष्ट होता है कि ये सुझाव स्वागत योग्य हैं उनसे संपूर्ण चुनाव प्रक्रिया अपेक्षाकृत अधिक सुदृढ़, स्वच्छ एवं अनुशासनबद्ध

बनेगी लेकिन आज वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ये सुधार पर्याप्त या परिस्थिति के अनुकूल दिखाई नहीं दे रहे हैं। इन चुनाव सुधारों के अलावा शोधकर्ता द्वारा चुनाव सुधार के संबंध में कतिपय सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं :--

भारत में चुनाव सुधार संबंधी सुझाव

1. हमारे देश में चुनाव सुधारों की अत्यधिक आवश्यकता है, जिसके लिए सर्वप्रथम प्रत्येक व्यक्ति के लिए मतदान किया जाना अनिवार्य होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति का नाम उसके वयस्क होते ही अपने आप मतदाता सूची में आ जाना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति मतदान करे इसके लिए आवश्यक है कि इंटरनेट से वोटिंग की सुविधा दी जाए। प्रत्येक व्यक्ति को उसका गोपनीय कोड देकर इंटरनेट से वोटिंग करायी जाए।
2. मतदान के दिन मतदान का समय समाप्त होने के तत्काल बाद ही मतदान केंद्रों पर मतों की गणना का काम उम्मीदवारों के प्रतिनिधियों की उपस्थिति में संपन्न किया जाए।
3. कोई भी व्यक्ति एक साथ दो सीटों पर चुनाव नहीं लड़ सके या ऐसे क़ानूनी प्रावधान किए जाएँ जिससे कोई उम्मीदवार यदि दो सीटों पर चुनाव लड़कर दोनों सीटे जीत जाए और फिर उसे क़ानूनन एक सीट खाली करनी पड़े तो ऐसी स्थिति में वह खाली की जा रही सीट पर होने वाले उपचुनाव के लिए उचित धनराशि सरकारी ख़जाने में जमा कराए।[4]
4. प्रत्येक व्यक्ति मताधिकार का प्रयोग करे इसके लिए ज़रूरी है कि बहुत छोटे-छोटे पोलिंग बूथ बनाए जाएँ। एक-एक हज़ार की जनसंख्या पर एक पोलिंग बूथ बनाया जाए ताकि लोगों को आवागमन पर ख़र्च न करना पड़े और उनके व्यापार एवं व्यवसायिक कार्य में बाधा न पहुँचे। बहुत कम समय में उन्हें अपने मताधिकार करने का अवसर मिल जाए।
5. चुनावों में उम्मीदवारों का चुनावी ख़र्च सरकार द्वारा उठाया जाना चाहिए क्योंकि सब उम्मीदवार समान मात्रा में धन ख़र्च नहीं कर पाते, जो उम्मीदवार 8-10 लाख रुपए ख़र्च करता है, वह चुनाव जीतने के बाद दुगुनी कमाई भी करना चाहता है इसे रोकने के लिए ज़रूरी है कि शासकीय ख़र्च से ही चुनाव संपन्न कराए जाए। सरकार द्वारा ही चुनाव साधन एवं सामग्री प्रदान की जाए और अति आधुनिक साधनों का प्रयोग चुनाव में किया जाए ताकि चुनाव में काले धन के अत्याधिक प्रयोग को रोका जा सके।[5]
6. चुनाव आयोग को चुनाव के समय फ़र्जी वोटिंग रोकने तथा मतदान केंद्र पर क़ब्ज़ा करने से रोकने के लिए अत्यधिक सैन्य बल की व्यवस्था होनी चाहिए, इसके

लिए ज़रूरी है कि जनता द्वारा संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए।

7. हमारे देश में प्रत्येक व्यक्ति को विधि के समक्ष समता का मूल अधिकार दिया गया है लेकिन प्रत्येक व्यक्ति के वोट की क़ीमत एक-सी है। चाहे वह व्यक्ति अशिक्षित हो, अर्द्धशिक्षित हो, अल्पशिक्षित हो एवं पूर्ण शिक्षित हो सभी के वोट की वेल्यू एक-सी है जो संवैधानिक अधिकारों के विपरीत है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति के वोट की क़ीमत उसकी शिक्षा और समझदारी के आधार पर होनी चाहिए।
8. निर्वाचन प्रणाली में सुधार को लेकर विरोध और उदासीनता की स्थिति को लेकर पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त एस.वाई. कुरैशी का कहना है इलैक्शन रिफार्म्स पर एक्शन होना आवश्यक है। आम सहमति मात्र इसका हल नहीं है।[6]
9. जनता जिस प्रकार प्रत्याशी को चुनकर सरकार में भेजती है तो उसी प्रकार उन्हें चुने हुए व्यक्ति को वापिस बुलाने का चुनावी अधिकार भी प्राप्त होना चाहिए। जनता का कहना है, कि जब हम किसी व्यक्ति को चुनते हैं और वह जिन वायदे, नीति, क्रियाकलाप और आश्वासनों से जनता का वोट प्राप्त करते हैं परंतु उस क्षेत्र विशेष की जनता उसके एक साल बाद किए गए कार्य से ख़ुश नहीं हो तो चुने जाने के एक साल बाद उस क्षेत्र विशेष की जनता को उस जीते हुए प्रत्याशी को वापिस बुलाए जाने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए परंतु यह अधिकार केवल उन्हीं व्यक्तियों को प्राप्त होना चाहिए जिन्होंने उसे वोट दिया है।
10. चुनाव सुधार की दिशा में विभिन्न राजनीतिक दलों ने भी अपनी सहमति जताई है तथा कहा है कि आज चुनाव सुधार जल्दी शुरू किए जाएँ ताकि चुनावों में काले धन के उपयोग पर अंकुश लगाया जा सके और साथ ही आपराधिक पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवारों के चुनाव लड़ने पर रोक लग सके।[7]
11. हमारे संविधान में प्रत्येक व्यक्ति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी गई है इसके लिए ज़रूरी है कि उस व्यक्ति के पसंद का जन-प्रतिनिधि चुना जाए। इसके लिए व्यक्ति को उसके क्षेत्र के अनुसार जन-प्रतिनिधि चुनने की स्वतंत्रता दी जाए। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार प्राप्त होना चाहिए कि वह अपनी पसंद के व्यक्ति को वोट दे और यदि उस क्षेत्र विशेष के व्यक्ति को उस क्षेत्र विशेष में खड़े व्यक्ति से ज़्यादा वोट देते हैं। उसके वोट की संख्या नामांकन भरे हुए व्यक्तियों से अधिक आती है तो ऐसे जनता के व्यक्ति को जनता के द्वारा चुना जाकर बिना निर्वाचक नामांकन पत्र भरे उसे चुना हुआ घोषित किया जाना चाहिए। इसके लिए ज़रूरी है कि सरकार प्रत्येक जन-प्रतिनिधि को निःशुल्क इंटरनेट सुविधा

प्रदान करें और उसे निःशुल्क अपनी बेवसाइट द्वारा व्यक्तिगत विवरण शासकीय ख़र्चे से प्रत्येक व्यक्ति के लिए इंटरनेट के माध्यम से उपलब्ध कराए जाने की व्यवस्था की जाए।[8]

12. चुनाव सुधारों पर आम सहमति बनाने के लिए सरकार शीघ्र ही सर्वदलीय बैठक बुलाने की व्यवस्था करे ताकि राजनीतिक अपराधीकरण से मुक्ति, ख़ारिज करने का अधिकार और चुनाव में सरकारी धन के इस्तेमाल जैसे मुद्दे हल हो सकेंगे जिसके कारण भारत में स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव संपन्न हो सकेंगे।
13. लोकपाल विधेयक के समान चुनाव सुधारों पर व्यापक चर्चा की आवश्यकता है। चुनाव सुधार के लिए राइट टू रिकॉल प्रक्रिया को अपनाना श्रेयस्कर होगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि देश में चुनाव सुधार संबंधी अनेक प्रयास लोकतंत्र की सफलता में कारगर सिद्ध हुए है फिर भी चुनाव सुधार संबंधी प्रयास तभी सार्थक होंगे जब मतदाता जागरूक हो और अपने प्रतिनिधि को चुनते समय किसी प्रकार के दबाव और प्रलोभन में न आए, क्योंकि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव व्यवस्था लोकतंत्र को स्थायित्व और परिपक्वता प्रदान करती है। अंत में चुनाव सुधारों के संदर्भ में यह कहना था कि धन्ना सेठों, दादाओं और राजनीतिज्ञों की साठ-गाँठ तोड़ने के उपाय किए जाने चाहिए तथा शोधकर्ता जो महत्त्वपूर्ण सुधार प्रस्तुत किए गए हैं उनके बारे में भी विचार करके क़ानून बनाया जाना चाहिए। अतः इस दिशा में ठोस एवं कारगर उपाय की अपेक्षा है।

❑

संदर्भ

1. ओझा, विनयकुमार, भारत का संविधान एवं राजव्यवस्था, मंथन प्रकाशन, इलाहाबाद, 2012, पृ. 241
2. राय, डॉ. एम.पी., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 2008, पृ. 358
3. Article Shared *by* Rashmi B, इंटरनेट पर चुनाव सुधार संबंधी लेख।
4. चुनाव सुधार पर Read Breaking News on Zee News, Hindi
5. गुप्ता उमेश, भारत में चुनाव सुधार और चुनाव आयोग के सामने चुनौतियाँ संबंधी इंटरनेट पर आलेख, 2012
6. प्रतियोगिता दर्पण, आगरा, नवंबर 2016, पृ. 1214
7. इंडिया टुडे, नई दिल्ली, 15 जनवरी, 2017, पृ. 23
8. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1) के अनुसार

डॉ. उर्मिल वत्स

चुनाव आयोग व चुनाव सुधार

"मतदान व्यवहार अध्ययन के उस क्षेत्र के उन तथ्यों से संबंधित है जो लोगों को सार्वजनिक चुनावों में मताधिकार का प्रयोग करने के लिए प्रेरित करते हैं। मतदान व्यवहार इन कारणों से भी संबंधित है जो मतदाताओं को किसी विशेष रूप से मताधिकार का प्रयोग करने के लिए प्रेरित करते हैं।"

-- जे.सी. प्लानो और आर.ई. रिग्स

भारत एक लोकतंत्रीय देश है। लोकतंत्रीय शासन प्रणाली का संचालन लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधियों के द्वारा किया गया है। इसलिए ऐसी शासन प्रणाली में प्रतिनिधियों के चुनाव के विषय में अनिवार्य व्यवस्थाएँ की जाती हैं। भारत में विधान मंडल तथा अन्य संस्थाओं के चुनाव के विषय में संविधान में आवश्यक व्यवस्थाएँ की गई हैं। संविधान में यह व्यवस्था की गई है कि भारत में चुनाव करवाने का संपूर्ण दायित्व निर्वाचन आयोग का होगा।[1]

भारत प्रभुसत्ता संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य है। लोकतंत्र के बने रहने के लिए क़ानून के शासन को बने रहना चाहिए तथा यह आवश्यक है कि बेहतरीन उपलब्ध व्यक्ति देश के समुचित शासन के लिए जनप्रतिनिधि के रूप में चुने जाने चाहिए और जनप्रतिनिधि के रूप में बेहतर उपलब्ध व्यक्तियों के चुने जाने के लिए चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष कराए जाने चाहिए; जहाँ निर्वाचक अपनी स्वतंत्र इच्छा के अनुसार अपने वोट का इस्तेमाल करने में समर्थ हो। इस प्रकार स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव लोकतंत्र की रीढ़ का निर्माण करते हैं।[2]

भारत में सरकार बनाने के लिए ब्रिटिश संसदीय प्रणाली अपनाई गई हैं। भारत में निर्वाचित राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, निर्वाचित संसद और प्रत्येक राज्य के लिए निर्वाचित

राज्य विधायिकाएँ हैं। अब भारत में निर्वाचित नगरपालिकाएँ, पंचायतें और अन्य स्थानीय निकाय भी हैं। इन कार्यालयों और निकायों के लिए स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए तीन पूर्वापेक्षाएँ हैं।

1. इन चुनावों को कराने के लिए एक प्राधिकरण जो राजनीतिक एवं कार्यकारी हस्तक्षेप से अलग होना चाहिए।
2. क़ानून जो चुनाव कराने को शामिल करे और उस प्राधिकरण के अनुरूप हो जिसे इन चुनावों को कराने के लिए ज़िम्मेदारी दी गई हो।
3. एक व्यवस्था जहाँ इन चुनावों के संबंध में उत्पन्न सभी संदेह और विवाद निपटाए जा सकें।

भारत के संविधान में निर्वाचन संबंधी निम्नलिखित प्रावधान हैं --

अनुच्छेद 54 : राष्ट्रपति का निर्वाचन।

अनुच्छेद 66 : उपराष्ट्रपति का निर्वाचन।

अनुच्छेद 71 : राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित विषय।

अनुच्छेद 324 : निर्वाचनों के अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण का निर्वाचन आयोग में निहित होना।

अनुच्छेद 325 : धर्म, मूलवंश, जाति या लिंग के आधार पर किसी व्यक्ति का निर्वाचक नामावली में सम्मिलित किए जाने के लिए अपात्र न होना और किसी विशेष निर्वाचक-नामावली में सम्मिलित किए जाने का दावा न किया जाना।

अनुच्छेद 326 : लोक सभा और राज्यों की विधान सभाओं के लिए निर्वाचनों का वयस्क मताधिकार के आधार पर होना।

अनुच्छेद 327 : विधान मंडलों के लिए निर्वाचनों के संबंध में उपबंध करने की संसद की शक्ति।

अनुच्छेद 328 : किसी राज्य के विधान मंडल के लिए निर्वाचनों के संबंध में उपबंध करने के लिए उस विधान मंडल की शक्ति।

अनुच्छेद 329 : निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन।

अनुच्छेद 329ए : प्रधानमंत्री और अध्यक्ष के मामले में संसद के लिए निर्वाचनों के बारे में विशेष उपबंध।

अनुच्छेद 243के : पंचायतों के लिए निर्वाचन।

अनुच्छेद 243(2)ए : नगरपालिकाओं के लिए निर्वाचन।

नगरपालिकाओं, पंचायतों और अन्य स्थानीय निकायों के लिए चुनाव कराने संबंधी क़ानून बनाने का दायित्व राज्य विधायिकाओं को दिया गया है। चुनाव कराने के पर्यवेक्षण, निर्देश और नियंत्रण कार्य हेतु राज्य निर्वाचन आयोग के गठन का प्रावधान किया गया है।[3]

चुनावों का महत्त्व और राजनीतिकरण की प्रक्रिया

चुनाव एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा जनता अपने प्रतिनिधियों को चुनती है और किसी हद तक उस पर नियंत्रण भी रखती है। चुनावों के महत्त्व अथवा चुनावों के कार्यों को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है --

1. जनता अपने शासकों का चयन करती है।
2. जनता अपने शासकों पर नियंत्रण रखती है।
3. चुनाव सरकार के लोकतंत्रीय स्वरूप को प्रकट करते हैं।
4. चुनाव कई ख़ास मुद्दों को लेकर लड़े जाते हैं।
5. हिंसक क्रांति का भय समाप्त हो जाता है।

मतदान व्यवहार : समीक्षा

मतदान व्यवहार का आशय है कि मतदाता अपने मताधिकार के प्रयोग में किन तत्त्वों से प्रभावित होता है। मतदान व्यवहार के सर्वप्रथम तो यह अध्ययन किया जाता है कि कौन-से तत्त्व व्यक्ति को मताधिकार का प्रयोग करने के लिए प्रेरित और कौन से तत्त्व उसे इस संबंध से निरुत्साहित करते हैं। द्वितीय स्तर पर इस बात का अध्ययन किया जाता है कि किन तत्त्वों से प्रभावित होकर व्यक्ति एक विशेष उम्मीदवार और एक विशेष राजनीतिक दल के पक्ष में अपने मताधिकार का प्रयोग करते हैं। इस दृष्टि से मतदान व्यवहार का अध्ययन चुनाव से पूर्ण भी किया जाता है और चुनाव के बाद भी।

मतदान व्यवहार के अध्ययन में कठिनाइयाँ

मतदान मनोवैज्ञानिक तत्त्वों से प्रेरित एक गूढ़ राजनीतिक प्रक्रिया है जो अनेक आंतरिक और बाहरी तत्त्वों से प्रभावित होती है। स्वाभाविक रूप से मतदान व्यवहार के अध्ययन में अनेक कठिनाइयाँ आती हैं।

1. एक क्षेत्र का मतदान व्यवहार दूसरे क्षेत्र के मतदान व्यवहार से भिन्न होता है, इसलिए किसी एक क्षेत्र के मतदान व्यवहार के आधार पर इस संबंध में किसी प्रकार के सामान्य निष्कर्ष निकालना संभव नहीं होता। विभिन्न क्षेत्रों में विद्यमान प्रकृतियों के लंबे समय तक अवलोकन के आधार पर ही इस संबंध में किन्हीं परिणामों पर पहुँचने की आशा की जा सकती है।
2. भारत जैसे विविधता वाले देश में केवल कुछ निश्चित शीर्षकों के अंतर्गत संपूर्ण देश के मतदान व्यवहार का अध्ययन नहीं किया जा सकता। अतः यह कठिनाई आती है कि किन क्षेत्रों का अध्ययन किया जाए और किन शीर्षकों के अंतर्गत यह अध्ययन किया जाए।

3. सबसे प्रमुख कठिनाई यह है कि किन व्यक्तियों का साक्षात्कार किया जाए, उनमें से अनेक अध्ययनकर्ता के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाते।[4]

मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्त्व

मतदान में भाग लेने वाले लोगों का अनुपात जनसंख्यात्मक लक्षणों और सामाजिक-आर्थिक पद के अनुसार बदलता रहता है। मतदान में भाग लेने की प्रवृत्ति स्त्रियों में पुरुषों से अधिक, निरक्षरों में साक्षरों से अधिक, कम आय समूह में ज़्यादा आय समूह से अधिक तथा सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों में सामाजिक दृष्टि से उन्नत वर्गों की तुलना में अधिक होती है। मतदान में भाग न लेने की प्रवृत्ति उनमें भी अधिक होती है जिन्हें कम राजनीतिक सूचना प्राप्त है अथवा जिन पर संचार के साधनों और अन्य दबावों का प्रभाव कम है। मतदान में भाग लेने वाले व्यक्ति सामान्यतया निम्न तत्त्वों से प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

जातिवाद : जातिवाद मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख तत्त्व रहा है। वैसे तो इस तत्त्व का प्रभाव भारतीय संघ के सभी राज्यों में है, लेकिन फिर भी बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान और केरल में इस तत्त्व का प्रभाव अधिक है।

- **आर्थिक स्थिति :** व्यक्ति की आर्थिक स्थिति भी मतदान व्यवहार को प्रभावित करती है। सामान्यतया यदि व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति अच्छी हो तो मतदाता शासक दल के पक्ष में मतदान करते हैं, अन्यथा शासक दल के विरुद्ध।
- **नेतृत्व :** मतदान को प्रभावित करने वाला यह एक मुख्य तत्त्व है और इस तत्त्व के आधार पर भारत के अब तक चुनाव परिणामों की व्याख्या की जा सकती है।[5]
- राजनीतिक स्थिरता और केंद्र में सुदृढ़ सरकार की आकांक्षा।
- दलों की विचारधारा, कार्यक्रम और नीति।
- क्षेत्रवाद की प्रवृत्ति।
- भाषाई स्थिति।
- राजनीतिक जागृति।
- धर्म।
- राजनीतिक दलों के चुनाव घोषणा-पत्र।
- दल अभिन्नता।
- वर्ग संबंध।
- व्यक्तिगत संपर्क।
- परिवर्तन के लिए।
- तात्कालिक विषय।

भारतीय चुनाव प्रणाली में नकारात्मक प्रवृत्तियाँ

भारतीय निर्वाचन परिदृश्य में नकारात्मक प्रवृत्तियों में वृद्धि होती जा रही है। निर्वाचनों में झूठे वायदों का सब्ज़-बाग़, धोखाधड़ी, जातिवाद तथा संप्रदायवाद, बढ़ती हुई चुनावी हिंसा तथा अपराधियों, गुंडों, समाज विरोधी तत्त्वों, हत्यारों इत्यादि का चुनाव में उतरना अथवा खुलकर प्रयोग किया जाना, मतदाताओं को डराना, धमकाना, जाति मतदान कराना, मतदान केंद्रों पर कब्ज़ा करना इत्यादि नकारात्मक प्रवृत्तियों में वृद्धि हुई है।[6]

भारतीय निर्वाचन प्रणाली में निम्नलिखित दोष विद्यमान हैं --

- चुनावों में साधारणतया मंत्री अपनी सत्ता का ग़लत प्रयोग करते हैं। शासन तंत्र का प्रयोग करते हैं। चुनाव के समय लोगों को तरह-तरह के आश्वासन देते हैं। सरकारी गाड़ियों व प्रचार साधनों की सुविधाओं का दुरुपयोग होता है।
- यद्यपि चुनावों के ख़र्चे निश्चित किए गए हैं लेकिन निश्चित ख़र्चे से कहीं अधिक धन ख़र्च किया जाता है। पूँजीपतियों से राजनीतिक दल धन इकट्ठा करते हैं जिससे भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन मिलता है।
- भारत में एक-सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों की व्यवस्था है जिससे कई बार ऐसे व्यक्ति चुनाव जीत जाते हैं जिन्हें अल्पमत प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार उन्हें क्षेत्र का बहुमत स्वीकार नहीं करता। इससे लोकतंत्र की भावना को ठेस पहुँचती है।
- सत्ताधारी दल अपने उम्मीदवारों के निर्वाचन क्षेत्रों में अपने पक्ष के सरकारी अधिकारियों का तबादला करके भेज देते हैं। इससे चुनाव व्यवस्था का अपराधीकरण होता है।[7]
- **दल निर्माण पर प्रतिबंध न होना :** राजनीतिक दलों का निर्माण आर्थिक व राजनीतिक आधार पर होने चाहिए। जाति-धर्म व क्षेत्र के आधार पर दल बनाए जाते हैं जो संकीर्णता को जन्म देते हैं जिससे राष्ट्रीय एकता और अखंडता को हानि पहुँचती है।
- भारतीय संसद तथा राज्य विधान मंडलों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बहुत कम है।
- बहुत ही कम प्रतिशत में मताधिकार का प्रयोग भारतीय निर्वाचन प्रणाली का एक महत्त्वपूर्ण दोष बन गया है। 14वीं लोक सभा के चुनावों में 57.86 प्रतिशत लोगों ने भाग लिया था। ऐसी स्थिति में यह कहना उचित नहीं है कि चुनाव जीतने वाले जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करते हैं।[8]

निर्वाचन प्रणाली में सुधार

भारतीय निर्वाचन प्रणाली में मूलभूत सुधारों के लिए राजनेताओं, सत्ता पक्ष एवं विपक्ष, बुद्धिजीवियों एवं जनता की ओर से समय-समय पर आवाज़ उठती रहती है। यही कारण है कि वाई.वी. चव्हाण समिति (1967), सम्पथ कुमारन समिति, चंद्रशेखर समिति, ताराकुंडे समिति, दिनेश गोस्वामी समिति, इंद्रजीत समिति, चुनाव आयोग की

रिपोर्ट, टंका आयोग (2010), भारतीय विधि आयोग की रिपोर्ट (1999), एम.एन. वेंकटचलैया की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय आयोग (2000-2002), निर्वाचन आयोग की रिपोर्ट (2004) शासन में नैतिकता पर वीरप्पा मोइली की अध्यक्षता में गठित द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (2007) बनाए जाते रहे हैं, जनप्रतिनिधि (संशोधन) अधिनियम 2010 द्वारा अनिवासी भारतीयों को वोट डालने का अधिकार दिया गया।[9] चुनाव आयोग द्वारा भी समय-समय पर अनेक क़दम उठाए गए हैं, जैसे --

- **मतदाता पहचान-पत्र :** निर्वाचक नामावलियों में शुद्धता लाने का प्रयास करने के लिए और, निर्वाचक धाँधलियों को रोकने के लिए निर्वाचन आयोग ने अगस्त 1993 में देश के सभी मतदाताओं के लिए फ़ोटो पहचान-पत्र बनाने का आदेश दिया। यदि किसी व्यक्ति के पास मतदान पहचान-पत्र नहीं है तो उसे मतदान करने के लिए दो शर्तें अनिवार्य हैं --
  1. उसका नाम पंजीकृत मतदाता सूची में होना चाहिए।
  2. उसको पहचान-पत्र दस्तावेज़ों में से किसी एक को ले जाना आवश्यक है।
- **इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन :** परंपरागत मत-पत्र प्रणाली की तुलना में ई.वी.एम. के कई फ़ायदे हैं। इससे अवैध और संदिग्ध मतों की आशंका समाप्त हो जाती है, जो अनेक मामलों में विवादों और चुनावी याचिकाओं के मूल कारण होते हैं। वोटों की गिनती की प्रक्रिया अत्यंत तीव्र हो जाती है। ई.वी.एम. बूथ कैपचरिंग भी इतिहास की बात हो गई है। एक ई.वी.एम. मशीन अधिकतम 16 उम्मीदवारों के लिए एक साथ मतदान का रिकार्ड रख सकती है।
- **VVPAT (वी.वी. पट) :** Voter Verified Paper Audit Trail मतपत्र रहित मतदान प्रणाली का इस्तेमाल करते हुए मतदाताओं का feedback देने का तरीक़ा है। इसका उद्देश्य ई.वी.एम. की स्वतंत्र पुष्टि है। यह व्यवस्था मतदाता को इस बात की पुष्टि करवाने की अनुमति देती है कि उसकी इच्छानुसार मत पड़ा है या नहीं।
  उच्चतम न्यायालय ने अक्टूबर 2013 में **सुब्रह्मण्यम स्वामी बनाम भारत निर्वाचन आयोग मामले** में व्यवस्था देते हुए कहा कि VVPAT स्वतंत्र तथा निष्पक्ष चुनावों के लिए ज़रूरी है तथा भारत निर्वाचन आयोग को VVPAT से जोड़ने को निर्देश दिया। वर्तमान हालात में VVPAT की माँग दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है और इसे सभी क्षेत्रों में लागू करने की व्यवस्था ज़ोर पकड़ रही है।
- **NOTA (none of the above) :** नकारात्मक वोटिंग का प्रावधान कोई नई परिकल्पना नहीं है। यह प्रावधान सर्वप्रथम सन् 1961 के लोक सभा चुनाव में किया गया था। तब से यह हमारे लोकतंत्र में उपस्थित है। नकारात्मक वोट निर्वाचन नियम संहिता, 1961 की धारा 49(0) के अंतर्गत डाला जा सकता है। दिसंबर 2013

में संपन्न हुए पाँच राज्यों के विधान सभा चुनावों में पहली बार मतदाताओं के लिए ई.वी.एम. से नोटा का विकल्प उपलब्ध कराया गया था।

चुनाव आचार संहिता : चुनाव आचार संहिता के निर्देशों का पालन चुनाव ख़त्म होने तक हर राजनीतिक दल तथा उम्मीदवार को करना होता है। चुनाव की अधिसूचना जारी होने के साथ ही आदर्श आचार संहिता लागू हो जाती है। चुनाव आचार संहिता लागू होने के साथ ही सरकार और प्रशासन पर कई अंकुश लग जाते हैं। इस दौरान राजनीतिक दलों के आचरण और क्रियाकलाप पर नज़र रखने के लिए निर्वाचन आयोग द्वारा पर्यवेक्षक नियुक्त किए जाते हैं।

हालाँकि आदर्श आचार संहिता को कोई विशिष्ट वैज्ञानिक आधार प्राप्त नहीं है इसका केवल प्रेरक प्रभाव होता है। इसमें नैतिकता के नियम होते हैं लेकिन इसकी वैधानिक आधार की कमी निर्वाचन आयोग को इसे लागू करने में बाध्यकारी नहीं बनाता है। **जेडीएस बनाम मुख्य चुनाव आयुक्त** के मामले में केरल उच्च न्यायालय ने यह कहा कि आदर्श आचार संहिता का उद्देश्य सभी सरकारी गतिविधियों को रोकना नहीं है बल्कि उन कार्यों को रोकना है जो सीधे तौर पर मतदाताओं के एक वर्ग को प्रभावित कर सकता है।[10] इस तरह की आचार संहिता स्वतंत्र व निष्पक्ष चुनाव करने के लिए आवश्यक है। इसके साथ-साथ और भी कई बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है --

1. चुनाव के वक़्त शराब बाँटने की प्रवृत्ति को देखते हुए शराब की बिक्री पर लगभग मतदान के लिए 3 दिन पहले से पाबंदी लगाई जाए।[11]
2. वोटिंग सिस्टम में और सुधार की ज़रूरत है। कई नौजवान अपना वोट नहीं दे पाते क्योंकि अपने काम के सिलसिले में वे किसी अन्य शहर में होते हैं। ऑन लाइन वोटिंग भी शुरू की जानी चाहिए।[12]
3. मतदान को अनिवार्य किया जाना चाहिए, ताकि ज़्यादा-से-ज़्यादा मत पड़ सकें और बेहतर जनप्रतिनिधि चुन कर आ सके।
4. विधान सभा और लोक सभा चुनाव साथ-साथ हों तो इससे चुनाव पर ख़र्च होने वाला पैसा और समय दोनों बचाया जा सकता है।[13]
5. आचार संहिता को और ज़्यादा कठोर बनाया जाए ताकि किसी भी तरीक़े के दुरुपयोग को रोका जा सके।
6. चुनाव आयोग को अपने अधिकारों का प्रयोग सशक्त रूप से करना चाहिए।[14]

भारतीय लोकतंत्र को सुदृढ़ बनाने के लिए समय-समय पर दिए गए सुझावों को कार्यान्वित करना अत्यंत अनिवार्य है। स्वच्छ एवं निष्पक्ष निर्वाचन लोकतंत्र में जन-आस्था एवं जन-सहभागिता की वृद्धि करते हैं और लोकतंत्र का भविष्य उज्ज्वल होता है।

❑

Refrences :

1. Dumett, Michael, Principles of Electoral Reforms, New York : Oxford University Press (1997).
2. Open Source Digital Voting Foundation.
3. Electoral Design Reference Materials.
4. Electoral Reform Wiki.
5. Somnath Chatterjee. "Constitution, Parliament and the People", Sage Publication, New Delhi, 2014.
6. Rajni Kothari, "Issues before Indian Democracy : An Overview" Sage Publication, New Delhi, 2014
5. Dr. Ramji Lal, Indian Government and Politics, Natraj Publishing House, Karnal.
6. G.M. Joshi, The Constitution of India, Delhi, Macmillion, 1983
7. India Today, New Delhi.
8. Subhash C. Kashyap, The Parliament and the Executive in India, New Delhi. Bereau of Parliament Studies and Training, Lok Sabha Secretariat, 1981.
9. Ibid
10. G.M. Balyogi, "Imperative of Discipline and Decorum in Parliament." The Journal of Parliametary Information, 2000.
11. Civil Services Chronicle, May 2014.
12. Election Commission of India, Wiki.
13. Ibid
14. Ibid

रिंकी

लोकतंत्र व चुनावी राजनीति

स्वतंत्रता के समय विविधतामूलक भारतीय समाज के लिए उदारतावादी और मध्यमार्गी लोकतंत्र को उचित माना गया। भारत में लोकतंत्र की सफलता को लेकर कई ब्रिटिश उपनिवेशवादियों जैसे लार्ड कर्जन, सेलिंग हेरिसन, मैक्सवेल, रोनाल्ड सेगल व विद्याधर नैपॉल द्वारा संदेह प्रस्तुत किया गया। इनका मानना था कि लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाने वाले भारतीय समाज की जड़ें सामंती अलोकतांत्रिक, परंपरागत मूल्यों में बसी हुई हैं और भारत में जनता इस लायक नहीं है कि वह लोकतांत्रिक राजनीति कर सके। यहाँ तक कि बहुलतावादी लोकतंत्र के संविधान को जामा पहनाने वाले भीम राव अंबेडकर भी लोकतंत्र के सांविधिक राजनीतिक उसूल तथा कर्मकांडीय श्रेणीबद्ध समाज-व्यवस्था के बीच टकराव को लेकर कहीं-न-कहीं चिंतित देखे जा सकते थे। (दुबे, 2002, पृ. 26)।

इसके बावजूद यह कहा जा सकता है कि भारत विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश के रूप में उभरा है। भारतीय संविधान के अंतर्गत सभी भारतीयों को नागरिक होने के नाते समानता का दर्ज़ा दिया गया है। साधारण अर्थों में लोकतंत्र वह व्यवस्था है, जिसमें जनता अपना शासक स्वयं चुनने के द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन करती है। अब्राहम लिंकन ने लोकतंत्र को परिभाषित करते हुए इसे जनता का, जनता के लिए और जनता द्वारा शासन कहा है। भारत में लोकतंत्र का विकास पश्चिम से अलग देखा जा सकता है। भारत ने जिस लोकतांत्रिक मॉडल को अपनाया वह पूर्णतः पश्चिम की नक़ल पर आधारित नहीं था। यह भारतीय अभिजनों के नवाचार का परिणाम था जिसका स्वरूप जनता की भागीदारी के कारण काफ़ी परिवर्तित हुआ है ।

लोकतंत्र के अंतर्गत चुनाव व मतदान को नागरिकों की शासन में सहभागिता के मुख्य आधार स्तंभ के रूप में देखा जाता है। चुनावों में व्यक्ति ही यह निर्णय करता है कि उसे किसे चुनना है और क्यों चुनना है। यह नागरिक की अपने शासन में सहभागिता को सुनिश्चित करता है। यह व्यवस्था लोकतंत्र के स्वरूप को एक नया आयाम देती है।

इसी संदर्भ में, भारत के अंतर्गत चुनावी व्यवस्था या प्रक्रिया का एक नया रूप देखा जा सकता है, जिसमें समुदाय, समूह, विचारधारा, संसाधन, भाषा, प्रतीक व स्थानीय मुद्दे अधिक महत्त्वपूर्ण हो गए हैं जो कहीं-न-कहीं यह प्रस्तुत करते हैं कि भारतीय परंपरावादी समाज में आधुनिक राजनीतिक संस्थाओं को तो अपनाया गया, परंतु समय के साथ-साथ इनसे समझौता कर लिया गया। समय अंतराल में सत्ता के लिए चुनाव तो होते हैं परंतु चुनावी राजनीति के जिस तरीक़े व व्यवहार को अपनाया जाता है वह आज भी पुराना है ।

इस परिप्रेक्ष्य में भारत में जो चुनावी राजनीति उभर कर आयी है उसे नज़र अंदाज नहीं किया जा सकता। चुनावी राजनीति का सहभागी लोकतंत्र में अधिक महत्त्व रहता है। इसे लोकतंत्र में नागरिकों को संगठित करने की प्राथमिक प्रक्रिया कहा जा सकता है। चुनावी राजनीति राज्य को शासित करने के लिए उम्मीदवारों में से मत के द्वारा प्रतिनिधि का चयन करने की प्रक्रिया के पीछे विचार, व्यवहार व राज्य के लोकतांत्रिक प्रकार्य का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। चुनावी राजनीति जनसाधारण को राजनीति व राजनीति को जनसाधारण के क्षेत्र में लेकर आया। भारत में सत्ता में आकर राज्य के संसाधनों पर आधिपत्य के माध्यम से अपने हितों की पूर्ति करने की पेशबंदी चुनाव व चुनाव के ठीक पहले अपने चरम पर होती है। यह कहा जा सकता है कि राजनीति व समाज के लोकतांत्रिकरण के लिए चुनाव एक एजेंसी बन गया है।

भारतीय लोकतंत्र के अंतर्गत चुनावी राजनीति को एक सिक्के के दो पहलू के रूप में देखा जा सकता है जिसमें इसके एक पहलू के अंतर्गत समाज में हाशिए पर स्थित लोग अपने अधिकारों के बारे में सजग हुए हैं और चुनावों में अपनी माँग रखने के द्वारा उन्हें पूरा करने का प्रयास करते हैं, वहीं दूसरी ओर राजनीतिक दल व नेता अपने सत्ता प्राप्ति के उद्देश्य के लिए निर्वाचक प्रक्रिया व हाशिए पर स्थित लोगों की स्थिति का लाभ उठाते हैं। यह भी कहा जा सकता है कि भारतीय राजनीति ने आधुनिक स्वरूप को तो अपनाया है, परंतु व्यवहार में यह अभी भी पुरातन व्यवस्था को अपनाए हुए हैं। भारतीय लोकतंत्र में आधुनिकता व परंपरागत तत्त्वों का मिश्रण देखा जा सकता है जिसमें जहाँ भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में संसदीय व्यवस्था, चुनाव आयोग, स्वतंत्र न्यायपालिका जैसी आधुनिक लोकतांत्रिक संस्थाओं को अपनाया गया है, वहीं दूसरी तरफ समाज में जातीय-धार्मिक समूह व संगठन राजनीति को प्रभावित करते हैं।

चुनावों के समय जहाँ एक तरफ उच्चतम न्यायालय द्वारा यह निर्णय दिया जाता है कि धर्म, जाति, समुदाय व भाषा के आधार पर वोट माँगना गैर क़ानूनी है, वहीं दूसरी तरफ इन्हीं आधारों पर वोट की माँग की जाती है। भारतीय राजनीति के अंतर्गत संपूर्ण चुनावी राजनीति जाति, धर्म, लिंग, वर्ग व क्षेत्र के आधार पर सिमटती हुई देखी जा सकती है। इन्हीं आधारों पर भावनात्मक अनुभूतियाँ उत्पन्न की जाती हैं और चुनावी सहयोग प्राप्त

किया जाता है। सत्ता प्राप्त करने के लिए जातीय संगठनों का उपयोग किया जाता है। इसकी क़ीमत नागरिकों को चुकानी पड़ती है।

इन परिस्थितियों का कल्याणकारी लाभ इन समूहों के सदस्यों को भी होता है। राजनीतिक दलों द्वारा आर्थिक सुधारों के कार्यान्वयन को इस आधार पर उचित ठहराया जाता है कि वह लोगों के कल्याण पर अधिक ख़र्च करने के लिए सरकार को सक्षम बनाएँगे। जैसा कि जावेद आलम ने अपनी पुस्तक 'हू वांट्स डेमोक्रेसी' में 1996 व 1971 के चुनाव आँकड़ों की तुलना करते हुए यह प्रस्तुत किया है कि लोकतंत्र पर अभिजनों की तुलना में कमज़ोर वर्गों का अधिक विश्वास है ''दलितों, पिछड़ी जातियों, मुसलमानों और स्त्रियों के संघर्ष ने भारतीय लोकतंत्र की प्रकृति को एक ख़ास रूप दिया है'' यह कहा जाता है कि आज लोकतंत्र पतन की ओर बढ़ रहा है, परंतु आलम के अनुसार यह कहा जा सकता है कि ''लोकतंत्र आज अधिक मज़बूत स्थिति में स्थापित है, कमज़ोर वर्गों और उत्पीड़ित जातियों ने इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।''

इस तरह लोकतंत्र ने उन्हें अपने सम्मान, अधिकारों और जायज हकों के लिए लड़ने की गुंजाइश प्रदान की है। ''यह वर्ग लोकतंत्र के पक्ष में खड़े हैं और साथ ही यह वर्ग लोकतंत्र की मज़बूती का स्रोत बन गए है।'' अभिजन वर्ग ने योग्यता, क्षमता, मैरिट को हथियार के रूप में अपनाकर निम्न जातियों का विरोध किया व उत्पीड़ित जातियों ने अपने हितों व अधिकारों के लिए अपने तबके के लोगों का गुटबंदीकरण किया। यहीं से उत्पीड़ित जातियों की राजनीति आरंभ हुई एवं इसे समाज के लिए उचित नहीं बताया गया। परंतु आलम का कहना है कि इससे लोकतंत्र और अधिक मज़बूत हुआ है। उत्पीड़ितों ने अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से अपनी समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया। यही वजह है कि सामाजिक समूहों एवं राजनीतिक दलों की संख्या बढ़ रही है। लोकतंत्र इसी के ऊपर आधारित है।

लोकतांत्रिक संस्थाएँ, मूल्य, पद्धतियाँ सामाजिक स्थिति के प्रभाव से अछूती नहीं रही हैं। सामाजिक स्थितियों के कारण भारत में लोकतांत्रिक पद्धतियों के साथ समझौता किया जाता रहा है। इस संदर्भ में सुप्रीम कोर्ट का हालिया फैसला अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है जिसमें कहा गया है कहा गया कि ''चुनाव एक धर्म निरपेक्ष कार्य है और धर्म, जाति व भाषा के आधार पर वोट नहीं माँगा जा सकता। सुप्रीम कोर्ट में इस संबंध में एक याचिका द्वारा सवाल उठाया गया कि धर्म और जाति के नाम पर वोट माँगना जन-प्रतिनिधित्व क़ानून के तहत ग़लत है कि नहीं। (अनीस, 2017)। लोकतंत्र केवल राजनीतिक व्यवस्था नहीं हैं बल्कि मज़बूत लोकतंत्र के लिए समाज का लोकतांत्रिकरण भी ज़रूरी है।

हालाँकि यह सही है कि ग़रीब, अशिक्षित, जनता लोकतंत्र को बढ़ावा दे रही है और लोकतंत्र का मज़बूत आधार बन गई है, परंतु इनकी कमजोरियों का लाभ प्रतिनिधियों द्वारा

उठाया जाता है और उन्हें लालच देकर वोट के अधिकार का दुरूपयोग किया जाता है। समुदाय, जाति, धर्म, लिंग, वर्ग व क्षेत्र पर आधारित चुनावी राजनीति की यह प्रक्रिया लोकतंत्र के लिए ख़तरा उत्पन्न करती है। भारत में एक प्रभावशाली चुनावी व्यवस्था है, जिसका निरीक्षण एक स्वतंत्र चुनाव आयोग द्वारा होता है जिसने स्वतंत्रता के समय से ही महत्त्वपूर्ण अवसरों पर अपनी विश्वसनीयता व प्रतिरोधक क्षमता को सिद्ध किया है। इसकी भूमिका को अधिक सक्रिय करने की आवश्यकता है। यह भी कहा जा सकता है कि लोकतांत्रिक संस्थाओं की उपस्थिति लोकतांत्रिक पद्धतियाँ होने की गारंटी नहीं देती। लोकतांत्रिक संस्थाओं के संदर्भ में भारत ने काफ़ी अच्छा प्रदर्शन किया है। भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् इन्हें संवैधानिक ढांचे में गढ़ने के द्वारा उन्हें मज़बूती प्रदान की गई। परंतु भारत में लोकतंत्र की मुख्य सीमाएँ लोकतांत्रिक संस्थाओं से संबंधित नहीं हैं, जितना कि यह लोकतांत्रिक व्यवहार से संबंधित हैं ।

यह सही है कि भारत में जाति, धर्म व लिंग के आधार पर लोगों की भागीदारी चुनावी प्रतियोगिता एवं लोकतंत्र की वृद्धि का उदाहरण है, परंतु इसके साथ ही यह कहा जा सकता है कि इनका इस्तेमाल राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए भी किया जाता है। चुनावी राजनीति की यह प्रक्रिया लोकतंत्र के लिए ख़तरा उत्पन्न करती है। लोकतंत्र की मज़बूती के लिए आवश्यक है कि एक स्वस्थ चुनावी राजनीति की ओर बढ़ने का प्रयास किया जाए। इन सबके बावजूद यह कहा जा सकता है कि हालाँकि आरंभ में भारत में ग़रीबी व असमानताओं के कारण लोकतांत्रिक संस्थाओं के बने रहने की क्षमता पर संदेह किया जा रहा था, परंतु समय के साथ-साथ भारत में लोकतंत्र ने अपनी मज़बूत जड़े बनाई हैं। हालाँकि इसमें कमियाँ हैं, जिन्हें अनदेखा नहीं किया जा सकता। इन कमियों पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है ताकि इनके निवारण की दिशा की ओर बढ़ा जा सके।

❑

संदर्भ

1. जावेद, आ. (2004), हू वांट्स डेमॉक्रेसी, हैदराबाद : ओरिएंट लोंगमेन।
2. दुबे, अ. कु. (2002), भारतीय होता लोकतंत्र, अभय कुमार दुबे (सं.) 'लोकतंत्र के सात अध्याय, (पृ. 21-32), नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
3. द्रेज ज्याँ व सेन अ. (2002), डेमोक्रेटिक प्रैक्टिस एंड सोशल इनइक्वालिटी इन इंडिया, जर्नल ऑफ एशियन एंड अफ्रीकन स्टडीज, पृ. 6-37।
4. यादव, यो. (1999), इलेक्ट्रोरल पॉलिटिक्स इन द टाइम ऑफ चेंज : इंडियाज थर्ड इलेक्ट्रोरल सिस्टम, 1989-99, इकनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 34 (35/35), 2393-2399।

डॉ. सुभाष कश्यप

निर्वाचन प्रणाली और राजनीतिक दल

भारतीय संविधान के निर्माताओं ने संसदीय प्रतिनिधिक लोकतंत्र जो देश के लिए सर्वश्रेष्ठ माना और संविधान ने उसे अंगीकार किया। आधुनिक प्रतिनिधिक लोकतंत्र के मायने हैं कि जनता अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा स्वयं अपने ऊपर शासन करे। इस प्रकार लोकतंत्र की सफलता और सार्थकता की नींव और कुंजी है निर्वाचन प्रणाली और राजनीतिक दल व्यवस्था।

भारतीय संविधान की उद्देशिका में कहा गया है कि "हम भारत के लोग इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं। इस शब्दावली का स्पष्ट अर्थ निकलता है कि भारत की राजनीतिक व्यवस्था में संप्रभुता का वास जन-साधारण में है। गणतंत्र एक अर्थ ही है गणकों का अर्थात् गिनती का तंत्र। अल्लामा इकबाल ने कहा था --

जम्बूरियत वह तजै हुकूमत है जिसमें
बंदों को गिना करते हैं, तोला नहीं करते।।

और गिनती के मामले में, भारत में मतदाताओं की संख्या 80 करोड़ से अधिक है। यह राष्ट्रमंडल के सारे देशों के कुल मतदाताओं से अधिक है। सारे यूरोप के राष्ट्रों, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और आस्ट्रेलिया मिल कर भी इतने मतदाताओं का दावा नहीं कर सकते। भारतीय आम चुनाव दुनिया की सबसे विशाल लोकतांत्रिक साधना है और हम 16 बार स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव करने में सक्षम रहे हैं। इसके अलावा, पंचायतों से पार्लियामेंट तक हमारे यहाँ 36 लाख से अधिक निर्वाचित शासक हैं जिनमें लगभग 12 लाख महिलाएँ हैं। विश्वभर में कहीं इतने प्रतिनिधिक शासक नहीं हैं। इस दृष्टि से हम अपने लोकतंत्र पर अवश्य ही गर्व कर सकते हैं।

भारत के लोग लोक सभा और राज्य-विधानसभाओं के लिए प्रतिनिधियों का निर्वाचन करते समय मत डाल कर अपनी प्रभुसत्ता का प्रयोग करते हैं। सक्षम संसदीय लोकतंत्र

स्वस्थ निर्वाचन प्रणाली और स्वच्छ, स्वतंत्र तथा निष्पक्ष निर्वाचनों के ऊपर टिका होता है। संविधान के निर्माताओं की उम्मीद थी कि सार्वभौम वयस्क मताधिकार के द्वारा लोग ऐसे प्रतिनिधियों को निर्वाचित करेंगे जो वास्तव में उनका प्रतिनिधित्व करेंगे, उनकी आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को पूरा करेंगे और उन्हें ऐसी संवेदनशील तथा उत्तरदायी सरकार देंगे जो बिना किसी भेदभाव के सुरक्षा तथा सुशासन सुलभ कर सके।

संविधान ने अनुच्छेद 324 के द्वारा संसद और प्रत्येक राज्य के विधान मंडल के लिए कराए जाने वाले सभी निर्वाचनों के लिए तथा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पदों के निर्वाचनों के लिए निर्वाचक नामावली तैयार कराने का और सभी निर्वाचनों के संचालन का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण एक स्वतंत्र निर्वाचन आयोग में निहित किया है। अनुच्छेद 327 के अनुसार संसद समय-समय पर विधि द्वारा संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचनों से संबंधित या संसक्त सभी विषयों के संबंध में, जिसके अंतर्गत निर्वाचक-नामावली तैयार कराना, निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन और ऐसे सदन या सदनों का सम्यक् गठन सुनिश्चित करने के लिए अन्य सभी आवश्यक विषय हैं, उपबंध कर सकती है। अनुच्छेद 328 ने किसी राज्य के विधानमंडल के लिए निर्वाचनों के संबंध में उस विधान मंडल की शक्ति का निरूपण किया है। निर्वाचन आयोग की शक्तियाँ और क्षेत्राधिकार निर्वाचन कराने तक सीमित है।

पहले साधारण निर्वाचन (1951-52) के समय से ही निर्वाचन सुधारों पर व्यापक चर्चा होती रही है। निर्वाचन आयोग की हर रिपोर्ट में सुधार प्रस्तावों का उल्लेख है और यह क्रमिक मुख्य निर्वाचन आयुक्त ने इस समस्या की ओर ध्यान दिया है। 1990 में नियुक्त सर्वदल दिनेश गोस्वामी समिति की सिफ़ारिशों को भी व्यापक समर्थन मिला था। लोक सभा ने निर्वाचन सुधारों के संबंध में लालकृष्ण आडवाणी के एक प्रस्ताव को सर्व-सम्मति से पास किया था। इंद्रजीत गुप्ता समिति सभी राजनीतिक दलों की सहमति से यह निर्णय चाहती थी कि निर्वाचनों में होने वाला सारा ख़र्च सरकार उठाए। वाजपेयी सरकार ने निर्वाचन सुधारों के कुछ प्रस्ताव निर्वाचन आयोग के पास टिप्पणी के लिए भेजे थे। निर्वाचन आयोग ने उन पर अपनी प्रतिक्रिया जाहिर की थी और अपनी ओर से भी कुछ प्रस्ताव रखे थे।

विधि आयोग ने भी निर्वाचन सुधारों के प्रश्न पर विचार किया था। उसने सात विचार गोष्ठियों का आयोजन किया था। अंतिम विचार गोष्ठी विज्ञान भवन में हुई थी। आयोग ने निर्वाचन सुधारों के संबंध में एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रकाशित किया था।

मार्च, 2008 के अंत में संविधान आयोग की रिपोर्ट प्रकाशित हुई। रिपोर्ट में सबसे

बड़ा अध्याय निर्वाचन और राजनीतिक दलों के सुधारों के बारे में था। इस विषय में आयोग की सिफ़ारिशें सबसे महत्त्वपूर्ण थीं। संविधान आयोग की रिपोर्ट नौकरशाही की दलदल में फँस गई। सरकार ने उस पर अपनी कोई प्रतिक्रिया जाहिर नहीं की।

संभवतः जनमत के बढ़ते दबाव के चलते भारत सरकार के विधि मंत्रालय और निर्वाचन आयोग ने मिल कर एक पृष्ठाधार प्रलेख प्रकाशित किया जिसमें इसी संविधान आयोग की कुछ सिफ़ारिशों को दोहराया गया यद्यपि कुछ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सिफ़ारिशों का उल्लेख नहीं किया गया; उदाहरण के लिए, निर्वाचित होने के लिए डाले गए मतों का पचास प्रतिशत से अधिक मिलना अनिवार्य होना।

व्यवस्थामूलक सुधार : गाँधीजी का मॉडल

सुधारों का एक विकल्प गाँधीजी का मॉडल है जिसके अंतर्गत राजनीति को जनता की सेवा का साधन समझा जाता है, सार्वजनिक जीवन में उच्च नैतिक मानदंडों के पालन पर ज़ोर दिया जाता है, उसे सत्ता ग्रहण करने और धन उपार्जित करने का माध्यम नहीं समझा जाता। गाँधीवादी व्यवस्था में सत्ता का निम्नतम स्तर तक विकेंद्रीकरण होता है। साधारण नागरिक अपने आपको स्वतंत्र समझता है, वह शासन कार्यों में भाग लेता है और राजनीतिक व्यवस्था की इकाई माना जाता है। गाँधीवादी व्यवस्था में शासन की संरचना पिरामिड के रूप में नहीं होती। सत्ता शिखर में केंद्रित होकर थोड़ा-थोड़ा करके नीचे की ओर नहीं प्रवाहित होती है। इसमें संकेंद्रित वृत्तों से युक्त शासन अनेक स्तरों में बँटा होता है। शासन की इकाई गाँव होता है। सत्ता का रुख़ ऊपर से नीचे की ओर नही, नीचे से ऊपर की ओर होता है।

गाँधीजी द्वारा प्रतिपादित सच्चे लोकतंत्र में स्थानीय, राज्य और राष्ट्रीय स्तर के प्रतिनिधि स्थानीय, राज्य और राष्ट्रीय मामलों के लिए उत्तरदायी होते हैं। समूचा शासन पारदर्शी होता है। उत्तरदायित्व की इस भावना से उत्तरदायी राजनीति का संवर्धन होता है। देशभक्त, योग्य तथा समाज-सेवा में संलग्न व्यक्ति राजनीति की ओर आकृष्ट होते हैं।

गाँधीजी ने अपना राजनीतिक संगठन भारतीय परंपराओं पर आधारित किया था। वे निर्वाचनों पर कम-से-कम ख़र्च चाहते थे। गाँधीजी शासन के हर स्तर पर पृथक् निर्वाचित मुख्य अधिशासी और निगरानी रखने वाली परिषदें चाहे थे जो लोगों के अधिकारों की रक्षा कर सकें। गाँधीजी ने एक अत्यधिक लोकतंत्रात्मक और उत्तरदायी शासन व्यवस्था का प्रस्ताव किया। हाल के कुछ वर्षों में उनके इन विचारों की अनेक विद्वानों ने सराहना की है। इन विद्वानों ने भारतीय लोकतंत्र के निम्नतम धरातल पर प्रत्यक्ष निर्वाचनों का समर्थन किया है। उनका कहना है कि संविधान की आधारभूत विशेषताओं में कोई परिवर्तन

किए बिना और संसदीय प्रणाली को जारी रखते हुए निर्वाचन प्रणाली में कुछ सुधार किए जा सकते हैं। वयस्क मताधिकार पर आधारित प्रत्यक्ष निर्वाचन पंचायतों तथा स्थानीय निकायों के लिए ही हो सकते हैं। राज्य विधानमंडल, केंद्रीय संसद तथा राष्ट्रपति परोक्ष रीति से ही निर्वाचित किए जाएँगे। पंचायतें बिना परिषदों को और बिना परिषदें राज्य विधानमंडलों को चुन सकती थीं। राज्य विधानमंडल, जिला परिषदें और पंचायतें केंद्रीय संसद का चुनाव कर सकती थीं और ये चारों संस्थाएँ पंचायतें, जिला पंचायतें, राज्य विधानमंडल और केंद्रीय संसद राष्ट्रपति का चुनाव कर सकती थीं। प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री संसद तथा संबद्ध राज्य विधानमंडलों द्वारा चुने जा सकते थे।

स्थानीय निर्वाचनों में ज़्यादा ख़र्च नहीं होता। राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर होनेवाले परोक्ष निर्वाचनों में राजनीतिक दलों को कम ख़र्च उठाना पड़ेगा। चूँकि राष्ट्रीय और राज्य सरकारें सिर्फ़ ऊँचे स्तर के आधारभूत संगठन तथा समन्वय की ओर ध्यान देंगे, अतः दल की आरंभिक इकाइयों द्वारा समर्थित परोक्ष निर्वाचन सर्वश्रेष्ठ नेतृत्व को उभारने में मदद देगा। गाँधीजी ने स्थानीय निकायों के लिए जिस निर्वाचन प्रणाली का समर्थन किया था उसमें वर्तमान निर्वाचन प्रणाली के बहुत से दोष समाप्त हो जाएँगे। गाँधीजी के मॉडल में स्थानीय सरकारें सारे सामाजिक प्रश्नों को निपटाएँगी। चूँकि स्थानीय सरकारें राज्य और राष्ट्रीय सरकारों को चुनेंगी, अतः राज्य और राष्ट्रीय सरकारें स्थानीय सरकारों के प्रति उत्तरदायी होंगी। इससे ''संस्कृति, शिक्षा और नैतिकता का उत्थान होगा तथा सामाजिक मतभेद धीरे-धीरे दूर हो जाएँगे। इस व्यवस्था के फलस्वरूप सार्वजनिक सेवा की भावना से युक्त लोग नेता बन कर उभरेंगे।''

आज की राजनीतिक संस्कृति और परिस्थितियों में गाँधीजी और उनके विचार संभवतः काल्पनिक और अव्यावहारिक प्रतीत होते हैं। इसलिए, हमें सुधार के अन्य विकल्पों पर विचान करना होगा।

प्रतिनिधित्व की वैधता

लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधि उनका कहाँ तक सही अर्थों में प्रतिनिधित्व करते हैं, आज यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न बन गया है। प्रतिनिधियों का प्रतिनिधिक स्वरूप संदेहास्पद हो गया है। अधिकांश प्रतिनिधि डाले गए मतों के अल्पमत द्वारा चुने जाते हैं। विजयी उम्मीदवार के विपक्ष में पड़ने वाले मतों की संख्या उसके पक्ष में पड़ने वाले मतों की संख्या से अधिक होती है।

निर्वाचन की वर्तमान प्रणाली इस भरोसे के साथ स्वीकार की गई थी कि इससे अधिक संयुक्त भारतीय राष्ट्र का निर्माण होगा, राजनीति वैचारिक आधार पर चलेगी और स्वस्थ द्वि-दल-पद्धति का विकास होगा। हुआ इससे उल्टा। इस निर्वाचन प्रणाली

ने राष्ट्र में विभाजन की दीवारें खड़ी कर दी हैं। समाज, जाति, धर्म, संप्रदाय, भाषा और प्रदेश के आधार पर अनेक खंडों में बँट गया है। वोट बैंक की राजनीति ने अपना पूर्ण वर्चस्व स्थापित कर रखा है।

अगर उम्मीदवार डाले गए मतों के तिहाई से भी कम मत पाकर जीत जाएँ तो उसे मतों के लिए ज़्यादा लोगों से अनुनय-विनय नहीं करना पड़ेगा। हमने राजनीति में जाति और बिरादरी के प्रश्न खड़े कर समाज में दरारें पैदा कर दी हैं और जाति विहीन यथा वर्ग विहीन समाज की स्थापना को असंभव बना दिया है।

वर्तमान व्यवस्था के भीतर विधायकों के प्रतिनिधित्व को सार्थकता प्रदान करने के लिए यह ज़रूरी कर देना चाहिए कि उम्मीदवार निर्वाचन में तभी विजयी माना जाए जब उसे डाले गए मतों के 50 प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त हों। यदि किसी उम्मीदवार को इतने मत प्राप्त न हो सकें, तो सबसे ज़्यादा मत पाने वाले दो उम्मीदवारों के बीच दोबारा मतदान होना चाहिए। दूसरे, मतदान में एक उम्मीदवार को डाले गए मतों के 50 प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त होंगे। इस प्रक्रिया से जो उम्मीदवार जीतेंगे उनके प्रतिनिधिक स्वरूप पर कोई अँगुली नहीं उठा सकेगा।

अनिवार्य मतदान

कुछ विद्वानों तथा चिंतनशील नागरिकों ने सुझाव दिया कि प्रत्येक नागरिक के लिए मत डालना आवश्यक कर देना चाहिए। कई देशों में मतदान अनिवार्य है। पूर्व राष्ट्रपति तथा वरिष्ठ राजनेता श्री आर.के. वेंकटरमण ने इस सुझाव का प्रबल समर्थन किया था। इस प्रस्ताव पर आगे विचार करने की आवश्यकता है।

अनिवार्य मतदान लागू करने में व्यवहारिक और वैधानिक कठिनाइयाँ हो सकती हैं, अतः एक अधिक प्रभावी विकल्प होगा मतदान को नागरिकता के एक मूलभूत कर्त्तव्य और दायित्व के रूप में संविधान के भाग 4(क), अनुच्छेद 51(क) में शामिल करना। इसका एक लाभ यह होगा कि प्रत्येक मतदाता यह समझेगा कि वह किसी उम्मीदवार के ऊपर अनुग्रह नहीं कर रहा है बल्कि देश के नागरिक के रूप में अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहा है, अपना दायित्व निभा रहा है। मतदान करने वालों को प्रमाण-पत्र दिया जा सकता है, जो लोग मतदान करें उन्हें कुछ प्रोत्साहन और सुभीते दिए जा सकते हैं और जो मतदान न करें उनके लिए नागरिकता के कतिपय अधिकारों का प्रयोग कुछ दुर्लभ करने की व्यवस्था की जा सकती है। जैसे, पासपोर्ट, ड्राइविंग लाइसेंस, राशन कार्ड आदि जारी करने के लिए मतदान प्रमाण-पत्र दिखाना अनिवार्य कर दिया जाए।

उम्मीदवारों का चयन

वर्तमान व्यवस्था में निर्वाचन के लिए उम्मीदवार राजनीतिक दलों के द्वारा चुने

जाते हैं और इस चयन में आम आदमियों की भूमिका या भागीदारी नहीं होती। प्राथमिकी (प्राइमरी) के द्वारा या जनसभाओं के द्वारा इसका प्रावधान निर्वाचन आयोग के तत्त्वावधान में किया जाना चाहिए।

धन शक्ति का महत्त्व : निर्वाचनों का ख़र्च विधिकरण की आवश्यकता

निर्वाचनों के दौरान धन की शक्ति, अपराधियों की भूमिका तथा ख़र्च के ग़लत वितरण दायर करने के बारे में काफ़ी वाद-विवाद है। इसके संभाव्य कारण हैं --

- निर्वाचन क्षेत्रों का बड़ा आकार।
- निर्वाचनों में होने वाला भारी ख़र्च।
- आवश्यक धन एकत्रित करने के विधिसम्मत उपायों की कमी।
- निर्वाचनों में काले धन का उपयोग। लोग उम्मीदवार के निर्वाचन में इस आशा से धन लगाते हैं कि उसके विजयी होने पर कई गुना लाभ अर्जित करेंगे।

राजनीतिक क्रिया-कलापों, दलगत संगठन और निर्वाचन अभियानों के लिए भारी धनराशि की ज़रूरत पड़ती है जिसका कोई हिसाब-किताब नहीं होता। भ्रष्टाचार का वातावरण बनाने, काला धन पैदा करने और समानांतर अर्थ-व्यवस्था को बढ़ाने में इसका प्रमुख योगदान है। संसद के एक स्थान के लिए 10 करोड़ या उससे ज़्यादा रुपया ख़र्च होता है। कहते हैं अब तो कभी-कभी टिकट के लिए भी करोड़ों देना पड़ता है। अब प्रश्न उठता है कि वह करोड़ों रुपया कहाँ से आएगा और जो करोड़ों ख़र्च करेगा वह भ्रष्टाचार से कैसे बचेगा।

भारत के अनेक भागों में निर्वाचनों के दौरान मत ख़रीदने, शराब बाँटने, गुंडों को नियोजित करने और सरकारी अधिकारियों को रिश्वत देने में भारी ख़र्च करना पड़ता है। दल अपने आपको असहाय महसूस करते हैं क्योंकि उन्हें चक्रव्यूह से निक़लने का कोई रास्ता नहीं दिखाई देता। इसलिए वे ऐसे उम्मीदवारों को टिकट देते हैं जिनके पास अकूत धन-संपदा हो या उनकी छवि ऐसे माफिया दादा की हो जिसे हराना कठिन हो।

यदि निर्वाचनों के लिए राजनीतिक दलों की आवश्यकता है, तो राजनीतिक दलों का ख़र्च कैसे चले? उनके पास पैसा कहाँ से आएगा? इसके स्रोत हैं --

- व्यापार और उद्योग
- अपराध-जगत्, अपहरणकर्ता, हथियारों और नशीले पदार्थों के सौदागर, डाकू, माफिया गुट।
- नागरिकों और दल के सदस्यों के चंदे।
- सरकारी ठेके।

व्यक्तिगत उम्मीदवार से आशा की जाती है कि वह एकत्रित की गई धनराशि का प्रयोग मतदाता से संपर्क स्थापित करने, उसे शिक्षित करने, विचारधारा की उन्नति

करने, अनिर्णीत मतदाताओं को अपनी ओर मिलाने तथा न्यायसम्मत साधनों द्वारा अपने पक्ष का प्रचार करने में करेगा। वास्तविकता इससे उल्टी है। उम्मीदवार इस धन से उचित-अनुचित उपायों द्वारा अपने विरोधियों की निंदा करते हैं, सत्ता के दलालों की मदद से अपना वोट बैंक बढ़ाते हैं और इसके लिए अपराधी तत्त्वों तक से साठ-गाँठ करते हैं। एक नई प्रवृत्ति यह है कि उम्मीदवार संचित धन में से बहुत-सा पैसा भावी चुनावों के लिएबा कर रख लेते हैं।

राज्य से आशा की जाती है कि वह अपने वित्तीय साधनों द्वारा एक ऐसे वातावरण का निर्माण करेगा जिससे स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्वाचन हो सके। लेकिन वास्तव में राज्य की नीति सत्तारूढ़ दल के उम्मीदवारों को जिताने की होती है। राज्य कुछ क्षेत्रों में नई-नई योजनाएँ लागू करने के अनुकूल प्रभाव पैदा कर सकता है।

व्यापारिक प्रतिष्ठान और समूह निर्वाचनों में पैसा आर्थिक स्वार्थों के वशीभूत होकर लगाते हैं। ये राजनीतिक संकटों से अपना बचाव करने के लिए सरकारी व्यवस्था का उपयोग करते हैं, अपना व्यापार बढ़ाने के अवसर पाते हैं और अपने प्रभाव क्षेत्र की वृद्धि करते हैं। निर्वाचन के बाद सरकार के साथ अपने संबंधों के फलस्वरूप वे अन्य व्यापारिक प्रतिष्ठानों को अपने साथ सहयोग करने के लिए आकर्षित कर लेते हैं तथा अपने संभाव्य प्रतियोगियों को अपने मुक़ाबले में खड़ा नहीं होने देते। अनुकूल राजनीतिक संपर्कों से निवेश खींचने में मदद मिलती है। उद्योगपति राजनीतिक संपर्कों की कला से, जहाँ तक हो सकता है, कार्यपालिका तक न्यायपालिका को अपने अनुकूल ढालने की कोशिश करते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय दाताओं का लक्ष्य अपनी विचारधारा को फैलाना है। यह विचारधारा पूँजीवाद के किसी रूप की हो सकती है या कट्टरवादी आतंकवाद या बाद में किसी रूप की। वे नारी मुक्ति आंदोलन के समर्थक हो सकते हैं। जनसंख्या के किसी विशेष आयु वर्ग के पैरोकार हो सकते हैं। पशुओं के अधिकारों, वातावरण अथवा धार्मिक विश्वासों की रक्षा के लिए प्रयत्नशील हो सकते हैं। अंतर्राष्ट्रीय दाता व्यापारिक नीतियों पर प्रभाव डालते हैं और व्यापार में अपने नागरिकों को लाभ पहुँचाते हैं। कभी-कभी वे राष्ट्र की नीति पर प्रभाव डालते हैं, उसे नया मोड़ देते हैं।

निर्वाचन प्रक्रिया में सुधार करने के लिए कुछ सुझावों पर विचार किया जा सकता है --

(1) निर्वाचन की लागत में कमी की जानी चाहिए। इसके लिए निर्वाचन अभियानों के नियम बदल देना आवश्यक होगा। निर्वाचन अभियान राज्य के ख़र्च पर इलेक्ट्रॉनिक और कंप्यूटर तकनीकों द्वारा किया जाना चाहिए। बड़ी-बड़ी चुनाव रैलियों पर जिनमें दर्शकों की गाड़ियों में बैठा कर सभा स्थल पर पहुँचाया जाए पाबंदी लगा देनी चाहिए।

(2) जहाँ तक संभव हो, राज्य विधान सभाओं तथा संसद के चुनाव एक साथ होने चाहिए।

(3) निर्वाचन अभियान की अवधि घटा देनी चाहिए।

(4) किसी भी व्यक्ति को एक से अधिक निर्वाचन क्षेत्र से लड़ने की अनुमति नहीं देनी चाहिए।

(5) आचरण संहिता को एक विधि का रूप दे देना चाहिए और उसका उल्लंघन होने पर दंड देने का अधिकार निर्वाचन आयोग को होना चाहिए।

(6) निर्वाचनों में दीवार की लिखावटों, काग़ज़ या लकड़ी के बड़े-बड़े पुतलों और झंडों के प्रदर्शन, दल कार्यालयों, सार्वजनिक सभाओं और अन्य विशिष्ट स्थानों को छोड़ कर बाकी स्थानों पर झंडों का फहरना, निर्दिष्ट संख्या से ज़्यादा वाहनों का प्रयोग, चलते हुए वाहनों से चुनाव का प्रचार तथा घोषणाएँ करना, नियत समय से परे सार्वजनिक सभाओं का आयोजन, जिला निर्वाचन अधिकारियों द्वारा निर्दिष्ट स्थानों के अलावा अन्य स्थानों पर विज्ञापनों के प्रदर्शन पर पाबंदी लगनी चाहिए।

(7) जो निर्वाचन आयोग द्वारा ही आयोजित न हों ऐसी सार्वजनिक सभाओं की अनुमति नहीं होनी चाहिए।

(8) एक ऐसे क़ानून का निर्माण होना चाहिए जिसके अंतर्गत उम्मीदवारों, राजनीतिक दलों या एजेंटों द्वारा नारों के चित्रांकन, विज्ञापन और झंडे लगाने पर दंड देने की व्यवस्था हो।

(9) आवश्यक निधियों के विधि-सम्मत स्रोतों को निर्धारित किया जाना चाहिए। व्यक्ति तथा कंपनियाँ अधिक-से-अधिक कितना चंदा दे सकें, इसकी सीमा बढ़ा देनी चाहिए और ऐसे व्यक्तियों तथा कंपनियों को कर में भरपूर छूट मिलनी चाहिए।

(10) निर्वाचनों में उम्मीदवार अधिक-से-अधिक कितना ख़र्च कर सके, इसकी सीमा तय करना ज़रूरी है। प्रायः सभी उम्मीदवार निर्वाचन व्यय के ग़लत आँकड़े प्रस्तुत करते हैं। उम्मीदवार के मित्र और हितैषी उसके निर्वाचन में कितना ख़र्च करते हैं, इसका हिसाब लगाया जाना चाहिए और उसे उम्मीदवार के ख़र्च में शामिल करना उचित है। इस सारे आय-व्यय की रसीदों के आधार पर लेखा-परीक्षा आवश्यक कर देनी चाहिए।

अपराधीकरण

निर्वाचन प्रक्रिया के अपराधीकरण और अपराध के राजनीतिकरण के क्षेत्र में मुख्य समस्याएँ हैं --

- अपराधियों को विधि की प्रक्रियाओं से रक्षा के लिए राजनीतिज्ञों के संरक्षण की आवश्यता होती है। इसलिए अपराधी राजनीतिज्ञों की जेब भरते रहते हैं।

- राजनीतिज्ञों का अपना राजनीतिक गतिविधियों, दलों, निर्वाचनों और स्वयं अपने लिए विपुल यात्रा में बिना हिसाब-किताब वाले धन की आवश्यकता होती है। कर देने वाले लोग राजनीतिज्ञों को अंधाधुंध पैसा नहीं दे सकते। राजनीतिज्ञों की अधिक धन अपराध-जगत् से मिलता है।
- राजनीतिज्ञ धीरे-धीरे अपराध-जगत् के शहंशाहों के ताबेदार बन गए। अपराधी स्वयं भी राजनीति के मैदान में कूद पड़े और चुनावों में खड़े होने लगे। राजनीतिज्ञों ने अपराधियों से आर्थिक सहायता ही नहीं ली, बल्कि उन्होंने अपने विरोधियों का मुक़ाबला करने के लिए बाहुबलियों से भी मदद ली।

सरकार द्वारा नियुक्त लोग समिति ने कठोर शब्दों में कहा था कि अपराधी गुटों तथा राजनीतिज्ञों के बीच गहरा संबंध है। केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने वोहरा समिति को दी गई अपनी रिपोर्ट में विचार व्यक्त किया था, अपराधी संगठन अपने आप मे क़ानून बन गए हैं... छोटे शहरों तथा ग्रामीण क्षेत्रों तक में गुंडों का राज स्थापित हो गया है। भाड़े के हत्यारे इस संगठनों के अभिन्न अंग हैं। देश के विभिन्न भागों में यह प्रमाणित हो गया है कि सरकारी नौकरों तथा राजनीतिज्ञों के बीच साठ-गाँठ है। वर्तमान फ़ौजदारी क़ानून व्यक्तिगत अपराधों से निपटने के लिए था। वह माफिया की कार्यवाहियों से निपटने में असमर्थ है। आर्थिक अपराधों के लिए क़ानून के उपबंध कमज़ोर हैं। माफिया अपने कारनामों से जो संपत्ति एकत्रित करते हैं, उसे जब्त करना क़ानूनी दृष्टि से असंभव है। माफिया तंत्र समानांतर सरकार चला रहा है। उसने राज्य की व्यवस्था को अप्रासंगिक बना दिया है। रिपोर्ट में आगे चलकर कहा गया था -- ''बिहार, हरियाणा, उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में अपराधी गुटों को विभिन्न दलों के स्थानीय नेताओं तथा सरकारी अफसरों का संरक्षण प्राप्त है। कुछ राजनीतिक नेता इन गुटों/सशस्त्र सेनाओं के नेता बन जाते हैं और कुछ समय बाद स्थानीय निकायों, राज्य विधानसभाओं तथा राष्ट्रीय संसद के लिए निर्वाचित हो जाते हैं। इन तत्त्वों का राजनीतिक प्रभाव बढ़ जाता है और वे प्रशासन के सुचारू संचालन में बाधाएँ पैदा करने लगते हैं। जनसाधारण की संपत्ति तथा जीवन की सुरक्षा ख़तरे में पड़ जाती है और लोगों के बीच निराशा की भावना घर कर लेती है।''

निर्वाचनों में अपराधी तत्त्वों का अंत करने के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं ''

(1) जब न्यायालय किसी व्यक्ति के विरुद्ध अपराधों से संबंधित आरोपों को तय कर दे, तब उस व्यक्ति को बरी होने तक निर्वाचनों में खड़े होने की अनुमति नहीं मिलनी चाहिए।

(2) पुलिस ने जिस संभाव्य उम्मीदवार के विरुद्ध आरोप निश्चित किए हैं, वह उम्मीदवार संबद्ध मामले को विशेष निर्वाचकीय न्यायालय में ले जा सकता है। यह न्यायालय

निर्धारित समय में जाँच पूरी करता है और निर्णय सुनाता है। मूलतः इस न्यायालय को यह तय करना पड़ता है कि क्या प्रथम दृष्टया आरोप लगाना ठीक है। यदि हाँ, तो व्यक्ति को निर्वाचन में भाग लेने की अनुमति नहीं मिलनी चाहिए।

(3) यदि निर्वाचित प्रतिनिधि विशिष्ट अपराधों से संबद्ध आरोपों में दोषी सिद्ध हो जाए तो उसे छह महीनों के लिए विधानमंडल से हट जाना चाहिए। यदि इस अवधि में वह बरी न हो सके तो उसे अनर्ह घोषित कर दिया जाना चाहिए।

तथाकथित सभ्य समाज में आजकल जिन निर्वाचन संबंधी सुधारों की बात की जा रही है उनमें दो प्रमुख मुद्दे हैं -- (1) निर्वाचित प्रतिनिधियों के वापस बुलाने का अधिकार (राइट टु रिकॉल); तथा (2) नकारात्मक (नेगेटिव) मतदान अथवा (टाई टू रिजेक्ट) अर्थात् किसी भी उम्मीदवार को मत न देने की घोषणा। हमारी वर्तमान व्यवस्था के चलते यह दोनों सुझाव नितांत अव्यवहारिक और अर्थहीन हैं। जहाँ जीतने वालों का बहुमत मतदाताओं के अल्पमत से जीता हो वहाँ रिकाल का मतलब होगा अधिकांश निर्वाचित सांसदों और विधायकों को निर्वाचन के नतीज़े निक़लते ही वापस बुलाने की प्रक्रिया का प्रारंभ होना। वापस बुलाने की याचिका पर कुछ प्रतिशत निर्वाचकों के हस्ताक्षर ज़रूरी होंगे। उदाहरण के लिए लोक सभा के निर्वाचक मंडलों में प्रायः कई-कई लाख (दस, बीस, तीस लाख) मतदाता होते हैं उनमें से 10 प्रतिशत या 50 प्रतिशत के हस्ताक्षर कराना और फिर उनकी सत्यता की जाँच कराने का काम सरल नहीं होगा और यदि प्रक्रिया सफल होती है तो बेहिसाब संख्या में निर्वाचन कराने होंगे। लोग और प्रशासन पहले ही वर्ष भर कहीं-न-कहीं लगातार चलते रहते निर्वाचन से तंग आ चुके हैं।

एक और बात, अगर एक बड़ी संख्या ऐसे मतदाताओं की है जिन्हें कोई भी प्रत्याशी ठीक नहीं लगता तो वह किसी अच्छे व्यक्ति को खड़ा क्यों नहीं कर सकते। किसी को भी न चुनना लोकतंत्र में विकल्प नहीं हो सकता। विकल्प होगा किसी अच्छे को उम्मीदवार बनाना और चुनना। दार्शनिक प्लेटों की कहना था कि अगर अच्छे लोग राजनीति में भाग लेने के लिए आगे नहीं आते तो उन्हें बुरे लोगों के शामिल होने की क़ीमत चुकानी होगी। राष्ट्र कविवर 'दिनकर' के शब्दों में --

समर शेष है, नहीं पाप की भागी केवल व्याध,
जो तटस्थ है समय लिखेगा उनका भी अपराध।

राजनीतिक दल

दल-पद्धति

निर्वाचन-सुधारों का अन्य कई क्षेत्रों से विशेष कर राजनीतिक दलों से संबंध है। संविधान में राजनीतिक दलों का कहीं उल्लेख नहीं था। इनका संविधान में सबसे पहले

उल्लेख 1985 में अधिनियमित 52वें संवैधानिक संशोधन में किया गया था। फिर भी यह एक तथ्य है कि संविधान के अंतर्गत स्थापित प्रतिनिधिक लोकतंत्रात्मक शासन सुसंगठित राजनीतिक दलों के अस्तित्व पर निर्भर है।

पिछले कुछ दशकों में हमारी अनेक राजनीतिक कठिनाइयों का मूल कारण यह है कि हम राजनीतिक या आर्थिक कार्यक्रम पर आधारित दो या तीन स्वस्थ राष्ट्रीय राजनीतिक दलों का विकास नहीं कर सके हैं। इस समय पंजीकृत दलों की संख्या 1800 से अधिक है। लोकतंत्रात्मक शासन की सफलता के लिए दोनों आवश्यक हैं -- सत्तारूढ़ दल भी और विरोधी दल भी। इसके लिए यह ज़रूरी है कि राजनीतिक दल लोकतंत्र के सिद्धांतों पर आधारित हों तथा लोकतंत्रात्मक रीति से चलें। इस बात की शिकायतें हैं कि हमारे अधिकांश राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र नहीं है।

लोक सभा और राज्य विधानमंडलों के लिए होने वाले निर्वाचनों में से तो नीति के कई प्रश्न होते हैं और न निर्वाचकों के सामने कोई कार्यक्रम ही रखा जाता है। सारा चुनाव व्यक्तियों तथा सत्ता के आधार पर लड़ा जाता है। दल विकास, राष्ट्रीय अभिमान, सुरक्षा तथा पंथ-निरपेक्षता की बात अवश्य करते हैं लेकिन इन प्रश्नों के बारे में उनकी कोई निश्चित धारणा नहीं होती। राजनीतिक दलों का एक ही लक्ष्य होता है। किसी प्रकार सत्ता प्राप्त करना और एक बार सत्ता पा लेने पर उस पर डटे रहना। लोग भी समझ जाते हैं कि राजनीतिज्ञ उनके हितों की अनदेखी कर ज़्यादा-से-ज़्यादा अपने स्वार्थों की पूर्ति में लगे हुए हैं।

जहाँ एक बार निर्वाचन समाप्त हुए, सारी लड़ाई मुख्यमंत्री, मंत्री या अन्य लाभकारी पदों के लिए शुरू हो जाती है। लोगों का राजनीतिज्ञों पर से विश्वास हटता जा रहा है। राजनीतिज्ञों का लक्ष्य जनता की सेवा करना नहीं, अपनी तिजोरियाँ भरना हो गया है। लोकतंत्र में यह सबसे अधिक दुःख की बात होती है कि प्रतिनिधि निर्वाचकों की दृष्टि में गिर जाएँ।

संसदीय लोकतंत्र में विरोधी दल सरकार का ही एक अंग माना जाता है। भारत में विरोधी दल अपनी ज़िम्मेदारी नहीं समझता। जब कोई राजनीतिक दल सत्ता में होता है, तब वह एक ढंग से काम करता है और जब विरोध में होता है, तब दूसरे ढंग से। राजनीतिक दलों को यह याद रखना चाहिए कि यदि वह आज सत्ता में है तो कल विरोध में बैठ सकता है और यदि इस समय विरोध में है, तो कभी सत्ता में भी आ सकता है। सत्ता पक्ष और विरोधी पक्ष दोनों में एक-दूसरे के प्रति आदर और सम्मान की भावना रहनी चाहिए। यह नहीं कि वे एक-दूसरे को अपना और देश का दुश्मन समझें।

वैस्टमिंस्टर मॉडल की सफलता की बुनियादी शर्त द्वि-दल पद्धति है। दोनों दलों की सुनिश्चित विचारधारा और कार्यक्रम होना चाहिए। भारत में हमने ब्रिटिश संसदीय

शासन-प्रणाली को तो अपना लिया है लेकिन इंग्लैंड की तरह दो राजनीतिक दलों का विकास नहीं हो सका है। संसदीय शासन में मुख्य विरोधी दल को वैध विकल्प माना जाता है, उसे स्वीकार किया जाता है और उसका आदर किया जाता है। उसे अछूत समझ कर तिरस्कार की दृष्टि से नहीं देखा जाता। भारत जैसे विशाल देश में प्रादेशिक दलों का भी अपना महत्त्व है। राष्ट्रीय गठबंधनों के भाग बन कर वे भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। समस्या तब आती है जब वह अपने समर्थन के लिए अनैतिक सौदेबाज़ी करने लगें ओर ब्लैक मेल कर उतारू हो जाएँ।

राजनीतिक दलों के लिए क़ानून

संविधान ने नागरिकों को संघ बनाने का मूल अधिकार दिया है। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के परिच्छेद 29-क ने उपबंध किया है कि भारत के नागरिकों के संघों और निकायों को निर्वाचन आयोग के पास राजनीतिक दलों के रूप में पंजीकृत किया जा सकता है। निर्वाचन आयोग निर्वाचन प्रतीक (आरक्षण और आवंटन) आदेश, 1968 के अनुसार राष्ट्रीय या राज्य-स्तरीय राजनीतिक दलों को मान्यता देता है।

आयकर अधिनियम के अंतर्गत राजनीतिक दलों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपना हिसाब-किताब रखें, 20 हज़ार या उससे ज़्यादा रुपयों का चंदा देनेवालों के नाम और पते बताएँ, उनकी लेखा परीक्षा कराएँ तथा हर साल आय-व्यय का विवरण पत्र आयकर कार्यालय में जमा करें। कंपनियाँ अपने लाभ का पाँच प्रतिशत तक राजनीतिक दलों को दे सकती है। लेकिन, राजनीतिक दल इन क़ानूनी उपबंधों की ओर ध्यान नहीं देते। वे वार्षिक विवरण-पत्र कम ही भरते हैं। वे अपनी आय-व्यय के विवरण छिपा कर रखते हैं। आयकर अधिनियम के अधीन किसी दल के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की गई है।

संविधान (52वाँ संविधान) अधिनियम, 1985 ने संविधान की दसवीं अनुसूची जोड़ दी है। इस अनुसूची में दल परिवर्तन के आधार पर राजनीतिक दल के किसी सदस्य को संसद के किसी सदन या राज्य विधानमंडल के किसी सदन की सदस्यता से अनर्ह करने का प्रावधान है। इन अपवादों को छोड़कर आज भी राजनीतिक दलों के निर्माण, पंजीकरण क्रियान्वयन या विनियमन के बारे में अन्य कोई क़ानून नहीं है।

राजनीतिक दलों के सदस्यों और कार्यों का विनियमन करने के लिए व्यापक क़ानून बना कर उन्हें औपचारिक आधार दे दिया जाए। क़ानून में राजनीतिक दलों के पंजीकरण, उन्हें मान्यता देने, उनकी मान्यता छीन लेने, उनके राष्ट्रीय या राज्य-स्तर का होने और उनके द्वारा हिसाब-किताब रखने के बारे में नियम होने चाहिए।

जब तक राष्ट्रीय और राज्य-स्तरों पर राजनीतिक दलों तथा उनके गठबंधनों की

संख्या क़ानून द्वारा विनियमित नहीं होगी तब तक हमारे विधायकों को वास्तविक प्रतिनिधि नहीं माना जा सकता। केवल मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय दलों तथा मतदान पूर्व गठबंधनों की (जिन्होंने डाले गए मतों के कम-से-कम 5 या 10 प्रतिशत मत प्राप्त किए हों) लोक सभा के निर्वाचनों में खड़े होने के लिए समान प्रतीक दिए जाने चाहिए। राज्य स्तरीय दलों को राज्य विधानमंडलों तथा राज्य सभा के निर्वाचनों के लिए समान प्रतीक दिए जाने चाहिए। मतदान पूर्व गठबंधनों को बढ़ावा देने से मत संचित होंगे और संघीय दलों या गठबंधनों के विकास में मदद मिलेगी तथा अधिक स्थिर सरकारों का निर्माण होगा।

राजनीतिक दलों विषयक प्रस्तावित क़ानून में दलों की आर्थिक स्थिति तथा आंतरिक लोकतंत्र जैसे मामलों का भी प्रावधान होना चाहिए।

क़ानून में यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि कोई राजनीतिक दल ऐसे किसी उम्मीदवार को टिकट न दे जिसे न्यायालय ने अपराध के लिए दोषी पाया हो या उसके ऊपर आपराधिक आरोप लगाए हों। यदि कोई दल इस उपबंध का उल्लंघन करे तो संबद्ध उम्मीदवार को अनर्ह घोषित करने के साथ-साथ दल की मान्यता समाप्त कर देनी चाहिए। यदि इस सुझाव को लागू किया जाए तो राजनीति में अपराधियों के बढ़ते हुए प्रभाव पर अंकुश लगेगा।

आज राष्ट्र के और उसके लोकतंत्र के भविष्य को सुरिक्षत रखने के लिए, व्यापक प्रशासनिक, संसदीय तथा न्यायिक सुधार करने होंगे। सभी आवश्यक और महत्त्वपूर्ण हैं। किंतु प्राथमिकता दी जानी चाहिए। निर्वाचन सुधारों को क्योंकि निर्वाचन प्रणाली और राजनीतिक दल व्यवस्था हमारी अनेक समस्याओं और राजनीति में आई विभिन्न विसंगतियों की जड़ में है। जैसे; कालाधन, भ्रष्टाचार, जातीयता, राजनीति का अपराधीकरण आदि।

आवश्यकता है निर्वाचन प्रणाली और राजनीतिक दल व्यवस्था में सुधारों के लिए एक व्यापक जन-अभियान की, जन-आंदोलन की। जन-जन को जगना होगा, लोकतंत्र में भागीदार बनाना होगा, अपने दायित्वों को पहचानना होगा।

❑

सन्तोष खन्ना

भारत का चुनाव आयोग

भारत जैसे विशाल लोकतंत्र में चुनावों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। भारत में 1950 में संविधान के लागू होने के बाद से अब तक संसद और राज्य विधान मंडलों के अनेक बार सफल चुनाव हो चुके हैं। यही नहीं, हर पाँच वर्ष बाद राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का भी चुनाव करना होता है। 1992 के 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन से देश में लोक तंत्र का तीसरा चरण लागू कर दिया गया था अर्थात् देश में पंचायतों का गठन भी अनिवार्य कर दिया गया था। पंचायत व्यवस्था का अर्थ है कि गाँव स्तर से लेकर जिला स्तर पर पंचायतों के लिए चुनाव करवाना। यह चुनाव भी हर पाँच वर्ष के बाद कराए जाने का संविधान में प्रावधान कर दिया गया है। इस सबके होते हुए देश में हर समय कहीं-न-कहीं, कोई-न-कोई चुनाव चल रहा होता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि आरंभ से संसद और विधान सभाओं के चुनाव इकट्ठे करवाए जाते थे। बाद में परिस्थितियाँ ऐसी बनीं कि संसद और विधान सभाओं के चुनाव अलग-अलग कराए जाने लगे। सभी विधान सभाओं के चुनाव भी एक साथ नहीं हो पाते प्रायः अलग-अलग समय पर होते हैं। अतः भारत में चुनाव प्रायः सतत चलते रहने की प्रक्रिया है। हर चुनाव में मतदाताओं की संख्या में काफ़ी वृद्धि होती रहती है। वर्ष 2014 में लोक सभा के चुनाव कराए गए थे जिसमें 84 करोड़ से भी अधिक मतदाता थे। स्पष्ट है कि इतने विशाल पैमाने पर इतनी अधिक मतदाता संख्या के साथ चुनाव आयोजन किसी एक विशाल महायज्ञ अथवा विशाल कुंभ से कम नहीं होता। प्रश्न उठता है कि इतने महान् कार्य का दायित्व किस पर है? भारत के संविधान ने यह दायित्व भारत के चुनाव आयोग के ज़िम्मे डाला है।

भारत का निर्वाचन आयोग एक संवैधानिक निकाय है। संविधान के अनुच्छेद 324 में यह प्रावधान किया गया है कि संसद के दोनों सदनों तथा राज्य के विधान मंडलों

के चुनाव निर्वचन आयोग कराएगा। यह सभी के लिए निर्वाचन नामावली भी तैयार करेगा। साथ ही राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के चुनाव संबंधी सभी प्रबंध करेगा। अतः निर्वाचन आयोग ही भारत में सभी प्रकार के चुनावों का आयोजन करता है और यहसुनिश्चित करता है कि हर चुनाव निष्पक्ष और उचित ढंग से कराए जाएँ। सभी चुनाव संविधान में दिए गए प्रावधान और संसद द्वारा बनाए गए क़ानून के अनुसार कराए जाते हैं। चुनाव कराने के लिए महत्त्वपूर्ण क़ानून है -- लोक-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 जिसके अंतर्गत निर्वाचन नामावली तैयार की जाती है। एक दूसरा अधिनियम है -- लोक-जनप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951। इस क़ानून के अंतर्गत चुनाव कराने के सभी पक्षों पर ध्यान दिया जाता है, और चुनाव के बाद पैदा होने वाले विवादों के निपटारे की व्यवस्था भी की गई है।

संविधान के अनुच्छेद 324 से 329 के अंतर्गत भारत के निर्वाचन आयोग संबंधी जो प्रावधान हैं वह इस प्रकार हैं --

1. चुनाव आयोग; संसद के दोनों सदन।
2. राज्य विधान मंडलों के दोनों सदन।
3. राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पदों के चुनाव कराएगा और इन चुनावों का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण करेगा।
4. चुनाव आयोग का प्रमुख होगा -- मुख्य चुनाव आयुक्त; इसके साथ अन्य निर्वाचन आयुक्त भी होंगे। मुख्य चुनाव आयुक्त तथा चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाएगी।

राष्ट्रपति को यह भी अधिकार दिया गया है कि देश में चुनाव करवाने के लिए वह चुनाव आयोग के परामर्श से आवश्यकतानुसार प्रादेशिक आयुक्त की भी नियुक्ति कर सकेगा।

अनुच्छेद 324 में मुख्य चुनाव आयुक्त को सामान्य तरीक़े से नहीं हटाया जा सकेगा। उसके हटाने की विधि भी वही है जिस विधि से उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को हटाया जाता है। उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को हटाने का प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 124(4) में किया गया है इसमें कहा गया है कि --

अनुच्छेद 124(4) : उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को उसके पद से तब तक नहीं हटाया जाएगा। जब तक साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर ऐसे हटाए जाने के लिए संसद के प्रत्येक सदन द्वारा अपनी कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उपस्थित एवं मत देने वाले सदस्यों के कम-से-कम दो तिहाई बहुमत द्वारा समर्थित समावेदन, राष्ट्रपति के समक्ष उसी सत्र में रखे जाने पर राष्ट्रपति ने आदेश

नहीं दिया हो। किसी न्यायाधीश के विरुद्ध कोई दोष सिद्ध होता है या नहीं, इसकी जाँच सदन की इस उद्देश्य से बनाई गई समिति करती है। न्यायाधीश को हटाए जाने की इस प्रक्रिया को महाभियोग (Impeachment) कहते हैं। वास्तव में यह प्रक्रिया अत्यंत जटिल एवं विस्तृत है। संसद के इतिहास में दो बार महाभियोग की प्रक्रिया चलाई गई किंतु उसका परिणाम कुछ नहीं हुआ। जहाँ तक भारत के मुख्य चुनाव आयुक्त का संबंध है, यह अत्यंत संतोष का विषय है कि इस प्रकार किसी मुख्य चुनाव आयुक्त के विरुद्ध महाभियोग चलाने का कभी अवसर नहीं आया। किंतु संविधान में यह प्रावधान तो है कि किसी मुख्य चुनाव आयुक्त को संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार उसके विरुद्ध महाभियोग चला कर ही हटाया जा सकता है। यदि कभी किसी चुनाव आयुक्त अथवा क्षेत्रीय चुनाव आयुक्त को हटाना हो तो उसे मुख्य चुनाव आयुक्त की सिफ़ारिश के आधार पर हटाया जा सकता है।

चुनाव आयोग निर्वाचक नामावली तैयार करता है। यह नामावली तैयार करते समय चुनाव आयोग किसी व्यक्ति को उसके धर्म, मूल वंश, जाति अथवा लिंग के आधार पर उसे नामावली में शामिल किए जाने के लिए अपात्र नहीं ठहरा सकेगा। हर व्यक्ति जो 18 वर्ष से अधिक आयु का है उसे लोक सभा और विधान राज्य सभा में मतदान करने का अधिकार है और उसका नाम रजिस्टर किया जाएगा। किसी व्यक्ति का अनिवासी होने पर, चित्त विकृति, अपराध या भ्रष्ट अथवा अवैध आचरण के कारण उसका नाम मतदान के लिए रजिस्टर नहीं किया जाएगा।

भारत में चुनाव आयोग की स्थापना 1950 में की गई थी। आरंभ में उसका एक मुख्य चुनाव आयुक्त होता था किंतु वर्ष 1989 में पहली बार उसमें दो और चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति कर इसे तीन-सदस्यीय निकाय बना दिया गया। इनकी नियुक्ति 16 अक्तूबर, 1989 में की गई थी। बाद में निर्वाचन आयुक्त संशोधन अधिनियम, 1989 पारित कर इस व्यवस्था को स्थायी बना दिया गया। मुख्य चुनाव आयुक्त और चुनाव आयुक्त सामान्यतया प्रशासनिक सेवा आदि से आई.ए.एस. अधिकारी होते हैं और इन्हें उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के समान वेतन और भत्ते दिए जाते हैं। मुख्य चुनाव आयुक्त को महाभियोग की प्रक्रिया से ही हटाया जा सकता है। जैसा कि पहले बताया गया कि सौभाग्य से भारत में मुख्य चुनाव आयक्तों के विरुद्ध महाभियोग चलाने की कभी स्थिति नहीं बनी। हाँ, वर्ष 2009 में लोक सभा चुनावों से पहले तत्कालीन चुनाव आयुक्त महामहिम श्रीमती प्रतिभा पाटिल को सिफ़ारिश की गई थी कि वह उस समय के चुनाव आयुक्त नवीन चावला को हटा दें क्योंकि वह एक रजनीतिक दल विशेष के पक्षधर माने गए थे किंतु राष्ट्रपति ने उनकी राय नहीं मानी क्योंकि उनकी

राय में मुख्य चुनाव आयुक्त की सिफ़ारिश से वह बाध्य नहीं थे। बाद में श्री नवीन चावला मुख्य चुनाव आयुक्त बने और उन्होंने लोक सभा के चुनाव कराए।

यद्यपि भारत का चुनाव आयोग एक स्वायत संवैधानिक संस्था है, जिसे संसद के दोनों सदनों, राज्यों के विधान मंडलों, देश के राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के निष्पक्ष चुनाव कराने का अधिकार है परंतु इन सभी विषयों के संबंध में यदि कभी कोई क़ानून बनाने की आवश्यकता पड़ती है तो वह अधिकार संसद के पास है। आयोग के निर्णयों को उच्च न्यायाल और उच्चतम न्यायालय में उचित याचिका द्वारा ही चुनौती दी जा सकती है। लंबे समय से चली आरही परंपरा और न्याय निर्णयों के अनुसार, यदि एक बार चुनाव प्रक्रिया आरंभ हो जाती है तो न्यायपालिका मतदान के वास्तविक संचालन में हस्तक्षेप नहीं करती है। एक बार मतदान समाप्त हो जाने के बाद एवं परिणाम आ जाने के बाद आयोग किसी परिणाम का पुनरीक्षण स्वयं नहीं कर सकता है। इसका चुनाव याचिका की प्रक्रिया के माध्यम से किया जा सकता है जो उच्च न्यायालय में फाइल की जा सकती है। राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति पदों के चुनाव के संबंध में ऐसी याचिकाएँ केवल उच्चतम न्यायालय में प्रस्तुत की जा सकती हैं।

चुनावों के दौरान चुनाव आयोग राजनीतिक दलों और चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों के लिए आदर्श आचार संहिता जारी करता है जिसके अंतर्गत नियमों का पालन करना, ज़रूरी होता है। भारत के चुनाव आयोग ने वर्ष 1971 में पाँचवीं लोक सभा के चुनावों के समय आदर्श आचार संहिता जारी की थी। इसमें समय-समय पर संशोधन भी किया जाता है। हर चुनाव में सरकारी मशीनरी के दुरुपयोग तथा अन्य बातों के लिए शिकायतें मिलती रहती हैं और चुनाव आयोग उसकी सुनवाई कर उन पर अपना फैसला देता है। किंतु चुनाव आयोग के पास इस आचार संहिता को मनवाने के लिए कोई क़ानूनी शक्ति नहीं है। आदर्श चुनाव संहिता चुनावों की तिथि की घोषणा से लेकर परिणामों की घोषणा और सफल उम्मीदवार की सूची राज्य या केंद्र सरकार के कार्यकारी प्रमुख को सौंपने तक लागू रहती है।

चुनाव की प्रक्रिया के बारे में भारत के चुनाव आयोग को लोक प्रतिनिधित्व अधि ानियम, 1950 और लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के अंतर्गत दिए गए प्रावध ानों के अनुसार कार्य करना होता है।

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 के अंतर्गत मतदाता की अर्हता, मतदान निर्वाचन क्षेत्रों का सीमांकन तथा संसद और राज्य विधान मंडलों में सीटों के आवंटन के संबंध ा में विस्तृत प्रावधान किए गए हैं।

लोक प्रतिनिधत्व अधिनियम, 1951 पहले आम चुनावों से पहले बनाया गया था

इसमें भारत में चुनाव कैसे कराए जाएँगे, इसके बारे में प्रावधान किए गए है। इसके अंतर्गत संसद के दोनों सदनों तथा राज्य की विधान सभाओं और विधान परिषद्रों के सदस्यों के बारे में अर्हताओं और अनर्हताओं का प्रावधान है। इसके अलावा, चुनाव कराए जाने के लिए इसमें अधिकारियों का भी प्रावधान किया गया है। इसमें चुनाव अपराध ा, विवाद, उप-चुनावों तथा राजनतिक दलों के पंजीकरण के बारे में भी प्रावधान किए गए हैं।

निर्वाचन क्षेत्र परिसीमन अधिनियम के अंतर्गत लोक सभा तथा विधान सभा निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन करना होता है। यह कार्य भारत के परिसीमन आयोग द्वारा किया जाता है। वर्तमान में लोक सभा और राज्य विधान सभाओं के निर्वाचन क्षेत्र 2001 की जनगणना के आधार पर बनाए गए हैं। भारत के संविधान के अनुच्छेद 82 में निर्वाचन क्षेत्रों के पुनः परिसीमन पर 2026 तक रोक लगा दी गई थी। यह वर्ष 2001 से चल रही है और इसे इस आधार पर लगाया गया था कि जनसंख्या बढ़ने से सीटों की संख्या में वृद्धि होगी और इससे एक यह संदेश जाता है कि जनसंख्या वृद्धि एक लाभकारी कारक है जबकि भारत में बढ़ती जनसंख्या देश के संसाधनों पर भारी पड़ रही है, देश का विकास तो हो रहा है किंतु जनसंख्या उससे भी तेज़ी से बढ़ रही है जिससे उस विकास अधिक नज़र नहीं आता। वैसे 2026 तक आते-आते जनसंख्या में और भी अधिक वृद्धि हो जाएगी। हो सकता है कि निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन की प्रक्रिया को वर्ष 2026 के बाद भी रोकना पड़े और इसके लिए वर्ष 2036 निध ार्रित किया जाए।

❑

डॉ. नीलिमा सिंह

भारत में चुनाव सुधार : चिंतन के कुछ बिंदु

भारत में 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्रता के साथ ही लोकतंत्रीय शासन का सपना देखा गया और 26 जनवरी, 1950 को नवनिर्मित भारतीय संविधान के लागू होते ही लोकतंत्र के सपने को ठोस आकार प्राप्त हो गया। भारत में संसदीय लोकतंत्र को अपनाया गया है। लोकतंत्र वह शासन व्यवस्था है जो सर्वाधिक लोकप्रिय उक्ति 'जनता का, जनता के लिए और जनता द्वारा शासन' से ही स्पष्ट हो जाती है। लोकतंत्र के दो प्रकार हैं -- प्रत्यक्ष लोकतंत्र और अप्रत्यक्ष लोकतंत्र। प्रत्यक्ष लोकतंत्र में जनता स्वयं विधि निर्माण आदि कार्यों में भाग लेती है, परंतु प्रत्यक्ष लोकतंत्र के उदाहरण स्विट्जरलैंड के कुछ कैंटनों को छोड़, अन्यत्र शायद ही कहीं प्रभावी हों। विशाल राज्यों के दौर में अप्रत्यक्ष लोकतंत्र ही प्रभावी है और इस प्रकार की व्यवस्था में जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि ही विधि निर्माण एवं शासन कार्यों में भाग लेते हैं। अतः लोकतंत्र में निर्वाचन का अत्यंत महत्त्व है। सही ही कहा गया है कि 'लोकतंत्र एक वृक्ष है और स्वतंत्रता उसकी छाया। निर्वाचन इस वृक्ष को सींचने के लिए जल के समान है और जिस प्रकार एक निश्चित अंतराल पर निश्चित मात्रा में जल डालने से कोई वृक्ष निरंतर पल्लवित पुष्पित रहता है, उसी प्रकार एक निश्चित अंतराल पर निश्चित विधि द्वारा निर्वाचन होने से लोकतंत्र उत्तरोत्तर अधिक परिपक्व होता जाता है।'[1]

भारतीय लोकतंत्र की निर्वाचन प्रक्रिया में अनेक ऐसे बिंदु हैं जो चिंतनीय हैं -- चुनाव में धन-बल एवं बाहुबल का प्रयोग, राजनीति का अपराधीकरण और अपराधियों का राजनीतिकरण, सरकारी तंत्र का दुरुपयोग, निर्दलीय उम्मीदवारों की बढ़ती संख्या, जातिवाद, सम्प्रदायवाद और राजनीति में नैतिक मूल्यों का ह्रास।

भारत में चुनावों की निष्पक्षता को बनाए रखते के लिए केंद्र सरकार, निर्वाचन आयोग तथा संसद द्वारा समय-समय पर प्रयास किए जाते रहे हैं, संविधान के भाग

15 के अनुच्छेद 324 से 329 तक में चुनाव से संबंधित कई प्रावधान किए गए हैं। भारतीय दंड संहिता की धारा 171(क) से 171(ख) में अपने प्रभावों का दुरुपयोग, चुनाव की निष्पक्षता पर प्रभाव डालने वाले कार्यों, चुनाव व्यय में हेराफेरी करने को दंडनीय अपराध घोषित किया गया है। इसके अतिरिक्त, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 तथा लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में भी चुनाव संबंधी नियमों का उल्लेख किया गया है। 1996 में लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम में कतिपय संशोधन भी किया गया है। इसके अतिरिक्त, केंद्र सरकार एवं चुनाव आयोग द्वारा समय-समय पर समितियों का गठन कर चुनाव सुधार पर संस्तुतियाँ भी प्राप्त की गई हैं। इन समितियों में तारकुंडे समिति, दिनेश गोस्वामी समिति, के. संस्थानम समिति का उल्लेख किया जा सकता है।[2]

भारत में चुनाव सुधार क्रमिक रूप से होते रहे हैं। 61वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1988 द्वारा मतदान आयु 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दी गई, राज्य सभा एवं विधान परिषद् की सदस्यता हेतु प्रस्तावकों की संख्या में वृद्धि, इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन का प्रयोग, दो से अधिक निर्वाचन क्षेत्रों में निर्वाचन की मनाही, निर्वाचन के 48 घंटे पूर्व से शराब बिक्री पर रोक, उपचुनाव की छह माह के अंदर व्यवस्था, प्रचार की अवधि 14 दिन, एक्जिट पोल पर प्रतिबंध, चुनाव ख़र्च का सीमांकन, पोस्ट द्वारा मतदान, विदेशों में रह रहे भारतीय नागरिकों को मत देने का अधिकार और मतदान जागरूकता हेतु वर्ष 2011 से 25 जनवरी को राष्ट्रीय मतदाता दिवस मनाए जाने के रूप में अनेक प्रयास किए गए हैं।

उपर्युक्त अनेक चुनाव सुधार प्रयासों के पश्चात् अभी भी बहुत से ऐसे बिंदु हैं जिन पर विचार किया जाना आवश्यक है, सर्वप्रथम हम चुनाव प्रक्रिया की रीढ़ राजनीतिक दलों की बात करते हैं। सितंबर 2016 में भारत में रजिस्टर्ड राजनीतिक दलों की संख्या 1761 थी जिसमें सात राष्ट्रीय राजनीतिक दल थे, 50 क्षेत्रीय दल (5 मई, 2017)। ये राजनीतिक दल अपने घोषणा-पत्र व कार्यों के लिए जवाबदेही नहीं हैं। केंद्रीय सूचना आयोग ने 2013 में स्पष्ट आदेश जारी किया था कि राजनीतिक दल के लिए सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत सूचना प्रदान करना ज़रूरी है लेकिन तमाम राजनीतिक दल इस आदेश के ख़िलाफ़ लामबंद हो गए। किसी भी लोकतंत्र के लिए इससे बड़ी विडंबना और क्या हो सकती है कि उसके राजनीतिक दल जो सरकार बनाने के लिए हर-जोड़ करते हैं पर जनता के प्रति जवाबदेह होने से बचना चाहते हैं। उन्हें जनता के प्रति जवाबदेह होना होगा।[3] इस संबंध में उच्चतम न्यायालय ने राष्ट्रीय दलों को सूचना का अधिकार क़ानून के अंतर्गत लाने के लिए उनका पक्ष जानने के लिए

जारी किया है। राजनीति को पारदर्शी बनाने के सूचना आयोग के असफल प्रयास को उच्चतम न्यायालय कितना सफल बनाएगा यह तो आने वाले दिनों में ही ज्ञात होगा।

महिलाओं को अधिक प्रतिनिधित्व देना

चुनाव सुधार की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण और अपेक्षित सुधार है महिलाओं की निर्वाचन सहभागिता में बढ़ोत्तरी। महिला उम्मीदवारों की न केवल संख्या कम है वरन् राजनीति दलों के पदानुक्रम में भी उन्हें कम स्थान प्राप्त हैं। 2014 लोक सभा निर्वाचन में महिलाओं को अब तक के सर्वाधिक 61 स्थान प्राप्त हुए हैं जो कुल सदस्य संख्या का 11.2 प्रतिशत ही है। लगभग दो दशकों से लंबित पड़े 33 प्रतिशत महिला आरक्षण विधेयक को राजनीतिक दलों के स्वार्थ ने क़ानूनी रूप प्राप्त होने में रोक लगा रखी है। महिला आरक्षण विधेयक पारित होने के साथ ही साथ क़ानून द्वारा न्यूनतम संख्या निर्धारित कर राजनीतिक दलों को महिला उम्मीदवार को टिकट देना अनिवार्य कर देना चाहिए।

भारत में राजनीति में अपराधियों की संख्या बढ़ी है और 2014 के लोक सभा निर्वाचन में निर्वाचित सदस्यों में 186 सदस्यों के विरुद्ध गंभीर आपराधिक मामले दर्ज़ हैं जबकि वर्ष 2009 में यह संख्या 158 थी। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो अपराध के आरोपी सदस्यों की संख्या में वृद्धि हुई है। विशेष ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि 186 में से 112 सदस्यों के विरुद्ध गंभीर अपराध जैसे -- हत्या, हत्या का प्रयास, सांप्रदायिक असमरसता, अपहरण और महिलाओं के विरुद्ध अपराध सम्मिलित हैं। इन सदस्यों में सभी प्रमुख राजनीतिक दलों भाजपा, कांग्रेस, अन्नाद्रमुक, शिवसेना के सदस्य सम्मिलित हैं।[4] निर्वाचन में ऐसे उम्मीदवारों पर रोक लगाने के लिए आवश्यक है कि ऐसे मामलों में फास्ट ट्रैक कोर्ट का गठन कर निर्णय किया जाए, जिससे मामले लंबित होने की आड़ में ऐसे राजनीतिज्ञ जनप्रतिनिधि बन अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न कर सकें।

फरवरी-मार्च 2017 में पाँच राज्यों उत्तर प्रदेश, मणिपुर, गोवा, उत्तराखंड एवं पंजाब में विधान सभा निर्वाचन कई चरणों में संपन्न हुए। इसमें से उत्तर प्रदेश में निर्वाचन सात चरणों में संपन्न हुए जिसमें 2 माह की लम्बी अवधि लग गई। छोटे राज्यों में कम समय में चुनाव प्रक्रिया पूरी कर ली गई परंतु चुनाव घोषणा के साथ आचार संहिता लागू हो गई जिससे सरकार द्वारा नीतिगत निर्णयों पर प्रतिबंध लग जाता है। अतः आज की सूचना प्रौद्योगिकी की उन्नत तकनीक के दौर में आवश्यक है कि निर्वाचन प्रक्रिया तीन चरणों से अधिक नहीं होनी चाहिए क्योंकि लंबी चुनाव अवधि से न केवल नेता, कार्यकर्त्ता बल्कि मतदाता भी थक जाता है और मतदाता की अरुचि मतदान प्रतिशत

को प्रभावित करती है।[5]

निर्वाचन सुधार के लिए एक अन्य महत्त्वपूर्ण सुझाव जो स्वयं प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी द्वारा समर्थित है कि लोक सभा एवं विधान सभा निर्वाचन एक साथ हों। यह इसलिए भी कि प्रत्येक वर्ष भारत में निर्वाचन होता है और यदि 2021 तक के कैलेंडर को देखें तो पता चलता है कि हर 6 महीने में दो से अधिक राज्यों के चुनाव तय हैं। परंतु मौजूदा राजनीतिक व्यवस्था में ऐसा करना व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि विभिन्न राज्यों की विधान सभाओं के कार्यकाल में अंतर आ चुका है। दूसरा भारत में संसदीय प्रजातंत्र है अर्थात् कार्यपालिका का कार्यकाल व्यवस्थापिका के विश्वास मत पर निर्भर करता है और कार्यपालिका विश्वास मत प्राप्त न होने की आशंका में विधान सभा भंग कर सकती है अतः संभव है कि कहीं-कहीं विधान सभा अपना कार्यकाल पूरा ही न कर पाए और एक साथ निर्वाचन होने की स्थिति में नवीन विधान सभा गठन को लंबा इंतज़ार करना पड़ेगा।

भारतीय जनता पार्टी सांसद श्री वरुण गाँधी ने सांसदों एवं विधायकों के कार्य से संतुष्ट न होने पर उन्हें वापस बुलाने के अधिकार का समर्थन करते हुए जनप्रतिनिधि अधिनियम, 1951 में संशोधन हेतु जन प्रतिनिधि (संशोधन) विधेयक, 2016 प्रस्तुत किया था। वरुण गाँधी का मानना है कि स्वतंत्र एवं निष्पक्ष निर्वाचन नागरिक का अधिकार है और यदि उनके निर्वाचित प्रतिनिधि उनकी अपेक्षाओं पर खरे नहीं उतर रहें हो तो जनता को उन्हें हटाने का अधिकार होना चाहिए। इस विधेयक के अनुसार स्पीकर के समक्ष कोई भी मतदाता अपील रूप में प्रस्ताव रख सकता है, जिस पर उस निर्वाचन क्षेत्र के कुल मतदाता के 1/4 सदस्यों के हस्ताक्षर होने चाहिए। उसकी वैधता परीक्षण के पश्चात् स्पीकर उसे निर्वाचन आयोग को अग्रसारित कर देगा और हस्ताक्षरों की पुष्टि के पश्चात् निर्वाचन आयोग संबंधित निर्वाचन क्षेत्र में 10 जगहों पर मतदान की तिथि निर्धारित करेगा और यदि 3/4 मत वापस बुलाने के प्रस्ताव के पक्ष में पड़ गये तो उस सदस्य को वापस बुला लिया जाएगा।[6]

जनप्रतिनिधियों को उनके दायित्व निवर्हन हेतु 'राइट टू रिकाल' अच्छा विकल्प है परंतु भारत की वर्तमान परिस्थितियों में पूर्णतया व्यावहारिक नहीं है। भविष्य में जब इंटरनेट वोटिंग प्रारंभ हो, तब इसकी सफलता की संभावना अधिक प्रतीत होती है। दूसरा बिना न्यायिक संपरीक्षण के यह प्रक्रिया पूर्णतया अपनाई नहीं जा सकती और न्यायालयों के अधिक कार्य बोझ के चलते उस पर शीघ्र निर्णय होना संभव नहीं है। अतः पूर्णतया जाँच-परख के पश्चात् ही इसे भविष्य में लागू किया जा सकता है।

उच्चतम न्यायालय ने ऐतिहासिक महत्त्व के अपने एक फैसले में कहा कि यदि

कोई उम्मीदवार नामांकन पत्र में कोई ग़लत जानकारी देता है तो उसका चुनाव रद्द हो जाएगा। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री ए.आर. दवे तथा एल. नागेश्वर राव की खंडपीठ ने मणिपुर कांग्रेस के एम.एल.ए. मैरामबम पृथ्वीराज के चुनाव को इस आधार पर रद्द कर दिया क्योंकि उसने चुनाव के समय भरे गए अपने नामांकन पत्र में लिखा था कि वह एम.बी.ए. पास हैं जबकि उनके पास ऐसी कोई डिग्री नहीं थी। हालाँकि श्री पृथ्वीराज ने उच्चतम न्यायालय को बताया कि ऐसी ग़लत सूचना उनके वकील ने दी थी परंतु न्यायालय ने उसके इस तर्क को नहीं माना और उसका चुनाव रद्द कर दिया। उच्चतम न्यायालय ने कहा कि मतदाताओं को उम्मीदवारों के बारे में सूचनाएँ पाने का मौलिक अधिकार है और वह सूचनाएँ सार्वजनिक रूप से अंतर्जाल पर उपलब्ध होनी चाहिए ताकि मतदाता जान सकें कि उम्मीदवार का आपराधिक रिकार्ड क्या है, उसकी शैक्षिक अर्हताएँ क्या हैं अथवा संपत्ति क्या है, ताकि उसे मतदान करने में सुविधा हो सके।[7] यहाँ उल्लेखनीय है कि दिल्ली सरकार में केंद्रीय मंत्री एवं आम आदमी पार्टी विधायक नरेंद्र सिंह तोमर की एल.एल.बी. की शैक्षिक डिग्री फ़र्जी पाई गई और उन्हें जेल जाना पड़ा। श्रीमती स्मृति ईरानी की डिग्री पर जाँच व मुकदमा चल रहा है। ऐसे में आवश्यकता है कि जनप्रतिनिधियों के विरुद्ध गंभीर आरोपों की जाँच व मुकदमा शीघ्रता से निस्तारित किए जाएँ ताकि ग़लत व्यक्ति अनुचित लाभ प्राप्त न कर पाए।

मतदाता अयोग्य उम्मीदवार को मत देने के लिए बाध्य न हो, इसलिए 23 सितंबर 2013 को पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज (पीयू सील) की याचिका पर सुनवाई करते हुए उच्चतम न्यायालय ने नौ वर्ष से लंबित याचिका पर केंद्रीय निर्वाचन आयोग को यह निर्देश दिया था कि वह इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन पर 'नोटा' (None of the Above) अर्थात् 'इनमें से कोई नहीं' के बटन का प्रावधान करे जिससे वोट की गोपनीयता बनाई रखी जा सके। चुनाव आयोग ने उच्चतम न्यायालय के 'नोटा' अधिकार को लेकर 27 सितंबर, 2013 के निर्णय पर जन-प्रतिनिधित्व क़ानून की कुछ धाराओं का हवाला देते हुए स्पष्ट किया कि यदि किसी निर्वाचन क्षेत्र में नोटा के अधिकार का उपयोग करने वाले मतदाताओं की संख्या किसी भी उम्मीदवार को प्राप्त मतों की संख्या से अधिक रहती है तो भी अधिकतम मत प्राप्त करने वाला उम्मीदवार विजयी घोषित किया जाएगा। भारत में पहली बार 11 नवंबर, 2013 से 4 दिसंबर, 2013 तक पाँच राज्यों में हुए विधान सभा चुनावों में मतदाता ने पहली बार 'नोटा' का प्रयोग किया और इस प्रकार भारत विश्व का 14वाँ देश बन गया जो उम्मीदवारी को नकारने का अधिकार प्रदान करता है।[8] उत्तर प्रदेश विधान सभा निर्वाचन, 2017 में 12 चुनाव क्षेत्रों में कुल 7,57,643

वोट 'नोटा' थे जो कुल मतदान का 0.9 प्रतिशत था। उक्त प्रत्येक चुनाव क्षेत्रों में 'नोटा' की संख्या विजयी अंतर से अधिक थी। कुछ आंकड़ें निम्नवत् हैं[9] :-

क्र. सं.	विधान सभा क्षेत्र	विजय अंतर मत संख्या	नोटा मत संख्या
1.	डुमरिया गंज	171	1611
2.	मोहल लाल गंज	530	3471
3.	दूधी	1085	8522
4.	मंत	432	1253
5.	मटेरा	1595	2717
6.	मीरापुर	193	1090
7.	मुबारकपुर	688	1628

अगर नोटा की व्यवस्था का हमारे लोकतंत्र की चुनावी प्रक्रियाओं के अंतिम परिणाम पर कोई फ़र्क़ ही न पड़े तो इसका औचित्य ही क्या है? इसको औचित्यपूर्ण बनाने के लिए इसके आधार पर चुनाव परिणाम तय होने चाहिए तभी राजनीतिक दल भी अधिक योग्य उम्मीदवार चुनाव मैदान में उतारने के लिए बाध्य होंगे।

भारत में लोक सभा सदस्य संख्या 1976 के आधार पर ही चल रही है और सदस्य संख्या बढ़ाने पर 1976 में लगी रोक 2026 तक बढ़ा दी गई है। जनसंख्या बढ़ोत्तरी के साथ सदस्य संख्या में बढ़ोत्तरी होनी चाहिए। पूर्व राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी का भी मानना है कि 1.28 अरब की जनसंख्या पर कुल 543 संसदीय सीट हैं लोगों की इच्छा का सही प्रतिनिधित्व करने के लिए अब समय आ गया है कि सीटों का परिसीमन कर इनकी संख्या बढ़ाने के लिए क़ानूनी उपायों पर विचार किया जाए, उन्होंने कहा ''अगर ग्रेट ब्रिटेन में 600 संसदीय सीट हो सकती है तो फिर भारत में क्यों नहीं? अधिक जनसंख्या है तो अधिक सीट होनी चाहिए।''[10]

फरवरी-मार्च 2017 में संपन्न पाँच राज्यों के विधान सभा निर्वाचन में भाजपा के विरुद्ध अन्य बड़े राजनीतिक दलों को मिली पराजय पर सर्वप्रथम मायावती ने ई.वी. एम. (Electronic Voting Machine) में छेड़छाड़ के आरोप लगाए और धीरे-धीरे अन्य राजनीतिक दलों ने भी इनका साथ दिया, परंतु जब निर्वाचन आयोग ने ई.वी.एम. में छेड़छाड़ की चुनौती हेतु राजनीतिक दलों को निर्धारित तिथि व समय पर बुलाया तो प्रमुख दल पीछे हट गए। इस प्रमुख आरोप-प्रत्यारोप में मुख्य निर्वाचन आयुक्त ने मान-हानि

के अधिकार की माँग की है जो सर्वथा उचित है क्योंकि निष्ठा व ईमानदारी से कार्य कर रही संस्था की निष्पक्षता पर सवाल उठाना जनमानस को न केवल भ्रमित करना वरन् भविष्य में उन्हें मतदान हेतु हतोत्साहित भी करना है। अतः इस दिशा में गंभीर चिंतन की आवश्यकता है।

कुछ स्थानों पर मतदान में निष्पक्षता लाने के लिए ई.वी.एम. के स्थान पर VVPAT (Voter Verified Paper Audit Trail) का प्रयोग किया गया था और भविष्य में सभी निर्वाचन क्षेत्रों में इसके प्रयोग को संभव बनाने के लिए निर्वाचन आयोग कटिबद्ध है और यह निश्चित ही चुनाव सुधार की दिशा में बड़ा क़दम होगा।

भारत में दल-बदल का बड़ा प्रचलन है और सत्ता प्राप्ति एकमात्र ध्येय होने के कारण विचार और मूल्य महत्त्वहीन हो गए हैं। हाल ही में संपन्न विधान सभा चुनावों में देखा गया कि चुनाव से कुछ समय पूर्व तक न केवल प्रत्याशियों ने अपने पाले बदले वरन् टिकट भी प्राप्त किया और विजयी हो मत्रिमंडल में शामिल भी हुए। ऐसी स्थिति में धन बल और बाहुबल पुनः प्रतिष्ठित हो जाता है। अतः इस संबंध में क़ानून बनाया जाना चाहिए कि कम-से-कम छह माह किसी राजनीतिक दल की सदस्यता के उपरांत ही किसी व्यक्ति को चुनाव हेतु टिकट दिया जाए जिससे वह संबंधित दल की नीतियों व कार्यों को समझे व उत्तरदायी बने तथा साथ ही साथ दूसरे राजनीतिक दलों में सेंध लगाने की प्रवृत्ति कम हो।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारत में चुनाव सुधार हो रहे हैं, परिस्थितियों में अंतर आया है परंतु अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। लोकतंत्र तभी वास्तविक रूप से सफल है जब उसमें पारदर्शिता हो, समानता हो और प्रत्येक स्तर पर अपनी बात कहने का अवसर हो और यह तभी संभव है जब प्रत्येक स्तर पर जवाबदेही सुनिश्चित की जाए। राजनीति को शॉर्टकट मानकर धन व बाहुबल से अपने स्वार्थों की पूर्ति करने वाले राजनीतिज्ञों पर कठोर कार्यवाही हो तभी जनमानस की लोकतंत्र में निष्ठा बढ़ेगी और जनसामान्य का निर्वाचन के प्रति रुझान व विश्वास बढ़ेगा इसके लिए परिस्थितियों के अनुकूल चुनाव सुधार आज की महती आवश्यकता है।

❑

संदर्भ

1. डॉ. अनुपमा यादव, सशक्त लोकतंत्र की दिशा में सार्थक पहल : नोटा -- महिला विधि भारती, विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) शोध पत्रिका जनवरी-मार्च, 2016, अंक 86, पृष्ठ 29
2. डॉ. प्रतिभा त्रिपाठी, चुनाव सुधार, Journal of Acharya Narendra Dev Research

Institute, Nainital संयुक्तांक (2010-11) Vol. 12-13, (July 2010, Dec. 2010, Jan 2011-June 2011), पृष्ठ 109

3. डॉ. हेमंत कुमार, भारत में राजनैतिक दल : उनकी जवाबदेही और चुनौतियाँ, ed. Dr. Arunoday Bajpai, Rising India Domestic and External Opportunities and Challenges, SBPD Publications Agra-Mathura Bye Pass Road, Agra, page 247
4. www.ibtimes.in/186-indianmemberParliament
5. संपादकीय, अमर उजाला, इलाहाबाद, 1 मार्च, 2014
6. Varun Gandhi moves bill in Lok Sabha to recall MPs, MLAs for non performance - http//www/Livemint.com
7. रेनू, ग़लत जानकारी से चुनाव रद्द : उच्चतम न्यायालय, महिला विधि भारती, विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) शोध पत्रिका अक्टूबर-दिसंबर 2016, पृष्ठ 254
8. डॉ. अनुपमा यादव, सशक्त लोकतंत्र की दिशा में सार्थक पहल : नोटा -- महिला विधि भारती, विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) शोध पत्रिका जनवरी-मार्च 2016 अंक 86, पृष्ठ 31
9. Election 2017 UP Polls : on 12 Seats NOTA more than victory margin, The Times of India, March 13, 2017 http://timesofindia.indiatimes.com
10. राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने लोकतांत्रिक ढाँचे को सुदृढ़ करने के लिए चुनाव सुधार करने का आह्वान किया। NDTV India April 09, 2017 http://Khabar.ndtv.com/news

डॉ. दिनेश बाबू गौतम

भारतीय निर्वाचन प्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन (ईवीएम के विशेष संदर्भ में)

भारतीय संविधान में निर्वाचन के संबंध में विशेष प्रावधान दिए गए हैं तथा निर्वाचन आयोग की भी स्थापना की गई है। अनुच्छेद 324 के अंतर्गत निर्वाचनों का निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण करने के लिए निर्वाचन आयोग की व्यवस्था है और संविधान इस बात को सुनिश्चित करता है कि यह उच्चतम और उच्च न्यायालय की भाँति कार्य संपादित कर सके। निर्वाचन आयोग में एक चीफ निर्वाचन तथा दो नियमित निर्वाचन आयुक्त होंगे।

भारतीय संविधान ने भारत में एक लोकतंत्रात्मक सरकार की स्थापना की गई है। ऐसी सरकार जनता के प्रतिनिधियों द्वारा संचालित होती है जिनका निर्वाचन जनता द्वारा किया जाता है। स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव लोकतंत्र की आधारशिला है। यह निर्वाचन प्रत्येक 5 वर्ष के बाद होता है। यह बड़ा कठिन कार्य है। इस कार्य के संचालन के लिए भारतीय संविधान ने चुनाव आयोग कि स्थापना का उपबंध किया है। भारतीय संविधान में निर्वाचन संबंधी प्रावधान अनुच्छेद 324-329 क तक दिए गए हैं जिसमें अनुच्छेद 324 के अंर्तगत निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण करने के लिए निर्वाचन आयोग की स्थापना की गई है। निर्वाचन आयोग एक स्वतंत्र निकाय है।

भारत का चुनाव आयोग बनाम डॉ. सुब्रह्मण्यम् स्वामी के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि एक बहुसदस्यीय चुनाव आयोग के मामले में यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक मामले में निर्णय लेते समय प्रत्येक सदस्य भाग लें। मुख्य चुनाव आयुक्त और आयुक्त उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों की तरह पीठों में बैठ सकते हैं विशेषकार जब किसी सदस्य के ऊपर पक्षपात करने का आरोप लगाया गया हो। प्रस्तुत मामलों में तमिलनाडु की भूतपूर्व मुख्यमंत्री जयललिता के ऊपर यह

आरोप लगाया गया था कि वे विधान सभा सदस्यता के लिए अयोग्य हैं। अनुच्छेद 192(2) के अधीन किसी सदस्य की निरर्हता के प्रश्न पर निर्णय लेने के पूर्व राज्यपाल को चुनाव आयोग का मत लेना आवश्यक है। जयललिता ने यह आरोप लगाया कि उनके सदन की निरर्हता ने प्रश्न को उठाने वाले व्यक्ति डॉ. सुब्रह्मण्यम् स्वामी से मुख्य चुनाव आयोग का घनिष्ठ संबंध है। अतः उन्हें उनसे न्याय की अपेक्षा नहीं है। न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि अनुच्छेद 324 के अधीन एक बहुसदस्यीय आयोग की स्थिति में मुख्य चुनाव आयोग का भाग लेना आवश्यक नहीं है। मुख्य चुनाव आयुक्त आयोग की बैठक बुलाने और मामलों का निर्णय के लिए छोड़ दे और स्वयं हट जाएँ। किंतु दोनों सदस्यों में असहमति होने की दशा में आवश्यकता का नियम लागू होगा और राज्यपाल को बहुमत का मत देने के लिए मुख्य आयुक्त को भाग लेना होगा और अपना मत देना हेगा।

निर्वाचन विधि के संबंध में संघ और राज्य विधान मंडलों की शक्तियाँ

अनुच्छेद 327 के अंर्तगत संसद समय समय पर विधि द्वारा संसद या किसी राज्य के विधान मंडल के लिए निर्वाचन से संबद्ध सब विशयों के संबंध में, जिसमें निर्वाचन नामावलियों को तैयार कराना, निर्वाचन क्षेत्रों को परिसीमन तथा ऐसे सदनों के गठन करने के अन्य विशय भी शामिल हैं, उपबंध कर सकती है। इस शक्ति के प्रयोग से संसद ने लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950; राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति निर्वाचन अधिनियम, 1952, परिसीमन आयोग अधिनियम, 1952 आदि पारित किया है। अनुच्छेद 328 के अंतर्गत राज्य -- विभाग मंडलों को इसी प्रकार के अधिकार प्राप्त है। राज्य विधान मंडल उक्त सभी विषयों पर क़ानून बना सकते है, जहाँ तक संसद ने उन पर क़ानून नहीं बनाया हो।

निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप का वर्णन

अनुच्छेद 329(क) यह उपबंधित करता है कि संसद द्वारा अनुच्छेद 327 या 328 के अधीन बनाई गई किसी विधि को जो निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन या ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों के स्थानों के आबंटन से संबंधित है; विधि मान्यता पर किसी न्यायालय में आपत्ति नहीं की जा सकती है। अनुच्छेद 329(ख) यह उपबंधित करता है कि संसद या राज्य के विधान मंडल के किसी सदन के निर्वाचन पर ऐसी निर्वाचन याचिका के बिना कोई भी आपत्ति नहीं की जाएगी जो ऐसे प्राधिकारी को ऐसी रीति से प्रस्तुत की गई है जो समुचित विधान मंडल द्वारा निर्मित विधि के द्वारा या अधीन उपबंधित है। संक्षेप में, खंड (ख) के अनुसार चुनाव प्राक्रिया के प्रारंभ होने तथा उसके समाप्त होने तक चुनाव संबंधी

मामलों पर न्यायालय की अधिकारिता वर्जित रहेगी। चुनाव संपन्न हो जाने के पश्चात् ही उसे चुनौती दी जा सकती है। ऐसा इसी उद्देश्य से किया गया है जिससे निर्वाचनों को समय से संपन्न कराया जा सके और बीच में कोई अवरोध न उत्पन्न हो।

के. वेंकटाचलम बनाम ए. स्वामीकन के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अनुच्छेद 329(ख) जो न्यायालय की अधिकारिता को निर्वाचन संबंधी मामलों से वर्जित करता है। वह उन मामलों पर लागू नहीं होगा जहाँ एक अयोग्य व्यक्ति निर्वाचत हो जाता है, सदन में बैठता है और मतदान करता हैं। ऐसे मामलों में उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपनी अधिकारिता का प्रयोग कर सकता है और यह घोषित कर सकता है कि उसका निर्वाचन अवैध है। क्योंकि उसके पास अपेक्षित अर्हता नहीं है। अनुच्छेद 191 और 193 के अंतर्गत एक अयोग्य सदस्य को सदन में बैठना तथा मतदान करने के लिए दंडित किए जाने का उपबंध है।

संविधान के 10वें संशोधन अधिनियम द्वारा अब खंड (ख) के अंतर्गत निर्वाचन अधिकारों के निर्वाचन संबंधी विवादों को निपटाने की अधिकारिता को समाप्त कर दिया गया है। संशोधन ने इस शक्ति को उच्च न्यायालय में निहित कर दिया है। ऐसा विवादों के शीघ्रतर निपटारे के उद्देश्य से किया गया है। निर्वाचन अधिकरणों को इन विवादों को निपटाने में अनावश्यक विलंब होता था।

प्रतिनिधियों के चुनने, चुने जाने का अधिकार मूल अधिकार नहीं हैं किसी व्यक्ति के नामांकन को तब तक नहीं अस्वीकार किया जा सकता है जब तक कि उसमें कोई सारवान् प्रकृति की त्रुटि न हों।

निर्वाचन संबंधी संवैधानिक प्रावधान

अनुच्छेद 324. निर्वाचन के अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण का वर्णन आयोग में निहित होना

1. इस संविधान के अधीन संसद और प्रत्येक राज्य के विधान-मंडल के लिए कराए जाने वाले सभी निर्वाचनों के लिए तथा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पदों के लिए निर्वाचन के लिए निर्वाचक-नामावली तैयार कराने का और सभी निर्वाचनों के संचालन का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण एक आयोग में निहित होगा (जिसे इस संविधान में निर्वाचन आयोग कहा गया है।)
2. निर्वाचन आयोग मुख्य निर्वाचन आयुक्त और उतने अन्य निर्वाचन आयुक्तों से, यदि कोई हो, जितने राष्ट्रपति समय-समय पर नियत करें, मिलकर बनेगा तथा मुख्य निर्वाचन आयुक्त और अन्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति, संसद द्वारा इस निमित बनाई गई विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए राष्ट्रपति द्वारा की

जाएगी।

3. जब कोई निर्वाचन आयुक्त इस प्रकार नियुक्त किया जाता है तब मुख्य निर्वाचन आयुक्त निर्वाचन आयोग के अध्यक्ष के रूप में कार्य करेगा।

4. लोक सभा के लिए और प्रत्येक राज्य की विधान सभा के प्रत्येक साधारण निर्वाचन से पहले तथा विधान परिषद् वाले प्रत्येक राज्य की विधान परिषद् के लिए प्रथम साधारण निर्वाचन से पहले और उसके पश्चात् प्रत्येक द्विवार्षिक निर्वाचन से पहले, राष्ट्रपति निर्वाचन आयोग से परामर्श करने के पश्चात, खंड (1) द्वारा निर्वाचन आयोग को सौंपे गए कृत्यों के पालन में आयोग की सहायता के लिए उतने प्रादेशिक आयुक्तों की भी नियुक्ति कर सकेगा, जितने वह आवश्यक समझे।

5. संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए निर्वाचन आयुक्तों और प्रादेशिक आयुक्तों की सेवा की शर्ते और पदावधि ऐसी होगी जो राष्ट्रपति नियम द्वारा अवधारित करें।

परंतु मुख्य निर्वाचन आयुक्त को उसके पद से उसी रीति से और उन्हीं आधारों पर ही हटाया जाएगा, जिस रीति से और जिन आधारों पर उच्चतम न्यायलय के न्यायधीश को हटाया जाता है अन्यथा नहीं और मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सेवा की शर्तों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जाएगा।

परंतु यह और कि किसी अन्य निर्वाचन आयुक्त का प्रादेशिक आयुक्त को मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सिफ़ारिश पर ही पद से हटाया जाएगा, अन्यथा नहीं।

6. जब निर्वाचन आयोग ऐसा अनुरोध करें तब, राष्ट्रपति या किसी राज्य का राज्यपाल निर्वाचन आयोग या प्रादेशिक आयुक्त को उतने कर्मचारिवृंद उपलब्ध कराएगा जितने खंड (1) द्वारा निर्वाचन आयोग को सौंपे गए कृत्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक हों।

अनुच्छेद 325 धर्म, मूलवंश, जाति या लिंग के आधार पर किसी व्यक्ति का निर्वाचक-नामावली में सम्मिलित किए जाने के अपात्र न होना और उसके द्वारा किसी विशेष निर्वाचक-नामावली में सम्मिलित किए जाने का दावा न किया जाना : संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचन के लिए प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्र के लिए एक साधारण निर्वाचक-नामावली होगी और केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या इनमें से किसी के आधार पर कोई व्यक्ति ऐसी किसी नामावली में सम्मिलित किए जाने के लिए अपात्र नहीं होगा या ऐसे किसी निर्वाचन-क्षेत्र के लिए किसी विशेष निर्वाचक-नामावली में सम्मिलित में किए जाने का दावा नहीं करेगा।

अनुच्छेद 326 लोक सभा और राज्यों की विधान सभाओं के लिए निर्वाचन का वयस्क मताधिकार के आधार पर होना : लोक सभा और प्रत्येक राज्य की विधान सभा के लिए निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होंगे अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति, जो भारत का नागरिक है और ऐसी तारीख़ को, जो समुचित विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस निमित नियत की जाए, कम-से-कम[1] (अठारह वर्ष) की आयु का है और इस संविधान या सममुचित विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी के अधीन अनिवास, चित्तविकृति, अपराध या भ्रष्ट या अवैध आचरण के आधार पर अन्यथा निरर्हित नहीं कर दिया जाता है, ऐसे किसी निर्वाचन में मतदाता के रूप में रजिस्ट्रीकृत होने का हक़दार होगा।

चुनाव सुधार में सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका में संदेह

कितनी सुरक्षित है ई.वी.एम.

इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ईवीएम) में छेड़छाड़ के बूते चुनाव जीतने के आरोपों को निराधार साबित करने के लिए चुनाव आयोग ने दिनांक 12.05.2017 को सभी पार्टियों की बैठक बुलाई। इसमें सात राष्ट्रीय और 48 क्षेत्रीय दल शामिल हुए। दरअसल चुनाव आयोग जितनी मज़बूती के साथ जान पर अड़ा है कि इन मशीनों से छेड़छाड़ करके नतीज़ों को प्रभावित नहीं किया जा सकता है, उसी तरह कई रानीतिक दल इसके विरोध में डटे हैं। अब तक ईवीएम से छेड़छाड़ किए जाने के 37 मामले विभिन्न राज्यों की कोर्ट में दाख़िल किए गए हैं जिसमें से 30 के संबंध में कोर्ट ने फैसला सुनाया है कि ईवीएम पूरी तरह सुरक्षित है। इसके बावजूद भी संशय के बादल हटते नहीं दिख रहे हैं।

आयोग का आत्मविश्वास

- ईवीएम सार्वजनिक क्षेत्र की दो कंपनियाँ ही बनाती हैं।
- असल से पहले छदय मतदान किया जाता है जिसमें ईवीएम के बटनों की जाँच की जा सके।
- पोलिंग बूथ से पहले ईवीएम को पेपर सील किया जाता है। मशीन पर यह काग़ज़ चस्पा होने के बाद सभी उम्मीदवार या प्रतिनिधि सील पर हस्ताक्षर करते हैं।
- चुनाव के 13 दिन पहले सभी पार्टियों के प्रतिनिधियों के सामने ईवीएम का दूसरा परीक्षण किया जाना है। सभी प्रतिनिधि एक प्रमाण पत्र पर हस्ताक्षर करते हैं कि ईवीएम में कोई गड़बड़ नहीं है।

छेड़छाड़ के आरोप

मतदान से पहले

(i) मशीन के चिप या पुर्जों को बदलकर उसी तरह दिखने वाले पुर्जे लगा दिए गए जो किसी ख़ास पार्टी को पहुँचाए।

(ii) मशीन के प्रोग्राम में ऐसे हेरफेर किए जा सकते हैं कि छदय मतदान में तो सही नतीज़े दिखे लेकिन असल मतदान के समय नतीज़ों में गड़बड़ हो जाए।

(iii) ब्लूटुथ लिंक वाली चिप ईवीएम में रजिस्टर कर इसे मोबाइल फोन से नियंत्रण किया जा सकता है।

मतदान के दौरान

(i) वोटर यह नहीं जान सकता कि उसने जिसे वोट दिया है, उसी को वोट मिला है कि नहीं।

(ii) जो वोट दिए ही नहीं गए वे भी रिकार्ड किए जाते हैं।

(iii) ऐसा कोई भरोसेमंद तरीक़ा नहीं है जिसमें ईवीएम में मतों के रिकार्ड होने के दौरान आई खराबी को पहचाना जा सके।

(iv) उम्मीदवारों के वोटों में अदला बदली करने के लिए ईवीएम में हेरफेर की जाती है।

चुनाव के बाद

(i) छोटे हार्डपेपर उपकरण मशीनों में बंद मतों के रिकार्ड को बदल सकते हैं।

(ii) ईवीएम पर लगी सील में स्टिकर धागों व लाल रंग की मोम होती है। इसमें छेड़छाड़ करना मुश्किल नहीं है।

चिंता के मसले

(i) ईवीएम मशीन पहुँचाने वाला कोई भी अधिकारी इसमें छेड़छाड़ कर सकता है।

(ii) अगर भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड और इलेक्ट्रॉनिक कारपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड ईवीएम चिप बनाने में अन्य कंपनियों की मदद लेती होगी तो यह एक बड़ा ख़तरा होगा।

वीवीपीएटी तकनीक कितनी सुरक्षित

(i) सुब्रह्मण्यम् स्वामी द्वारा याचिका दायर किए जाने के बाद सुप्रीम कोर्ट ने चुनाव आयोग से वोटर वेरिफाइड पेपर ऑडिट ट्रायल तकनीक व्यवहार में लाने को कहा।

(ii) ईवीएम से जुड़ी हुई एम प्रिंव्युमा मशीन में मतदाता के वोट डालते ही एक पर्ची निक़लती है तो मतदाता द्वारा चुने गए उम्मीदवार और पार्टी का नाम दिखाती है। इसी को वीवीपीएटी कहते हैं।

(iii) यह पर्ची कुछ देर तक के लिए दिखती है ताकि मतदाता अपने वोट की पुष्टि कर ले। इसके बाद यह सील बंद डिब्बे में गिर जाती है जिसे वोटों की गिनती के

वक़्त ही खोला जा सकता है।

(iv) यह तकनीक 2014 में लोक सभा के 543 निर्वाचन क्षेत्रों में से 8 में इस्तेमाल की गई।

(v) 2017 के विधान सभा चुनावों में पंजाब में 117 में से 33 सीटों पर वीवीपीएटी तकनीक इस्तेमाल की गई जबकि गोवा में सभी मतदाना केंद्र इस तकनीक से लेस थे।

अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य, इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन

(i) **जर्मनी** : 2009 में इस प्रक्रिया के अस्पष्ट होने से ख़त्म किया गया।

(ii) **नीदरलैंड** : 2007 में ईवीएम विरोधी दल ने ईवीएम छेड़छाड़ करके दिखाई जिसे वहाँ मौजूदा कोई शख़्स नहीं पकड़ पाया। इसके बाद वहाँ इन पर प्रतिबंध लगा दिया गया।

(iii) **अमेरीका** : जिन राज्यों में ईवीएम से वोटिंग होती है वहाँ पेपर ट्रॉयल तकनीक का इस्तेमाल ज़रूरी है।

(iv) **इंग्लैंड व फ्रांस** : कभी भी ईवीएम का इस्तेमाल नहीं किया है।

ईवीएम का समालोचनात्मक अध्ययन

ईवीएम का इम्तिहान क्यों : चर्चित कहावत है, 'नाच न जाने आँगन टेढ़ा।' इसे सियासी माहौल में ढालें तो कहा जा सकता है कि चुनाव में हारे तो ईवीएम ग़लत। यूपी विधान सभा और दिल्ली नगर निगम के चुनावों में हारने वाले नेताओं के साथ कुछ ऐसा ही हो रहा है। वे अपनी हार को ईवीएम पर थोपकर मुँह छिपाना चाह रहे हैं।

जानिए क्या है विवाद और असलियत : मध्य प्रदेश और राजस्थान में पिछले महीने हुए उपचुनावों में वोटर वेरिफाइड पेपर ऑडिट ट्रेल की चैकिंग के दौरान ईवीएम के दो अलग-अलग बटन दबाने पर कथित तौर पर कमल का फूल प्रिंट हुआ। दिल्ली में बैलट पेपर से चुनाव मशीन की कराने की माँग की। यूपी के चुनावों में करारी हार के बाद मायावती ऐसे ही आरोप लगा चुकी हैं। मुंबई के निगम चुनाव में एक उम्मीदवार श्रीकांत श्रीसत ने तो गजब ही कर दिया, उसने दावा किया है कि उसे शून्य वोट मिले हैं जबकि उसने और उसके परिवार ने उसको ही वोट दिया था। यह दावा तब धराशायी हो गया जब ख़ुलासा हुआ कि उसे 44 वोट मिले हैं। अब वह उम्मीदवार मुँह छुपाता फिर रहा है, कह रहा है, उस समय हड़बडी में अरोप लगा दिया था।

हारने वालों को आरोपों का सहारा : यूपी विधान सभा चुनाव में बीएसपी की करारी हार के बाद मायावती ने आरोप लगाया, तो अखिलेश यादव भी दबे-छुपे इसका सहारा लेते नज़र आए। इसके बाद पंजाब और गोवा और दिल्ली के राजौरी गार्डन उपचुनाव में

हार के बाद दिल्ली के मुख्य मंत्री अरविंद केजरीवाल ने तो यहाँ तक कह दिया कि अगर उन्हें ईवीएम दे दी जाए तो वह 24 घंटे में यह साबित कर देंगे कि इसके साथ छेड़छाड़ हो सकती है। उन्होंने विधान सभा में ऐसी कोशिश करवा डाली।

ईवीएम के पक्ष में फैसले : ईवीएम में गड़बड़ी को लेकर देशभर में कुल 37 केस दायर किए गए थे। हालाँकि सात केस अभी लंबित। गड़बड़ी कोर्ट में साबित नहीं हो सकी तथा हाल ही में उत्तराखंड उच्च न्यायालय ने छह विधान सभाओं के ईवीएम मशीन को जाँच के निर्देश दिए हैं।

चुनाव आयोग का तर्क : माया और केजरीवाल की ओर से सवाल उठाने के बाद चुनाव आयोग ने कहा, मशीन को दो बार चेक किया जाता है। उसे प्रत्याशी के सामने जाँचा और सील किया जाता है। गिनती से पहले भी ईवीएम को उम्मीदवारों के सामने खोला जाता है। जहाँ तक हैकिंग की चुनौती सवाल है तो चुनाव आयोग आधिकारिक तौर पर साफ़ कर चुका है कि ईवीएम से किसी भी स्थिति में टैंपर नहीं की जा सकती। आयोग ने राजनीतिक पार्टियों की चुनौती भी स्वीकार कर ली। 2019 के चुनाव भी अब वीवीपीएट से होंगे।

सर्वदलीय बैठक में बटा विपक्ष : नई दिल्ली (धीरज कनोजिया) चुनाव आयोग की ओर शुक्रवार को बुलाई गई बैठक में ईवीएम पर राजनीतिक दल बँटे नज़र आए। भाजपा के भूपेंद्र यादव ने कहा कि ईवीएम को ग़लत बताकर अपनी हार छिपाने वाले दलों को चुनाव आयोग ने जबाव दिया है। बसपा के सतीश चंद्र मिश्र ने बैलेट पेपर से चुनाव की माँग की। सपा नेता रवि प्रकाश चुनाव आयोग से कहा कि वे ईवीएम को प्रमाणित करें कि ये फुल प्रूफ है। जनता दल यूनाइटेड के सी. त्यागी ने कहा कि राजनीतिक दलों के बीच ही सहमति नहीं है। हमें आपसी सहमति के बाद चुनाव आयोग को अपनी बात कहनी चाहिए थी। 'आप' पार्टी के मनीष सिसौदिया ने कहा कि आयोग ने कह दिया कि हैकाथन नहीं कराएँगे। हम चैलेंज रखने जा रहे हैं।

इन देशों में ईवीएम पर रोक : जर्मनी और नीदरलैंड ने पारदर्शिता के अभाव की दलील देकर ईवीएम पर बैन लगा दिया। इटली का मानना है कि ईवीएम से नतीज़ों में गड़बड़ी की जा सकती है। आयरलैंड ने तीन साल के रिसर्च में पाँच करोड़ पौंड से ज़्यादा ख़र्च करने के बाद ईवीएम का विकल्प छोड़ दिया। अमेरिका के कैलिफोर्निया समेत कई राज्यों ने पेपर ट्रेल रहित ईवीएम को बैन कर दिया है।

क्या है वीवीपीएटी का मामला : ईवीएम के सवालों के बाद आयोग ने सभी राजनितियों पार्टियों के साथ 4 अक्टूबर, 2010 को बैठक कर वीवीपीएट पर चर्चा की थी। तब पारदर्शिता बढ़ाने के लिए वोटर वेरिफाइड पेपर ऑडिट ट्रेल यानी वीवीपीएटी

का विकल्प रखा गया था। इसमें मशीन का बटन दबाने के बाद वोटर को एक प्रिंट आउट मिल जाता है, ताकि यह पता चले कि वोट सही पड़ा भी या नहीं।

न्यायालय ने कहा 2019 के चुनाव में सभी जगह वीवीपीएटी लगाएँ : 2012 में सुब्रह्मण्यम् स्वामी की याचिका पर दिल्ली हाईकोर्ट ने कहा कि ईवीएम छेड़छाड़ से सुरक्षित नहीं है। बाद में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि सभी दलों से मशवरा कर 2019 के लोक सभा चुनाव वीवीपीएटी सिस्टम लगी ईवीएम मशीन से कराए जाएँ।

दिल्ली विधान सभा में 'आप' का डेमो : 'आप' के सौरभ भारद्वाज ने हाल ही मे अपनी एक मशीन बनाकर दिल्ली विधानसभा में दिखाया कि ईवीएम में छेड़छाड़ हो सकती है। हालाँकि चुनाव आयोग की ओर से कहा गया कि वह उनकी बनाई मशीन है न कि आयोग की। डेमो की कोई अहमियत नहीं नक़ली गैजेट से देश की बुद्धिमान जनता को बहकाया नहीं जा सकता। ये ईवीएम नहीं बल्कि ईवीएमी जैसी मशीन है। 'आप' के डेमो की कोई अहमियत नहीं है। यह बात आसानी से समझी जा सकती है कि अपने दावे को साबित करने के लिए ईवीएम जैसे गैजेट में पहले से सेटिंग की जा सकती है।

सभी राजनीतिक दलों से बराबर दूरी : मुख्य चुनाव आयुक्त नसीम जैदी ने शुक्रवार को राजनीतिक दलों के साथ हुई बैठक के बाद कहा कि आयोग की कोई पंसदीदा पार्टी नहीं है। वह सभी राजनीतिक दलों से बराबर की दूरी बना कर रखता है। आयोग की यह संवैधानिक और नैतिक कर्त्तव्य है कि वह 56 राजनीतिक दलों की ओर बनाए घेरे के बीच में रहे। आयोग का यह बयान इसलिए भी अहम है कि दिल्ली के सीएम अरविंद केजरीवाल ने दो चुनाव आयुक्तों के ज्योति और ओ.पी. रावत की स्वतंत्रता पर सवाल उठाए थे। उन्होंने कहा था कि ज्योति गुजरात और रावत मध्य प्रदेश सरकार के क़रीबी हैं।

माननीय न्यायालय का दृटिकोण

उच्चतम एवं उच्च न्यायालयों के दृष्टि कोण भी काफ़ी महत्त्वपूर्ण है। विभिन्न मामलों में न्यायालय की तर्क विद्वतापूर्ण मानी गई है। निम्न वादों की अनुसूची निम्न प्रकार है --

1. **के.एल. गुप्ता बनाम अमर नाथ चावला** ए.आई.आर. 1975 एस.सी. 308 सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कहा गया कि प्रार्थी को अपना ख़र्चा जोड़ना चाहिए तथा चुनाव क्षेत्र एवं संपूर्ण विधान सभा का हिसाब रखना चाहिए।
2. **इंदिरा नेहरू गाँधी वनाम राज नारायण** : ए.आई.आर. 1975 एस.सी. 1299 उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिर्निधारित किया गया कि धारा-77 में संशोधन किया जाए और विधि के शासन की स्थापना की जाए।
3. **डॉ. पी.एन. थाम्पे बनाम भारत संघ** : ए.आई.आर. 1985 एस.सी. 1133 माननीय

न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि कैंडीडेट को राजनैतिक पार्टी के फंड को अधिक ख़र्च नहीं कर सरना तथा उसे परमीशन नहीं दी जाएगी वह अपनी निजी संपत्ति को भी अधिक मात्रा में चुनाव में ख़र्च नहीं कर सकता। विधि की धारा 1-77 में पूर्ण रूप से व्याख्या की गई है।

4. **एस.एस. धनोवा बनाम भारत संघ** : ए.आई.आर. 1991 एस.सी. 1745 मामलों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अनुच्छेद 324(2) के अधीन निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति एवं पद की भक्ति राष्ट्रपति में निहित है तथा पद समाप्ति के अनुदेश को चुनौती नहीं दी जा सकती।
5. **टी.एन. शेषन बनाम भारत संघ** : (1995)4 एस.सी.सी. 112 महत्त्वपूर्ण निर्णय में न्यायमूर्तियों द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि संसद द्वारा पारित अधिनियम जिनके द्वारा निर्वाचन आयोग को बहुसदस्यीय बनाया गया है तथा अन्य विभिन्न आयुक्तों की समान ही पद एवं शक्ति प्रदान की गई है वह सर्वधानिक है।
6. **भारत का चुनाव आयोग बनाम डॉ. सुब्रह्मण्यम् स्वामी** : (1996) 4एस.सी.सी. 104 उच्चतम न्यायालय ने यह अभिर्निधारित किया कि एक बहुस्थानी चुनाव आयोग के मामलों में यह आवरमक नहीं है। कि प्रत्येक मामले में निर्णय लेते समय सभी सदस्य भाग लें। वह पीठों में भी सकते हैं।
7. **अनुकूल चंद्र बनाम भारत संघ** : ए.आई.आर. 1997 एस.सी. 2814 न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया कि मतदान का अधिकार अधिनियम का अधिकार होता है तथा लोक अधिनियम की धारा 62(5) एक ऐसे व्यक्ति को मतदान के अधिकार से वंचित करती है।
8. **के. वेकेटाचलम बनाम ए. स्वामीकन** : ए.आई.आर. 1999 एस.सी. अधिनिर्धारित किया है कि अनुच्छेद 329-बी जो न्यायालय की अधिकारिता को निर्वाचन संबंधी मामलों से वर्जित करता है तथा विधि में दंडित करने का प्रावधान है।
9. **जावेद बनाम हरियाणा राज्य** : ए.आई.आर. 2003 एस.सी. 3057 न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चुनाव का अधिकार मूल अधिकार नहीं यह विधि प्रदत्त अधिकार है।
10. **दी हिंदुस्तान टाइम्स 20 अगस्त 1993** : न्यायालय ने कहा कि निर्वाचन आयोग कि शक्तियाँ अनियंत्रित नहीं है और न्यायपालिका को उस पर न्यायपालिका को उस पर न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त है।
11. **दी टाइम्स ऑफ इंडिया अप्रैल 2017** : हाल ही में उत्तराखंड के उच्च न्यायालय का निर्णय भी महत्त्वपूर्ण है। ईवीएम को 48 घंटे में न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष जाँच कर रिर्पोट प्रेक्षित की जाए।

निष्कर्ष एवं सुझाव

भारतीय संविधान विश्व का अनूठा संविधान माना जाता है तथा भारतीय संविधान की निर्वाचन प्रणाली श्रेष्ठ है। फिर भी निर्वाचन में कुछ ख़ामियाँ है। निर्वाचन एक सैद्धांतिक एवं प्रक्रियात्मक विधि है क्योंकि भारत में निर्वाचन एक स्वतंत्र निकाय है। उच्च एवं उच्चतम न्यायालय द्वारा समय-समय पर विभिन्न न्यायक निर्णयों के माध्यम से निर्वाचन प्रणाली में सुधार की बात कही है। निर्वाचन ईमानदारी, निष्ठापूर्ण व सुरक्षा से होना चाहिए। क्योंकि तभी जनतंत्र बहाल माना जाएगा। जनता की भावनाएँ प्रजातंत्र में निहित है। डिजिटल भारत के लिए ईवीएम प्रणाली आवश्यक ही नहीं नितांत ज़रूरी है। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतात्रिक देश है।

❑

संदर्भ

1. 1-(1996) 4 एस.सी.सी. 104
2. ए.आई.आर. 1999 एस.सी. 1721
3. डॉ. जय नारायण पांडेय भारत का संविधान (39 एडिशन, सेंट्रल लॉ एजेंसी 30 डी/1 मोतीलाल नेहरू रोड, इलाहाबाद, पृष्ठ 608-615
4. डॉ. अवतार सिंह, डॉ. चंद्रप्रकाश सिंह, उत्तर प्रदेश न्याय सेवा परीक्षा गाइड (सिविल जज) 2007 द्वितीय संस्करण, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशंस 107, दरभंगा कालोनी, इलाहाबाद, पृष्ठ 677-678
5. अमर उजाला, झाँसी, शनिवार, 13 मई, 2017 पृष्ठ 13
6. विधि भारती (साहित्य में महिला सरोकार, विशेषांक-2) विधि चेतना की द्विभाषिक शोध पत्रिका, विधि भारती परिषद्, शालीमार बाग, दिल्ली, पृष्ठ 203
7. ऑनलाइन शोधपत्र ईबीएम का विश्लेषणात्मक अध्ययन, पृष्ठ 2
8. एस. सरकार, जे.जे. मुनीर, भारत का संविधान वेयर एक्ट, द्विभाषी संस्करण, एशिया लॉ एजेंसी, इलाहाबाद।

राजेंद्र कुमार मीणा

वर्तमान में चुनाव सुधार और निर्वाचन आयोग की भूमिका

"लोकतंत्र में सरकार है जनता की, जनता के लिए और जनता के द्वारा चलाई जाती है।" — **अब्राहम लिंकन**

भारत विश्व का बहुत बड़ा लोकतांत्रिक देश है। यहाँ नागरिकों द्वारा विधायिका के विभिन्न पदों के लिए प्रत्यक्ष रूप से नागरिकों को चुना जाता है। भारत के संविधान निर्माताओं ने स्वतंत्र, निष्पक्ष व पारदर्शी चुनाव कराने के लिए निर्वाचन आयोग की स्थापना की जिसके बारे में अनुच्छेद 324 से 329 तक में उपबंध किए गए हैं। निर्वाचन आयोग चुनावों में अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण का काम करता है। वक़्त के साथ चुनाव आयोग ने चुनावी प्रक्रिया में सुधार किए तथा आयोग ने चुनावी प्रक्रिया को पारदर्शी, स्वतंत्र और निष्पक्ष बनाने के लिए नए आयाम, अधिकारों, नियमों को लागू किया जो लोकतंत्र के लिए बेहद ज़रूरी माने जाते हैं।

समय के साथ परिवर्तन भी ज़रूरी है क्योंकि परिवर्तन प्रकृति का नियम है। देश की आज़ादी के बाद से 67 वर्षों तक के सफ़र में चुनाव प्रक्रिया में व्यापक बदलाव आए। चुनाव आयोग ने 2014 में विश्व की सबसे बड़ी लोकतांत्रिक व्यवस्था में सफलतापूर्वक चुनाव करवा कर भारत की ओर संपूर्ण विश्व का ध्यान खींचा परंतु इसमें भी आचार संहिता उल्लंघन, धर्म के आधार पर वोट माँगने, आपराधिक प्रवृत्ति के लोगों का चुनाव लड़ने व उनकी योग्यताओं में सुधार की माँग उठी, ऐसे में चुनाव सुधारों पर लोगों का ध्यान जाना लाज़िमी है।

चुनाव सुधार का अर्थ

चुनावी प्रणाली में करने योग्य उन परिवर्तनों को चुनाव सुधार कहते हैं जिनके करने से जनता की आकांक्षाएँ चुनाव परिणामों के रूप में अधिकाधिक परिणित होने लगें। चुनाव

सुधारों को लेकर बीते दशक से ही सरकार, चुनाव आयोग व राजनीतिक दलों ने अहम पहल की है। इसके तहत राजनीति में अपराधीकरण रोकने, राजनीतिक दलों में सुधार, पार्टी फंडिग में पारदर्शिता लाने तथा चुनाव में फ़ायदा पाने के लिए धर्म के ग़लत इस्तेमाल, पेड न्यूज़ और आचार संहिता के उल्लंघन के मसले पर चर्चा हो रही है। इनमें अहम सुधार करने की बेहद ज़रूरत है। अभी सरकार का कहना है कि वह चुनाव सुधारों पर संजिदा है और जिन मसलों पर राजनीतिक दलों में मतभेद है उन मसलों पर राजनीतिक दलों में आम राय बनाने की पहल हो रही है। 1998 में चुनाव आयोग व क़ानून मंत्रालय ने देश भर में कई व्यापक चर्चाएँ कराई और उसके बाद कुछ प्रस्तावों को एक दस्तावेज़ के रूप में तैयार किया। इस प्रस्ताव को क़ानून मंत्रालय ने विधि आयोग को भेज दिया तथा चुनाव आयोग इस प्रकार के चुनाव सुधारों को लागू करने को लेकर बेहद सक्रिय है। चुनाव सुधारों के लिए सरकार ने समय समय पर विभिन्न समितियों तथा आयोग की अनुशंसा को लागू किया जो निम्नलिखित हैं।

तारकुंडे समिति (1974-1975) : मतदाताओं की उम्र 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दी गई है। (61वाँ संविधान संशोधन, 1989)

इंद्रजीत गुप्ता समिति (1998) : चुनाव में सरकारी धन एवं तंत्र का दुरुपयोग बिल्कुल न हो तथा पारदर्शिता, निष्पक्षता के साथ कार्य करेंगे तथा संपूर्ण चुनावी ख़र्च प्रशासनिक व्यय एवं उम्मीवारों का व्यय राजकोष से वहन हो।

दिनेश गोस्वामी समिति (1990) : किसी भी उम्मीदवार को दो या दो से अधिक निर्वाचन क्षेत्रों से चुनाव लड़ने की अनुमति न दी जाए। सत्ताधारी दल द्वारा सरकारी मशीनरी के दुरुपयोग को रोका जाए।

विधि आयोग की रिपोर्ट ए.पी. शाह ने पेश की जिसमें चुनाव सुधारों के उपाय सुझाए गए। राजनीति में अपराधीकरण रोकने हेतु क़ानून बनाने, राजनीतिक दलों के आय-व्यय के ख़र्चों, स्त्रोतों को सार्वजनिक किया जाने, धर्म का राजनीति में दुरुपयोग रोकने हेतु संसद में विधेयक पेश किया गया।

प्रमुख चुनाव सुधार अब तक : एक नज़र में

- अस्सी के दशक में मतदान की उम्र 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष की गई।
- 1995 से फ़ोटो पहचान-पत्र को अवैध मतदान रोकने व सुरक्षा के तौर पर अनिवार्य किया।
- जन-प्रतिनिधित्व क़ानून, 1951 में संशोधन करके मतदान में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों का इस्तेमाल शुरू करने की व्यवस्था की गई।
- चुनाव आयोग ने शांतिपूर्ण चुनाव के लिए चुनावों से पहले लोगों के हथियार नज़दीकी पुलिस थाने में जमा कराने की परंपरा शुरू की।

- मतदान के दिन आयोग ने शराब की बिक्री पर पूर्णतः प्रतिबंध लगा दिया।
- उम्मीदवार अपने प्रचार में अनावश्यक धन ख़र्च न करे, इसके लिए निर्वाचन आयोग ने चुनाव प्रचार संबंधी गतिविधियों की वीडियो रिकॉर्डिंग करवाना शुरू की है।
- चुनाव ख़र्च पर नज़र रखने के लिए आयोग ने लेखा परीक्षकों को पर्यवेक्षक के रूप में नियुक्त करना शुरू किया है।
- जुलाई, 1998 में निवार्चन आयोग ने सिफ़ारिश की कि जिन व्यक्तियों के ख़िलाफ़ अदालत में आरोप-पत्र दायर किया जा चुका है, उन्हे विधानमंडल या संसद का चुनाव लड़ने से अयोग्य घोषित कर दिया जाए।
- मतदान पूर्व इलेक्ट्रॉनिक व प्रिंट मिडिया के ओपिनियन पोल पर प्रतिबंध लगाया गया।
- उम्मीदवारों को शपथ पत्र पर स्वयं, पत्नी व आश्रितों का पूरा विवरण व शैक्षणिक योग्यता का पूर्ण विवरण देना अनिवार्य किया।
- 1998 के बाद तीसरी संतान होने पर उम्मीदवारिता रद्द होगी।
- सरकार ने अवैध मतदान रोकने के लिए फ़ोटो युक्त मतदाता सूची जारी की।
- 2014 से मतदान दिवस पर अवकाश रखा गया और नोटा को भी सम्मिलित किया गया।
- दल-बदल क़ानून, 1985 में संशोधन कर इसे और कठोर बनाया गया है।
- हाँ समय के साथ चुनाव प्रणाली में बदलाव आए, परंतु चुनाव सुधार हेतु इतने कठोर या सुदृढ़ क़ानून नहीं बन पाएँ जिसकी उम्मीद इनको बनाते समय रही होगी।

विधि आयोग की 255वीं रिपोर्ट

- **चुनाव सुधार पर उच्चतम न्यायालय के निर्णय :** इसी दौर में उच्चतम न्यायालय ने भी विभिन्न मामलों तथा जनहित याचिकाओं के जरिये समय समय पर चुनाव सुधार पर निर्देश जारी किए तथा विशेष महत्त्व के प्रश्नों व विषयों पर निर्णयों के द्वारा जनता को अधिकार व कर्त्तव्य देकर लोकतंत्र को और अधिक मज़बूत बनाने में अहम क़दम उठाए हैं।
- **इंदिरा नेहरू गाँधी बनाम भारत संघ**'[1] के मामले में विधायिका द्वारा सरकारी मशीनरी, सरकारी अधिकारियों का चुनावी प्रचार व प्रत्यक्ष भागीदारी पर रोक लगाई तथा उम्मीदवारिता रद्द की गई।
- **मोहिंदर सिंह गिल बनाम मुख्य चुनाव आयुक्त**'[2] मामले में यह कहा गया था कि ''सविधान में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव और निहित अधीक्षण व निदेशन करने की चुनाव आयोग की शक्तियाँ व्यापक हैं तथा आयोग अपनी इन शक्तियों, कर्त्तव्यों

तथा कार्यों को स्वतंत्र रूप से निष्पादित कर सकता है। वह प्रशासनिक ढाँचे या परिस्थितियों पर निर्भर नहीं रहेगा।

- **अनुकूल चंद्र प्रधान बनाम भारत संघ**[3] केस के मामले में यह निर्धारित किया कि मतदान का अधिकार अधिनियम द्वारा प्रदान किया गया अधिकार है अतः इस पर विधि द्वारा निर्बंधन लगाए जा सकते हैं। लोक-प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 62(5) एक ऐसे व्यक्ति को मतदान के अधिकार से वंचित करती है जो जेल में सज़ा काट रहा है या पुलिस अभिरक्षा में हैं किंतु ऐसे व्यक्ति को मतदान के अधिकार से वंचित नहीं करती जो निवारक निर्णय के तहत निरुद्ध है।
- **जावेद बनाम हरिणाया**[4] के मामले में चुनाव का अधिकार न तो मूल अधिकार है न ही कामन लॉ के अधीन अधिकार है यह अधिनियम प्रदत्त अधिकार है अतः विधि द्वारा इस प्रयोग पर निर्बंधन लगाए जा सकते हैं।
- **लीली थॉमस बनाम भारत संघ**[5] के वाद में सुप्रीम कोर्ट ने इस फैसले से राजनीति के अपराधीकरण को रोकने में बड़ी मदद मिलेगी। इस वाद में जन-प्रतिनिधि क़ानून 1951 की धारा 8(4) को करने से जन-प्रतिनिधि अदालत से सज़ा पाएगा उसकी सदस्यता तत्काल रद्द या समाप्त कर दी जाएगी और उसका वह स्थान रिक्त हो जाएगा और उस पर पुनः चुनाव होगा।

एक साथ दो सीटों से चुनाव लड़ने पर रोक

किसी भी उम्मीदवार को दोनों सीटों से जीतने पर पुनः एक सीट खाली करनी पड़ती है जिससे वहाँ पर पुनः उपचुनाव करवाने पड़ते है। इससे सरकारी धन की बर्बादी होती है तथा चुनाव आयोग का क़ीमती समय व्यर्थ होता है। इसलिए जन प्रतिनिधि अधिनियम की धारा 33(7) में संशोधन करना आवश्यक है।

- **अनिवार्य मतदान लागू हो :** अनिवार्य मतदान लागू करने से चुनावों में नागरिकों की सहभागिता बढ़ेगी तथा लोकतंत्र मज़बूत होगा। किंतु मतदान का अधिकार मौलिक अधिकार नहीं होने के कारण इसे किसी नागरिक पर थोपा नहीं जा सकता है। जबरन उस पर इसे थोपने से उसकी स्वेच्छा, स्वतंत्रता का हनन भी होगा।
- **राइट टू रिकॉल लोकतंत्र के लिए खतरा :** राइट टू रिकॉल लोकतंत्र के लिए ख़तरा है क्योंकि बार बार पद छोड़ने से वापस चुनाव कराने पर समय व धन दोनों की बर्बादी होती है। लेकिन इसके अभाव में सांसद, विधायक एक बार चुनाव जीतने के बाद अपने निर्वाचित क्षेत्र से गायब हो जाते हैं व वापस तभी दिखाई देते है जब पुनः चुनाव होते हैं। ऐसे में क्षेत्र का विकास अवरुद्ध हो जाता है।

- **नोटा को और मज़बूती मिले :** नोटा के विकल्प से चुनने के अधिकर को बल मिलेगा राजनीतिक दल चुनावों में ऐसे उम्मीदवारों को टिकट देंगे जो जनता के भरोसेमंद तथा लोकप्रिय होंगे।
- **अपराधियों के चुनाव लड़ने पर लगे रोक :** जिन उम्मीदवारों के ख़िलाफ़ न्यायालय में आरोप पत्र दाख़िल हो चुके हैं उन्हें चुनाव लड़ने से रोका जा सकता है। लेकिन इस प्रावधान पर सरकार ने तर्क दिया है कि किसी भी उम्मीदवार को ग़लतफ़हमी के कारण जेल में डाल दिया जाना काफ़ी सरल है। इस तरह से किसी को चुनाव लड़ने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिए।
- **चुनावों में चंदे तथा कार्पोरेट फंडिग पर लगे रोक :** राजनीतिक दलों को चंदा जमा कराने वाले व्यक्तियों के नाम तथा राजनीतिक दलों के खातों का अंकेक्षण कर इनकी रिपोर्ट सार्वजनिक किया जाए, जिससे इस तरह के चंदों की फंडिग को रोका जा सकता है नहीं तो ऐसा पैसा देने वाला व्यक्ति यह ज़रूर चाहेगा कि उन्हें राजनीतिक दल चुनाव जीतने पर फेवर दे तथा वे किसी-न-किसी तरह से उसका लाभ उठाना चाहेगा। सरकार में इस प्रकार भ्रष्टाचार बढ़ेगा तथा ऐसे लोग लोकतंत्र पर हावी हो जाएँगे। इसलिए ज़रूरी है कि राजनीतिक पार्टियों के खाते सार्वजनिक हों और राजनीतिक चंदे देने वाले तथा लेने वालों के नाम उजागर हों। 2000 से ज़्यादा का चंदा गुप्त न हो। कूपन देकर चंदे पर भी पूरा ब्यौरा देना होगा। हारने वालों को आयकर में छूट न मिले।
- **पेड न्यूज़ पर पाबंदी :** पैसे देकर किसी उम्मीदवार के पक्ष में ख़बर छापना पेड न्यूज कहलाती है किसी व्यक्ति को फ़ायदा या नुकसान पहुँचाने के लिए ख़बर छापना या दिखाना अपराध से कम नहीं है ऐसी ख़बर लोकतंत्र के लिए घातक होती है। वर्ष 2009 में बड़े पैमाने पर पेड न्यूज के मामले सामने आए तथा इन्हें लोकतंत्र के लिए घातक माना गया तथा 2014 में इसे पूर्णतया प्रतिबंधित किया गया है।
- **दल-बदल कानून लागू :** 8वें लोक सभा चुनावों के बाद राजीव गाँधी सरकार द्वारा 24 जनवरी, 1980 को 52वाँ संविधान संशोधन करके दल-बदल क़ानून अस्तित्व में लाया गया। इसके जरिये अनुच्छेद 101, 102, 190 और 191 में बदलाव किया गया। संविधान में 10वीं अनुसूची जोड़ी गई और इसी 10वीं अनुसूची को दल-बदल क़ानून के तौर पर जाना जाता है। कोई सदस्य सदन में पार्टी के व्हीप के विरुद्ध जाकर मतदान करता है तो उसकी सदस्यता चली जाएगी। कोई सांसद या विधायक अपनी पार्टी को छोड़ कर दूसरी पार्टी में जानबूझ कर सम्मिलित

हो जाता है तो भी उसकी सदस्यता चली जाएगी।

उच्च प्राथमिक सुधार

(अ) चुनाव का ख़र्च राज्य वित्त पोषण से हो।

(ब) चुनावी ख़र्च की लेखा परीक्षा (ऑडिट) भारत के नियंत्रक एवं लेखा परीक्षक के द्वारा हो।

(स) निर्वाचित सांसदों के ख़िलाफ़ भ्रष्टाचार एवं आपराधिक मामलों के आरोप फास्ट-ट्रेक कोर्ट में चलाए जाए।

- **जन प्रतिनिधि कानून, 1951 :** जनप्रतिनिधि क़ानून में व्यापक संशोधन की ज़रूरत है क्योंकि इसके प्रावधान काफ़ी पुराने हो चुके हैं। बदली हुई परिस्थितियों में इन पुराने अप्रासंगिक प्रावधानों में व्यापक बदलाव लाने की आवश्यकता है जिससे कि नए प्रावधान प्रभावी रूप से लागू हो सकें।

निष्कर्ष

हमें यह समझना चाहिए कि केवल वैधानिक प्रावधानों और निर्वाचन प्रणाली में सुधार से स्वतंत्र और मुक्त चुनाव एवं स्वस्थ राजनीतिक वातावरण के निर्माण की गारंटी नहीं दी जा सकती है। इसके लिए लोकतंत्र में मताधिकार ही सबसे बड़ा हथियार है जिसके द्वारा परिवर्तन लाया जा सकता है। वास्तव में चुनाव आयोग और उच्चतम न्यायालय ही चुनावों पर अकुंश लगवाए यह भी ठीक नहीं। अब तो हम स्वयं भी मताधिकार के जरिये परिवर्तन ला सकते हैं तथा सरकार व राजनीतिक पार्टियों को सबक सिखा सकते हैं। जो लोग वर्षों से विधायिका में बैठकर कुछ नहीं कर पाए तथा जो जेलों में बंद रहते हुए चुनाव जीत जाते है, ऐसे लोगों को यह दिखाने का मौका प्रत्येक नागरिक के पास है कि जो धर्म, संप्रदाय, जाति के नाम पर वर्षों से हमे मूर्ख बना रहे, उन्हें नकार कर अच्छे पढ़े-लिखे लोगों को चुने जो आगे विधायिका में जाकर उचित क़ानून व संशोधन करके सुदृढ़ लोकतंत्र की फिर से नींव रख सके। **''किसी के भरोसे रहने से अच्छा है कि हम स्वयं पहल करके दूसरों की उम्मीद जगाएँ और यह संभव है सिर्फ लोकतंत्र में।''**

सुझाव

- आधार कार्ड के जरिये व फिंगर प्रिंट, रेटिना की पुष्टि के बाद ही मतदान करने की अनुमति दी जाए जिससे अवैध मतदान को रोका जा सकता है।
- दल-बदल क़ानून पर विधानसभा अध्यक्ष या लोक सभा अध्यक्ष की बजाए निर्वाचन आयोग निर्णय ले।

- किसी निर्वाचित विधायक या सांसद की मृत्यु, त्याग-पत्र या आकस्मिक रिक्ति होने पर द्वितीय सर्वाधिक मत प्राप्त व्यक्ति को उसके स्थान पर निर्वाचित घोषित किया जाए और वह शेष अवधि तक उस दायित्व का निवर्हन करे इससे उप-चुनावों का ख़र्चा व समय बचेगा।
- एक उम्मीदवार के एक साथ दो सीटों पर चुनाव लड़ने पर रोक लगाई जाए।
- अनिवार्य मतदान को लागू किया जाए तभी नोटा प्रभावशाली हथियार बन पाएगा
- ऑन-लाइन मतदान पर विचार किया जाए।
- चुनावों में चंदे पर तथा कॉरपोरेट फंडिग पर रोक लगाई जाए।

❑

संदर्भ

1. भारत का संविधान (डॉ. पांडेय) संस्करण 44
2. राज्यसभा न्यूज चैनल (RSTV) कार्यक्रम-नजरिया (29 अप्रैल, 2013) सरोकार (7 अक्टूबर, 2013)
3. भारतीय निर्वाचन आयोग डॉट कॉम
4. राजस्थान पत्रिका (पत्रिकायन) 28 फरवरी, 2017)
5. चुनाव सुधार (हिंदी में) विकिपीडिया
6. समय साक्ष्य (22 मार्च 2016)
7. अपनी अपनी डगर (भारतीय चुनाव सुधार शोध, 2009)
8. अब चुनाव सुधार की ओर मोदी सरकार (प्रदीप ठाकुर) मई, 2014
9. प्रभात ख़बर डॉट कॉम
10. मनोज चंद्रवाल (आर्टिकल 29 जुलाई, 2016)
11. तहलका हिंदी डॉट कॉम
1. (ए.आई.आर. 1975, एस.सी. 2299)
2. (ए.आई.आर. 1978, एस.सी. 851)
3. (ए.आई.आर. 1997, एस.सी. 2814)
4. (ए.आई.आर. 2003, एस.सी. 3057)
5. (ए.आई.आर. 2013, 75 एस.सी.सी. 653

डॉ. प्रीति चहल

भारत में चुनाव आयोग के समक्ष चुनौतियाँ

भारत विश्व का विशालतम प्रजातांत्रिक देश है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे देश में प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली अपनाई गई और इसके अंतर्गत शासन की सुचारू व्यवस्था के लिए संसदीय प्रणाली को क्रियान्वित किया गया। संसदीय शासन प्रणाली में शासन चलाने वाले प्रतिनिधियों की नियुक्ति चुनावों के आधार पर ही होती है। चूँकि भारत की जनसंख्या बहुत अधिक थी, इसलिए चुनावों के लिए गुप्त मतदान की प्रणाली का चयन किया गया। हमारे देश में जनता के द्वारा जनता के लिए जनता में से प्रतिनिधि चुने जाते हैं। इसके लिए स्वतंत्र, निष्पक्ष चुनाव आयोजित किए जाते हैं जिसके लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 324 से 329 में चुनाव आयोग की स्थापना की गई है जिसका कार्य चुनाव का पर्यवेक्षण, निदेशन और नियंत्रण कर भारत में चुनाव संपन्न कराना है।

भारत में चुनाव आयोग को संवैधानिक दर्ज़ा प्रदान किया गया है। चुनाव आयोग बिना किसी सरकारी दबाव के स्वतंत्र निष्पक्ष होकर कार्य करे, इसलिए उसे स्वतंत्रता प्रदान की गई है। चुनाव आयोग का कार्य भारत में लोक सभा और विधान सभा के चुनाव निष्पक्ष रूप से कराना है। संपूर्ण भारत क्षेत्र में चुनाव कराना चुनाव आयोग के लिए एक गंभीर चुनौती है क्योंकि भारत विभिन्न जाति, धर्म और भाषा में बँटा हुआ है। भारत में हर चार क़दम पर जाति, धर्म, भाषा, बोली और रहन-सहन में परिवर्तन आ जाता है। भारत में एक समय पर एक ही जगह पर अनेक सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक असमानता देखने को मिलती है। इतनी विविधता वाले देश में चुनाव आयोग के द्वारा स्वतंत्र, निष्पक्ष और निर्भिक चुनाव कराना एक विकट समस्या है।

हमारे देश में सीधे जनता संवैधानिक मुखिया, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, राज्यपाल को नहीं चुनती है बल्कि जनता के चुने हुए जन-प्रतिनिधि उन्हें चुनते हैं इस प्रकार हमारे

देश में प्रतिनिधि लोकतंत्र अथवा अप्रत्यक्ष लोकतंत्र है जहाँ पर जन-भागीदारी के आधार पर सार्वजनिक मामलों में आम जन नागरिकों की सक्रिय भूमिका रहती है।

चुनाव लोकतांत्रिक शासन का आधार है। स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव व्यवस्था लोकतंत्र को स्थायित्व और परिपक्वता प्रदान करती है। काफ़ी समय से देश में चुनाव सुधारों की माँग की जाती रही है। चुनाव के दौरान अपनाए जाने वाले भ्रष्ट तरीक़ों को समाप्त करने का प्रश्न सरकार के समक्ष काफ़ी समय से विचाराधी रहा है। हमारे देश में चुनाव सुधारों की अत्यधिक आवश्यकता है जिसके लिए सर्वप्रथम प्रत्येक व्यक्ति के लिए चुनाव में मतदान अनिवार्य होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति मताधिकार का प्रयोग करे इसके लिए ज़रूरी है कि बहुत छोटे-छोटे पोलिंग बूथ अपनाए जाएँ ताकि लोगों को ज़्यादा आवागमन पर ख़र्च न करना पड़े और उनके व्यापार, व्यवसाय कार्य में बाधा न पहुँचे।

चुनाव आयोग अपने नियंत्रण, निदेशन, पर्यवेक्षण में स्वतंत्र, निष्पक्ष, निर्भीक, बेखौफ चुनाव संपन्न कराए, परंतु चुनाव आयोग के समक्ष चुनाव कराते समय काले धन का प्रयोग, सरकारी तंत्र का दुरुपयोग, फर्जी मतदान, मतदाता सूची में हेरफेर, बलपूर्वक मतदान, धन बाहुबल के आधार पर वोटिंग आदि समस्याएँ हैं जिनका सामना चुनाव आयोग को करना पड़ता है।

चुनाव में काले धन का अत्यधिक प्रयोग किया जाता है और निर्धारित सीमा से अधिक धन चुनाव में ख़र्च किया जाता है। जिसके कारण मतदाता प्रभावित होते हैं और दोषपूर्ण वोटिंग होती है। इसके लिए ज़रूरी है कि शासकीय ख़र्चे से चुनाव संपन्न कराए जाएँ। सरकार के द्वारा ही चुनाव साधन और सामग्री प्रदान की जाए। अति आधुनिक साधनों का प्रयोग चुनाव में किया जाए।

हमारे देश में प्रत्येक व्यक्ति को विधि के समक्ष समता और समानता का मूल अधिकार दिया गया है। लेकिन प्रत्येक व्यक्ति के वोट की क़ीमत एक-सी है। चाहे वह व्यक्ति अशिक्षित हो, अर्द्धशिक्षित हो, अल्प शिक्षित हो, पूर्ण शिक्षित हो सभी के वोट की क़ीमत एक जैसी है।

प्रसिद्ध विचारक जे.एस. गिल ने भी अपनी पुस्तक 'On Liberty' में लिखा है कि प्रत्येक व्यक्ति के वोट की क़ीमत उसकी शिक्षा के आधार पर होनी चाहिए। यही कारण है कि हमारे यहाँ अशिक्षित, कम पढ़े-लिखे, दागी, गुंडे किस्म के व्यक्ति चुन कर आ जाते हैं। प्रणाली से पूर्णतः वाकिफ नहीं होते हैं और उनके धन-बल के प्रयोग में आ जाते हैं।

हमारी प्रजातांत्रिक व्यवस्था में हम जिस प्रकार चुन कर भेजते हैं उसी प्रकार हमें चुने हुए व्यक्ति को वापिस बुलाने का चुनावी अधिकार प्राप्त होना चाहिए। जब हम

किसी व्यक्ति को चुनते हैं और वह जिन वायदों, नीति, क्रियाकलापों और आश्वासनों के साथ जनता से वोट प्राप्त करते हैं और उस क्षेत्र विशेष की जनता उसके एक साल बाद किए गए कार्य से ख़ुश नहीं हो तो चुने जाने के एक साल बाद उस क्षेत्र विशेष की जनता को उस व्यक्ति को वापिस बुलाए जाने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए। परंतु यह अधिकार केवल उन्हीं व्यक्तियों को प्राप्त होना चाहिए जिन्होंने उसे वोट दिया है।

अगर उपरोक्त लिखित व्यवस्था अपनाई जाती है तो जन-प्रतिनिधि जनता से किए गए वायदों के अनुसार कार्य करेंगे और उन्हें सदा यह भय बना रहेगा कि उन्होंने जनता के विपरीत कार्य किया तो जनता उन्हें वापिस भी बुला सकती है।

चुनाव में चुने जाने के बाद जन-प्रतिनिधियों को क्षेत्र विकास के लिए करोड़ों रुपयों की शासकीय धनराशि प्रदान की जाती है जिसका प्रायः अपने भाई-भतीजों का ठेका निलामी आदि कार्य देकर दुरुपयोग किया जाता है इसके लिए ज़रूरी है कि चुने जाने के बाद जो शासकीय निधि जन-प्रतिनिधियों को प्रदान की जाती है उसमें से किए गए कार्य एवं उस पर ख़र्च किया गया प्रत्येक विवरण जनता के समक्ष अपनी व्यक्तिगत सोशल नेटवर्किंग साइड में दर्शाए ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपने प्रतिनिधि के द्वारा किए गए कार्यों को भली-भाँति जाँच सके।

चुनाव में धन, सरकारी पद और लोगों के समय की बर्बादी न हो इसके लिए ज़रूरी है कि लोक सभा और विधान सभा के साथ स्थानीय निकायों के भी चुनाव कराए जाएँ। इससे धन का दुरुपयोग रुकेगा और लोग रुचिपूर्वक चुनाव में भाग लेंगे। चुनाव एक बोझ नहीं बल्कि संपूर्ण जन-प्रतिनिधियों के चुनाव के लिए होने वाला एक शासकीय समारोह लगेगा।

इसके साथ ही चुनाव के पूर्व संपत्ति का विवरण, परिवार के सदस्यों की चल-अचल संपत्ति आदि का विवरण उसमें ही प्रस्तुत किया जाए और चुनाव जीतने के बाद प्रतिवर्ष संपत्ति में हुई बढ़ोत्तरी का विवरण प्रस्तुत किया जाए, चुनाव आयोग को विशेषतया संपत्ति के विवरण के मामले मे सख़्ती अपनानी होगी जिससे भ्रष्टाचार पर नियंत्रण किया जा सके और आम जनता का कल्याण हो सके।

भारत में जाति, धर्म, क्षेत्र और वर्ग के आधार पर वोट बटोरने की परंपरा बरसों से चली आ रही है। चुनाव के वक़्त दल-बदल, चुनाव में महाकवियों की दबंगई और आपराधिक छवि वाले नेताओं की चुनावों में भाग लेना और सिर्फ़ सनक के लिए चुनाव लड़ने वाले निर्दलीय उम्मीदवारों की भीड़, कुल मिला कर हमें इस प्रकार की चुनावी प्रक्रिया की तस्वीर देखने को मिलती है। चुनाव में पैसा पानी की तरह बहाया जाता है। यह पूरी प्रक्रिया ऐसे जन-प्रतिनिधि को चुनने के लिए होती है जो समाज और

शासन में सामंजस्य बैठा कर जनहित में कार्य करे और उसकी जवाबदेही हो, लेकिन जब प्रक्रिया मे ही असंतुलन होगा तो आगे की व्यवस्था कैसे संतुलित और व्यावहारिक हो पाएगी?

यह गनीमत है कि ऐसे हालात के बावजूद अभी लोगों का भरोसा लोकतांत्रिक व्यवस्था से डिगा नहीं है। सत्ता परिवर्तन का इससे बेहतर कोई और विकल्प है भी नहीं। फौजी तानाशाही के दुष्प्रभाव को वे पड़ोसी देशों में देख चुके हैं और इतने परिपक्व तो भारतीय लोग निश्चित रूप से हैं कि इस तरह की स्थितियाँ अपने यहाँ न बनने दें।

अभी हाल ही में चुनाव आयोग ने केंद्र सरकार से क़ानून में ऐसे संशोधन की सिफ़ारिश की है जिससे कोई व्यक्ति एक साथ दो सीटों पर चुनाव नहीं लड़ सके या ऐसे क़ानूनी प्रावधान किए जाएँ जिससे कोई उम्मीदवार यदि दो सीटों पर चुनाव लड़ कर दोनों सीटें जीत जाए और फिर उसे क़ानूनन एक सीट खाली करनी पड़े, तो ऐसी स्थिति में वह खाली की जा रही सीट पर होने वाले उप-चुनाव के लिए 'उचित' धनराशि सरकारी ख़ज़ाने में जमा कराए।

निर्वाचन प्रणाली में सुधार को लेकर विरोध और उदासीनता की स्थिति से देश के पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त एस.वाई. कुरैशी का भी कहना है कि चुनाव सुधार के सुझाव पर एक्शन नहीं होता। सरकार से एक ही जवाब मिलता है कि आम सहमति नहीं बन पा रही है। अन्ना हज़ारे उसके सहयोगियों ने चुनाव आयोग से मुलाक़ात की और ई.वी.एम. मशीन में 'Right to Reject' के विकल्प को शामिल करने की माँग की है। संसद के आगामी सत्र में चुनाव सुधार का मुद्दा उठाए जाने की माँग करते हुए निर्वाचन आयुक्त ने कहा कि 'ख़ारिज करने के अधिकार' पर विचार करने का वक़्त आ गया है। चुनाव सुधारों को लेकर चल रही बहस के बीच भाजपा नेता लालकृष्ण आडवाणी ने अनिवार्य मतदान की पैरवी करते हुए कहा कि इस लक्ष्य को हासिल करना असंभव नहीं है।

चुनाव सुधारों पर आम सहमति बनाने के प्रयास में सरकार जल्द ही सर्वदलीय बैठक बुलाने की योजना बना रही है, जिसमें राजनीति की अपराध से मुक्ति, ख़ारिज करने का अधिकार और चुनाव में सरकारी धन के इस्तेमाल जैसे मुद्दों पर चर्चा करने की कोशिश होगी।

❑

डॉ. पूनम माटिया

चुनाव व्यवस्था और लोकतांत्रिक कसावट

त्रेता हो या द्वापर... काल कोई भी रहा हो, देव हों, दानव हों या फिर मानव ...चुनाव तो चुनाव ही हैं -- हमेशा से शाश्वत सत्य की भाँति जीवन धारा का अभिन्न, अविभाज्य, अविस्मरणीय अंश।

सीता का स्वयंवर, द्रौपदी का स्वयंवर या फिर उससे भी पहले नारद मुनि जी का महादेवी लक्ष्मी माँ के स्वयंवर में नारायण रूप धर के जाना। रावण और दूसरे दानवों, राक्षसों के वेश बदल कर सीता-स्वयंवर में जाने पर भी सीता उन्हें नहीं वरतीं, क्योंकि वे 'शिव-धनुष' पर प्रत्यंचा चढ़ाना तो क्या, उसे अपने अपार शक्तिबल से उठा भी नहीं पाते। द्रौपदी के स्वयंवर में प्रतिबिंब में दिखती मछली की आँख भेदना भी एक असंभव नहीं तो दुष्कर कार्य तो था ही! नारद का असली रूप पहचान नारायण का लक्ष्मी द्वारा वरन भी चुनाव प्रक्रिया की एक अभूतपूर्व घटना थी।

कहने का तात्पर्य यही कि चुनाव हमारी व्यवस्था का अविभाज्य हिस्सा रहा है जिससे समय-समय पर ये सत्यापित हुआ है कि 'चुनाव' की एक कठिन कसौटी होनी चाहिए, चुनाव एक तय सर्वमान्य, निष्पक्ष और सर्वथा खुली प्रक्रिया के तहत पूर्ण सुरक्षित माहौल में होने चाहिएँ। इन उद्धहरणों से यह भी एक निष्कर्ष निकल कर आता है कि स्त्री-जाति को अपना वर चुनने का अधिकार आरंभ से रहा है।

आज विश्वभर के जनतांत्रिक देशों में चुनाव द्वारा ही उस पार्टी या व्यक्ति-विशेष का चुनाव होता है जिनके द्वारा सरकार बनाई जाती है। देश भर को एक निश्चित अवधि के लिए एक विचारधारा के तहत संभाला जाता है। शासन की बागडोर उन्हीं के हाथों में होती है। फिर एक विपक्ष भी होता है ताकि सत्तापक्ष बेलगाम न हो जाए। अमरीका, ब्रिटेन, अन्य लोकतांत्रिक देश तथा भारत भी इसी संवैधानिक व्यवस्था को अपना कर सरकार का चुनाव और उसका गठन करते हैं। जनता यानी वोटर की भी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

भारत में चुनाव, ख़ासकर लोक सभा चुनाव एक उत्सव माना जाता है। कहने को तो लोक सभा का चुनाव पाँच वर्षों में एक बार होता है किन्तु उनत्तीस राज्यों वाले विशाल भारत देश में चुनाव आये साल किसी न किसी राज्य में होते रहते हैं। साल के अंत में गुजरात और हिमाचल में चुनाव होने हैं, हाल ही में पाँच राज्यों में चुनाव (उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब, गोवा और मणिपुर) हुए हैं। उससे पहले भी बिहार, दिल्ली और असम में चुनाव हुए बहुत समय नहीं हुआ है। कुछ ही महीनों के अंतराल पर होने वाले इन चुनावों के कारण भारत में सरकार की दृष्टि सदैव चुनावों में अपने प्रदर्शन पर टिकी रहती है। चुनाव प्रचार, प्रसार में संलग्नता और आचार-संहिता के कारण नई नीतियाँ तो बनती नहीं बल्कि देश-प्रबंधन तथा विकास के कार्य प्राथमिकता की सीढ़ी पर निचले पायदान पर ही रहते हैं, साथ ही विपक्ष भी केंद्रीय शासन को विकास में अपना सहयोग नहीं देता।

भारत में बहुदलीय व्यवस्था भी चुनाव की प्रक्रिया को जटिल व दुष्कर बनाती है। अपने-अपने राज्यों में जिन दलों से गला-काट प्रतिस्पर्धा रहती है, केंद्र में वे दल अप्रत्याशित गठबंधन में बँध जाते हैं, चुनाव नतीज़ों को ताक़ पर रख जनता की आम राय को दरकिनार कर ये गठबंधन एड़ी-चोटी का बल लगा कुछ और ही सरकार बना डालते हैं। ये विभिन्न दल राष्ट्रीय उपस्थिति या समकक्षता न भी रखते हुए 'किंग मेकर' की भूमिका निभाते हैं और चुनाव नतीज़ों को जीभ चिढ़ाते हैं। हमारे गणतंत्र की स्थिति कुछ भी कहें काफ़ी चिंताजनक है। सत्ता पक्ष और विपक्ष, दोनों ही भूल जाते हैं कि उन्हें क्यों निर्वाचित किया गया था?

चुनाव सुधार

निश्चित ही भारत बेहतर राजनीति का हक़दार है। चुनावों को अधिक-से-अधिक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष बनाने के लिए निम्नांकित चुनाव सुधार तत्काल लागू होने चाहिएँ --

1. **लोक सभा एवं विधान सभा के चुनाव एक साथ :** चुनाव सुधार की दिशा में सबसे बड़ी सफलता लोक सभा एवं विधान सभा के चुनाव एक साथ कराकर हासिल हो सकती है। इस विषय पर आम सहमति से अगर ऐसा हो पाता है तो यह भारतीय लोकतंत्र के लिए बड़ा उपयोगी क़दम सिद्ध होगा। जैसे कि ऊपर कहा गया -- देश लगातार चुनाव के माहौल में ही रहता है और इससे महत्त्वपूर्ण सुधार और फ़ैसलों में देरी हो जाती है।

हालाँकि लोकतंत्र में सरकार के गठन और जनादेश को हासिल करने के लिए चुनाव की पद्धति ही सर्वाधिक आदर्श प्रक्रिया के रूप में सर्वसम्मति से स्वीकार की गई है लेकिन इसका एक दूसरा पहलू यह भी है कि अत्यधिक चुनावों के दौर में रहने

का असर सरकार के कामकाज पर भी पड़ता है चूँकि आदर्श आचार संहिता लागू होने के बाद विकास के तमाम कार्य बाधित होते हैं। ऐसे में अगर अनुमानित तौर पर देखा जाए तो केंद्र एवं राज्यों की सरकारों के कार्यकाल का बड़ा हिस्सा आचार संहिता की वजह से प्रभावित होता है। राजनीति ऐसी हो जो निर्बाध रूप से जन-कल्याण की नीतियों को शासन के माध्यम से संचालित करे।

अतः आचार संहिता की बाधाओं को न्यूनतम करने के लिहाज़ से भी एक साथ चुनाव कराना सही प्रतीत होता है। अगर हम लोक सभा और विधान सभा के चुनाव एक साथ करा पाने में सफल होते हैं तो इससे चुनावी ख़र्चे का बोझ भी कम होगा। वर्तमान में चुनावों के दौरान ख़र्चे की अधिकता एवं ख़र्चे के बोझ का प्रश्न भी अक्सर उठता रहता है। ऐसे में चुनाव सुधार के लक्ष्य को व्यापक संदर्भों में भी देखें तो एक साथ चुनाव कराने के फ़ायदे नज़र आते हैं।

सरकार का अधिक-से-अधिक समय लोक कल्याण को समर्पित योजनाओं, नीतियों की दिशा में ख़र्च हो। इस उद्देश्य को प्राप्त करने की दिशा में जब हम सोचते हैं तो सबसे पहला विचार यह आता है कि एक साथ चुनाव कराने से इस उद्देश्य को हासिल करने में काफ़ी मदद मिल सकती है।

चंदा कहाँ से और कैसे आ रहा है : यह भी एक बड़ा सवाल है। कहीं ये किसी ग़लत तरीक़े से तो नहीं आ रहा? कहीं यह काला धन तो नहीं? चंदे में आए पैसे का हिसाब ज़रूरी है। यही वजह है कि माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी एवं माननीय वित्तमंत्री श्री अरूण जेटली जी ने राजनीतिक दलों के चंदे में पारदर्शिता को क़ायम करने के लिए दो हज़ार से ज़्यादा की राशि नक़द नहीं लिए जाने का प्रावधान किया है। पहले यह छूट 20 हज़ार तक थी।

2. **विपक्ष को भी राष्ट्रीय एजेंडा पटरी से नहीं उतारने दिया जाना चाहिए :** भाजपा ने पिछली बार यही किया और अब कांग्रेस 'जैसे को तैसा' लौटाने में कसर नहीं छोड़ना चाहती। घर में बैठकर गुस्सा जताने की बजाय हमें भी अपने सांसदों से कुछ आसान से राजनीतिक सुधार लागू करने की माँग करनी चाहिए ताकि संसद व सरकार बेहतर ढंग से काम कर सकें।
3. **तय अवधि वाली चुनाव पद्धति :** भारत को भी तय अवधि वाली चुनाव पद्धति अपना लेनी चाहिए, जैसा कि ब्रिटेन ने हाल ही में किया है और अन्य लोकतंत्रों ने बहुत पहले ही कर लिया है।
    - यह सरल-सा क़दम चुनी हुई सरकार को बिना चुनाव की चिंता किए काम करने की सहूलियत देगा। इससे हमारी शासन पद्धति की क्षमता बढ़ेगी।
    - संविधान ने पाँच वर्ष की अवधि वाले चुनावी चक्र की कल्पना की है, लेकिन

राज्य सरकारें तो पाँच साल पूरे होने के पहले ही गिरती रही हैं और इससे पाँच साल का चक्र टूट गया है। यदि सांसद-विधायकों की अवधि तय रहेगी तो वे बहुमत दल के नेता की मनमानी के बंधक नहीं बनेंगे।

4. **'रचनात्मक अविश्वास प्रस्ताव' :** मौजूदा 'अविश्वास प्रस्ताव' की जगह जर्मनी की तरह 'रचनात्मक अविश्वास प्रस्ताव' लाया जाना चाहिए। इसका मतलब है आप सरकार को तब ही गिरा सकते हैं जब आपके पास इसका कोई विकल्प हो। इससे विधायकों व सांसदों में अधिक अनुशासन आएगा और सरकार को स्थिरता मिलेगी। यदि अविश्वास प्रस्ताव से सरकार गिर गई तो सदन भंग नहीं होगा। विधायकों को नई सरकार बनाने के लिए मज़बूर किया जाएगा या फिर उन्हें राष्ट्रपति शासन का सामना करना होगा। साथ ही अविश्वास प्रस्ताव के स्थान पर उन विधायकों की ओर से अपने लिए 'विश्वास प्रस्ताव' भी आना चाहिए जिससे 'vaccum' की स्थिति न बने और सरकार बन सके तथा राजकाज आसानी से चलता रहे।

5. **जनप्रतिनिधियों को खेल संस्थाओं से दूर रखा जाना :** यदि जनप्रतिनिधि चुने जाते ही खेल संस्था से इस्तीफ़ा देने का क़ानून होता तो 'ललित गेट', 'सी.डब्ल्यू. जी' घोटाले नहीं होते।

6. **वापस बुलाने का अधिकार (Right to recall) :** वे निर्वाचित प्रतिनिधि जिनसे जनता ख़ुश या संतुष्ट नहीं है मतदान प्रक्रिया द्वारा उनकी निर्वाचिता रद्द करने का अधिकार जनता के पास होना चाहिए।
7. **चुनाव ख़र्च :** चुनाव ख़र्च हर चुनाव से पहले समसमायिक स्थितियों को ध्यान में रख कर तय किया जाना चाहिए। 15-20 साल पहले की ख़र्च-सीमा बढ़ती महँगाई के ज़माने में कहाँ तक न्यायोचित है?
8. शहर को पोस्टर से गंदा न किया जाए क्योंकि शहर को साफ़ रखना भी हम सभी की ज़िम्मेदारी है। डिजिटल इंडिया के जमाने में पोस्टर्स की जगह अधिक-से-अधिक इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों का प्रयोग होना चाहिए।
9. **ध्वनि प्रदूषण पर रोक :** लाउडस्पीकर्स इस्तेमाल की समय सीमा तय होनी चाहिए तथा शोर पर काबू। बीमारों, वृद्ध और विद्यार्थियों/परीक्षार्थियों की सुविधा का ध्यान रखते हुए ढोल-बाजों का शोर किसी भी तरह से ठीक नहीं है। ब्रिटेन में चुनाव-प्रत्याशी

अपना घोषणा-पत्र घरों के दरवाज़े के नीचे से भीतर सरका जाते हैं। भीड़, मजमा, जलूस आदि से जनता को परेशान नहीं करते साथ ही ट्रैफिक जाम और शोर आदि की समस्या से जनता को दो-चार नहीं होना पड़ता।

10. **अपराधियों को चुनाव की पूरी प्रक्रिया से बाहर रखा जाए :** अपराधियों को प्रत्याशी बनने या चुनाव प्रचार-प्रसार में सक्रिय भूमिका निभाने से दूर रखा जाए क्योंकि क़ानून बनाने वाले क़ानून तोड़ने वाले नहीं होने चाहिए।
11. **नामांकन प्रक्रिया का सरलीकरण एवं पारदर्शी होना :** नामांकन प्रक्रिया को भी सरल और पारदर्शी बनाने की महती आवश्यकता है ताकि आम और ग़रीब व्यक्ति भी बिना किसी व्यवधान के चुनाव लड़ सके। इसके लिए आवश्यक है --
    - नामांकन प्रक्रिया में लगने वाले प्रपत्रों तथा अन्य औपचारिकताओं का स्पष्ट उल्लेख नामांकन फॉर्म के साथ संलग्न हो।
    - नामांकन प्रक्रिया में लगने वाले प्रपत्रों तथा अन्य औपचारिकताओं का स्पष्ट उल्लेख नामांकन कार्यालय के बाहर सूचना-पट पर भी चस्पा हो।
    - नामांकन फॉर्म की भाषा सरल व स्पष्ट होनी चाहिए।
    - अनापत्ति प्रमाण-पत्र देने वाले विभागों के लिए भी स्पष्ट व सख़्त निर्देश जारी हों ताकि ये विभाग बिना किसी विलंब के प्रत्याशियों का अनापत्ति प्रमाण-पत्र जारी कर सकें।
12. **प्रलोभन देने पर रोक :** चुनावी वायदों में मतदाताओं को किसी भी प्रकार का प्रलोभन देना एक अपराध माना जाना चाहिए। चुनाव जीतने के बाद लैपटॉप देने का वायदा या फिर लैपटॉप, मोबाइल, टी.वी. आदि बाँटना एक तरह का प्रलोभन ही है क्योंकि सरकार का काम केवल नीतियाँ बनाने, उन्हें सुचारू रूप से कार्यान्वित करना और उनका ठीक प्रकार से कार्यान्वन है, मुफ़्त कुछ बाँटना नहीं।
13. **चुनाव आयोग को अधिकार :** चुनाव आयोग एक स्वतंत्र संस्था है तो फिर उन्हें किसी पार्टी की सदस्यता रद्द करने या किसी स्थिति में सज़ा देने का अधिकार क्यों नहीं है? यह संस्था एक 'टूथलेस' संस्था की तरह प्रतीत होती है और केवल 'advisory' जारी करने वाली संस्थाओं की तरह दिखाई देती है जबकि बिना अधिकारों के कोई भी संस्था पंगु हो जाती है।
14. **अभ्यर्थियों की जमानत राशि बढ़ाने की ज़रूरत :** आयोग ने जमानत राशि को बढ़ाकर लोक सभा निर्वाचन की दशा में 20,000 रुपए और विधान सभा निर्वाचन की दशा में 10,000 रुपए करने का प्रस्ताव किया था तथापि सरकार (तत्कालीन) से इस प्रस्ताव के बारे में कोई प्रत्युत्तर या रिस्पोंस प्राप्त नहीं हुआ था। ...आयोग

की यह भी राय है कि आयोग को लोक सभा के प्रत्येक साधारण निर्वाचन से पूर्व जमानत राशि विहित करने के लिए अधिकृत करने के लिए उपर्युक्त धारा 34 को समुचित रूप से संशोधित किया जाना चाहिए। (टी.एस. कृष्णमूर्ति निर्वाचन आयोग (भारत के प्रमुख निर्वाचन आयुक्त, 2004)

चुनाव को लेकर हमें समझना होगा कि चुनाव 'उद्देश्य' नहीं है बल्कि यह जनादेश हासिल करने का लोकतांत्रिक माध्यम है। अब सवाल है कि आखिर 'उद्देश्य' क्या है? अगर इस सवाल पर विचार करें तो निर्विवाद रूप से एक तथ्य उभरता है कि चुनाव के माध्यम से मिले जनादेश के बाद गठित सरकारें अपनी नीतियों से लोक-कल्याण की योजनाओं को कार्यान्वित कर धरातल तक अधिक-से-अधिक पहुँचाएँ -- ये उद्देश्य है और विपक्ष उनकी ग़लतियों को जनता का पक्ष समझते हुए उजागर करे तथा जनता के हित में समाधान निकालने में मदद करे।

आखिर में सफल लोकतंत्र तो वही है, जो लोगों की ज़रूरतों के मुताबिक विकसित होता रहे। सांसदों और मतदाता के बीच की जगह समाप्त हो और वह आम जनता की पहुँच में हो, वह स्वयं को देवता और जनमानस को कीड़ा-मकौड़ा न समझे -- वही असली जनतंत्र है। अब वक़्त आ गया है कि हम सांसदों-विधायकों की आँखों में आँखें डाल कर उन्हें याद दिलाएँ कि हमने उन्हें क्यों चुना है। उनसे काम करने की अपेक्षा है, लोगों का पैसा व वक़्त बरबाद करने की नहीं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि वे जन-समर्थन को यूँ ही मानकर न चलें।

❑

सन्तोष खन्ना

लोक सभा और विधान सभाओं के चुनाव साथ-साथ हों

तत्कालीन महामहिम राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी ने कहा था, ''वर्ष भर में देश में कहीं-न-कहीं चुनाव होने से आदर्श आचार संहिता लागू हो जाती है। इस दौरान सरकार की सामान्य गतिविधियाँ भी रोक देनी पड़ती हैं। इस विषय पर सभी राजनीतिक दलों को सोच-विचार कर कोई हल निकालना चाहिए। इस संबंध में चुनाव आयोग भी अपने सुझाव दे सकता है। एक ही समय में चुनाव करने से देश को बहुत लाभ होगा।''

भारत में पिछले 70 वर्ष से लोकतंत्र की जड़ें क्रमशः मज़बूत हुई हैं, इसके लिए विश्व के अनेक देश भारत को हसरत की निगाह से देखते हैं और वह हमेशा हैरान होते हैं कि भारत जैसे विशाल भौगोलिक आकार वाले और वर्तमान में 130 करोड़ की अत्यधिक जनसंख्या वाले देश ने कैसे यह करिश्मा सच कर दिखाया है। इस समय तक देश में अनेक आम चुनाव और राज्यों के अनेक चुनाव हो चुके हैं और प्रायः हर चुनाव शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न होता है। इधर कुछ वर्षों से चुनावों में एक अभूतपूर्व उपलब्धि भी देखने में आ रही है कि मतदान करने वाले मतदाताओं के प्रतिशत में वृद्धि होती जा रही है अर्थात् मतदाताओं में राजनैतिक चेतना बढ़ रही है। यद्यपि अभी भी अनेक मतदाता धर्म, जाति आदि के आधार पर मतदान करते देखे गए हैं किंतु आम चुनावों में अनेक ऐसे अभूतपूर्व अवसर आए जब मतदाताओं ने धर्म, जाति, संप्रदाय, लिंग आदि आधारों से ऊपर उठ कर मतदान कर देश में राजनीति को नई दिशा दी, यह बात इंदिरा गाँधी, राजीव गाँधी और अब श्री नरेंद्र मोदी को आम चुनावों में अभूतपूर्व बहुमत देकर साबित की गई है। इन उपलब्धियों के होते हुए भी यह नहीं कहा जा सकता कि लोकतंत्र को और अधिक मज़बूत बनाने के लिए चुनाव सुधार करने की आवश्यता नहीं है।

यह सभी जानते हैं कि चुनावों में भुजबल और धनबल बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं। इसके साथ ही देश में राजनीतिक की संख्या इतनी अधिक है जिससे देश में हमेशा तनाव का माहौल बना रहता है। इन राजनीतिक दलों की प्रचुरता भिन्न-भिन्न विचारधारा के कारण नहीं, बल्कि सत्ता मोह के कारण अधिक है। देश में ऐसे विरल राजनीतिक दल हैं जो मूल दल के रूप में अस्तित्व में हैं; कांग्रेस हो या वाम दल या समाजवादी दल, सभी दलों के कई-कई टुकड़े हुए हैं जिसके कारण भी देश में अनेक राजनीतिक दल बने हैं जो चुनावों में भाग लेते हैं।

वर्ष 2017 के आरंभ में तत्कालीन मुख्य चुनाव आयुक्त श्री नसीम जैदी ने इस तथ्य को रेखांकित किया है कि देश में राजनीतिक दलों की प्रचुरता है जिससे काले धन के प्रयोग की संभावनाएँ भी बढ़ जाती हैं। अपने एक बयान में उन्होंने बताया कि उन्होंने आयकर विभाग को कहा है कि वह उन राजनीतिक दलों को आयकर से छूट न दें जो कभी चुनाव नहीं लड़ते। ऐसे राजनीतिक दल केवल नाम के ही हैं जो केवल क़ानूनी छूट से लाभ उठाने के लिए बनाए जाते हैं। इस समय देश में 1900 से अधिक पंजीकृत राजनीतिक दल हैं और हर दो दिन बाद एक नया राजनीतिक दल पंजीकरण कराता है जिनमें से कई राजनीतिक दल केवल काला धन उड़ाने के लिए अस्तित्व में आते हैं, क्योंकि हर वर्ष 2014-15 में केवल 400 राजनीतिक दलों ने ही चुनाव में भाग लिया था। चुनाव आयोग ने सभी राज्यों के मुख्य चुनाव अधिकारियों से कहा कि वे ऐसे राजनीतिक दलों के बारे में चुनाव आयोग को सूचित करें।

मुख्य चुनाव आयुक्त ने यह भी कहा कि इस समय चुनाव सुधार किए जाने की बहुत आवश्यकता है। चुनाव आयोग ने विधि मंत्रालय को लिख कर चुनाव सुधार करने के सुझाव दिए हैं जिससे चुनावों में धन-बल के प्रयोग पर अंकुश लगाने, राजनीतिक दलों को मिलने वाली धनराशि के संबंध में पारदर्शिता लाने, राजनीति को अपराधमुक्त करने तथा पैसे दे कर समाचार देने आदि पर पाबंदी लाने के सुझाव शामिल हैं।

उधर प्रधानमंत्री कई बार कह चुके हैं कि लोक सभा और राज्य विधान सभाओं के चुनाव साथ-साथ कराए जाने का प्रावधान किया जाना चाहिए। चुनाव सुधारों में इस सुधार का लाना बहुत ज़रूरी है क्योंकि लोक सभा और राज्यों के अलग-अलग समय पर होने के कारण हर समय चुनावी तनाव बना रहता है जिससे नीतियों के कार्यान्वयन में भी कठिनाई आती है। वर्ष 2017 के आरंभ में देश के पाँच राज्यों के चुनाव हुए हैं और प्रधानमंत्री के 9 नवंबर, 2016 के नोटबंदी के फैसले को लेकर विपक्षी दल परेशान हैं कि यह फैसला इन चुनावों को ध्यान में रखकर किया गया है। अगर इन पाँचों राज्यों के चुनावों के बाद नोटबंदी का फैसला लिया जाता, तब

तक अन्य कुछ राज्यों में भी चुनाव का समय हो सकता था। अतः लोक सभा, विधान सभा चुनाव एक साथ हों, जिससे देश का बहुमूल्य राजस्व और जनशक्ति भी बचेगी और राजनीति में स्थायित्व भी आएगा।

भारत में एक साथ चुनाव कराने की माँग वर्ष 2009 में लालकृष्ण आडवाणी ने रखी थी। उनकी बात का समर्थन पूर्व चुनाव आयुक्त एच.एस. ब्रह्मा ने भी किया था। उनका मानना था कि इससे सरकार के ख़र्चे में कमी आएगी और प्रशासनिक कार्यकुशलता में भी बढ़ोत्तरी आएगी। भारत के पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त एस.वाई. कुरैशी ने भी कहा है कि बार-बार चुनाव कराने से सरकार का सामान्य कामकाज ठहर जाता है। भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह भी कह चुके हैं कि पार्टी का मत है कि लोक सभा और विधान सभा के चुनाव साथ-साथ हों। कुछेक क्षेत्रीय राजनीतिक दलों को छोड़कर अधिकांश राजनीतिक दल भी एक साथ चुनावों के पक्ष में हैं।

प्रधानमंत्री ने विधि मंत्रालय से इस मुद्दे पर विचार कर यह बताने को कहा है कि इन चुनावों को एक साथ कैसे करवाया जा सकता है क्योंकि जब भी लोक सभा और विधान सभाओं के चुनाव एक ही समय पर करवाने का फैसला लिया जाएगा, कुछ विधान सभाओं की या तो अवधि घटानी पड़ेगी अथवा बढ़ानी पड़ेगी। किंतु चुनावों को एक ही समय पर करवाने के लिए यह कड़वा घूँट तो पीना ही पड़ेगा। कुछ फैसले जनहित और राष्ट्रहित को ध्यान में रखकर करने ही पड़ते हैं क्योंकि अलग-अलग समय पर चुनाव करवाने से जो नुकसान हो रहा है उससे देश को बचाना ही होगा। अलग-अलग चुनाव होने से जो हानि हो रही है, उसके संबंध में जो बातें कही जा रही हैं वह इस प्रकार हैं --

लोक सभा और विधान सभाओं के चुनाव अलग-अलग होने से देश को चुनावों पर बहुत धन व्यय करना पड़ता है जो साथ-साथ चुनावों से बच सकता है जबकि उस धन को अन्य रचनात्मक कार्यों पर ख़र्च किया जा सकता है। प्रधानमंत्री ने लोक सभा में धन्यवाद प्रस्ताव पर बहस के दौरान बोलते हुए कहा था कि ''वर्ष 2009 में हुए लोक सभा चुनावों पर 1100 करोड़ रुपए ख़र्च हुए जबकि 2014 के लोक सभा चुनावों पर ख़र्च बढ़कर 4000 करोड़ रुपए हो गया है उन्होंने यह भी कहा कि चुनाव कराने के लिए लगभग एक करोड़ कर्मचारियों की आवश्यकता होती है जिसमें से बहुत सारे अध्यापक होते हैं जिससे देश में शिक्षा पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा, चुनाव के लिए काफ़ी संख्या में सुरक्षा बल भी लगाने पड़ते हैं, जबकि उनकी सीमाओं पर ज़रूरत होती है। इसके अलावा, प्रत्याशियों और राजनीतिक दलों को चुनावों पर भारी व्यय करना पड़ता है। सामान्य तौर पर प्रत्याशी और राजनीतिक दल निर्धारित सीमा से अधिक व्यय करते हैं जिसके कारण चुनाव में काले धन की भूमिका भी बढ़ जाती है।

एक सम्मेलन में भूतपूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त डॉ. एस.वाई. कुरैशी ने कहा था कि ''चुनाव देश में काले धन का आधारभूत कारण बन रहे हैं; चुनाव जीतने के बाद राजनीतिज्ञ नौकरशाहों का गठजोड़ चुनाव में ख़र्च की गई धनराशि को वसूलने में लग जाता है।'' एक साक्षात्कार में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने भी कहा था कि ''यदि देश में काले धन पर अंकुश लगाना है तो चुनाव सुधार किए जाने होंगे। इसके लिए केवल प्रधानमंत्री की ही भूमिका नहीं है बल्कि चुनाव सुधारों के लिए राजनीतिक दलों के साथ विचार-विमर्श करना होगा।''

लोक सभा चुनाव और राज्य के विधान सभाओं के चुनाव एक ही समय में करवाने की अवधारणा देश के लिए कोई नई नहीं है। 26 जनवरी, 1950 को संविधान लागू होने के पश्चात् वर्ष 1952 में देश में पहले आम चुनाव और राज्य विधान सभाओं के चुनाव एक ही समय में कराए गए थे। उसके पश्चात् वर्ष 1957, 1962 और 1967 के आम चुनाव एक ही समय मे कराए गए थे। किंतु चौथी लोक सभा के बाद जब 1971 में चुनाव हुए तो प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने कई राज्य विधान सभाओं को भंग कर दिया था तब से साथ-साथ चुनाव कराने का सिलसिला टूट गया था।

आदर्श आचार संहिता

प्रत्येक चुनाव में चुनाव की प्रक्रिया प्रारंभ होने से लेकर चुनाव की प्रक्रिया पूरी होने तक चुनाव आयोग आदर्श आचार संहिता लागू कर देता है। इस संहिता के अंतर्गत प्रत्याशियों, राजनीतिक दलों और सरकारों को कुछ नियमों का पालन करना होता है। यह नियम समय-समय पर राजनीतिक दलों के साथ विचार-विमर्श करके ही बनाए गए हैं। इसके अंतर्गत सरकारें भी न तो कोई महत्त्वपूर्ण नीतिगत फैसले ले सकती हैं और न ही उन्हें लागू कर पाती है। लोक सभा के चुनावों के दौरान आदर्श आचार संहिता पूरे देश में लागू रहती है और राज्य विधान सभाओं के चुनावों के दौरान यह संहिता चुनावी राज्यों में लागू रहती है। आदर्श चुनाव संहिता के प्रभाव के संबंध में संसद की एक स्थाई समिति ने अपने 79वें प्रतिवेदन में कहा था... ''चुनावी क्षेत्रों में आदर्श चुनाव संहिता लागू हो जाने के बाद संघ और राज्य सरकारों के सभी विकास कार्य और गतिविधियों पर रोक लग जाती है, यहाँ तक कि इससे सामान्य प्रशासन में भी बाधा पड़ती है। देश में बार-बार चुनाव होने से लंबे समय तक आदर्श संहिता लागू रहती है जिससे प्रायः सरकार की नीतियाँ पंगू हो जाती हैं और शासन-प्रशासन की गतिविधियाँ रुक जाती हैं।'' उदाहरणार्थ इस बात को यूँ स्पष्ट समझा जा सकता है; वर्ष 2014 में आम चुनाव तथा विधान सभाओं के चुनावों के दौरान आदर्श आचार संहिता लगभग 7 महीने तक लागू रही, तीन महीने पूरे देश में और दो महीने जम्मू और कश्मीर तथा झारखंड में तीन महीने महाराष्ट्र और हरियाणा में। अगर हम वर्ष 2017 की ही

बात करें तो फरवरी से मार्च, 2017 के दौरान उन पाँच राज्यों में यह लागू रही जहाँ चुनाव हुए और 2017 के अंत में गुजरात और हिमाचल प्रदेश में चुनाव होने वाले हैं। अतः तब भी इस लंबे समय के लिए लागू किया जाएगा। वर्ष 2018 में भी कई राज्य विधान सभाओं के चुनाव होने वाले हैं तो 2019 के आरंभ में ही लोक सभा के चुनाव आ जाएँगे जिससे पता चलता है कि आदर्श चुनाव संहिता से, जोकि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों के लिए अनिवार्य है, इस एक अच्छे क़दम की वजह से लगभग समूचे देश का विकास कैसे प्रभावित होता है। जब इतने लंबे समय तक देश और राज्यों का विकास रुक जाता है, उससे विकास की गति धीमी हो जाना स्वाभाविक है।

देश में बार-बार चुनाव होने से सामान्य जन-जीवन अस्त-व्यत हो जाता है। भारत सरकार की कार्मिक, लोक शिकायत, विधि और न्याय संबंधी संसदीय समिति ने इस संबंध में कहा है कि बार-बार चुनाव कराने से सामान्य जन-जीवन तथा आवश्यक सेवाओं पर बुरा प्रभाव पड़ता है। चुनाव के दौरान राजनीतिक रैलियों के आयोजन से यातायात प्रभावित होता है और शोर-प्रदूषण भी बढ़ जाता है। चुनाव प्रचार के दौरान गली, चौराहों पर लाउडस्पीकर से लैस वाहन चलते रहते हैं जिससे शोर-शराबा होता रहता है। यदि चुनावों को पाँच वर्षों में एक बार ही कराया जाए तो यह अवधि भी कम हो जाएगी।

अपने एक आलेख में पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त एस.वाई. क़ुरैशी ने लिखा कि चुनाव के दौरान धर्म, जाति, सांप्रदायिक मुद्दों को प्रायः ऐसे उठाया जाता है जिससे समाज का ताना-बाना प्रभावित होता है तथा हर समय वातावरण में एक तनाव और कड़वाहट बनी रहती है और कई बार तो शांति भंग हो जाती है और क़ानून तथा व्यवस्था के प्रश्न भी उठ खड़े होते हैं, इसलिए देश में समरसता का वातावरण बनाए रखने के लिए बार-बार चुनावों से बचना चाहिए।

उपरोक्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि लोक सभा और राज्य विधान सभाओं के वर्तमान चुनाव व्यवथा में तो ऐसा कोई वर्ष नहीं रहा जब कहीं चुनाव न होते हों और अगर इस व्यवस्था में परिवर्तन नहीं किया गया तो आगे भी ऐसा ही होता रहेगा। इसका यह अर्थ हुआ कि भविष्य में भी न केवल सरकारों को चुनाव पर भारी ख़र्च करना पड़ेगा बल्कि राजनीतिक दलों को भी चुनावों के लिए बराबर अधिक ख़र्च करना होगा। राजनीतिक दलों के पास आमतौर पर पैसा व्यापारी घरानों से आता है। व्यापारी घराने चुनाव ख़र्च का वहन करते हैं तो इस आशा में कि उन्हें सरकार से सहूलियतें मिलेंगी। यह व्यवस्था न केवल भ्रष्टाचार का कारण बनती है बल्कि इससे कालेधन की व्यवस्था भी फलती-फूलती है। प्रायः यह कहा जाता है कि देश की सरकार मंत्री मंडल या नौकरशाह नहीं चलाते बल्कि देश के व्यापारी घराने चलाते हैं। अतः इस प्रकार के भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए भी ज़रूरी है कि देश में निरंतर चलने वाले चुनावों के चक्र

को तोड़ा जाए और यथासंभव चुनाव एक ही समय पर कराए जाएँ।

जहाँ तक केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के कार्य पर प्रभाव का संबंध है हमने इसी वर्ष फरवरी-मार्च के महीने में देखा कैसे पाँच राज्यों के चुनावों के दौरान प्रधान मंत्री को भी चुनाव प्रचार में अपना काफ़ी समय और शक्ति लगानी पड़ी थी, चाहे वह यह सब देश के लिए कर रहे थे पर इसमें भी कोई शक नहीं कि जो समय और ध्यान उन्हें देश के अन्य महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर लगाना चाहिए, वह उन्हें चुनावों पर लगाना पड़ा। इससे नीतियों पर से ध्यान हटता है जबकि इतने बड़े पैमाने पर बढ़ते युवा वर्ग की बढ़ती आशाओं को पूरा करने के लिए शासन को और भी चुस्त-दुरूस्त करने की ज़रूरत होती है। प्रधानमंत्री ने कहा भी था कि ''यदि भारत को बदलते भारत की चुनौतियों का सामना करना है तो केवल प्रगति से कुछ नहीं होगा। इसके लिए देश का रूपांतरण करना होगा, देश के बारे में मेरा स्वप्न यह है कि देश का क्रमिक विकास नहीं, त्वरित रूपांतरण हो।''

लोक सभा और विधान सभाओं के एक ही साथ चुनाव कराने का प्रस्ताव बहुत अच्छा है परंतु देश के विशाल आकार और विपुल जनसंख्या को देखते हुए क्या ऐसा करना संभव है? कहा यही जाता है कि प्रस्ताव अच्छा है परंतु उसे कार्यान्वित करना असंभव है। इसके रास्ते में सबसे बड़ी चुनौती यह है कि विधान सभाओं के कार्यकाल को कम करना पड़ेगा अथवा कहीं-कहीं उसे बढ़ाना पड़ेगा। ऐसा करने के लिए क्या सभी राजनीतिक दल सहमत होंगे? क्या निर्वाचन आयोग, जो कई-कई चरणों में चुनाव करवाता है दोनों के एक साथ चुनाव करवा सकेगा?

वर्तमान में विधान सभाओं की स्थिति देखने से पता चलता है कि इसमें उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब, मणिपुर, गोवा जैसे ऐसे राज्य है जिनका वर्ष 2019 में लोक सभा चुनाव के समय अभी 27 महीने कार्यकाल बचा होगा। इसी प्रकार, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, असम, पांडुचेरी आदि में 24 महीने कार्यकाल शेष होगा, इतना बड़ा कार्यकाल बढ़ाने या घटाने के लिए कोई भी राज्य या राजनीतिक दल नहीं मानेगा। किंतु शेष 14 राज्य विधान सभाएँ ऐसे ही हैं जिनमें से विधान सभाओं का पाँच महीने से लेकर 8 महीने का समय घटा-बढ़ा कर लोक सभा के साथ चुनाव कराए जा सकते हैं। जिन राज्य में विधान सभाओं में लोक सभा के साथ वर्ष 2019 में चुनाव कराए जा सकते हैं। वह हैं --

क्र.	**विधान सभा**	**कार्यकाल**	**2019 में लोक सभा के साथ**
1.	आंध्र प्रदेश	18 जून, 2019	लोक सभा के साथ चुनाव होना है
2.	अरूणाचल प्रदेश	19 जून, 2019	लोक सभा के साथ चुनाव होना है

3.	उड़ीसा	11 जून, 2019	लोक सभा के साथ चुनाव होना है
4.	तेलंगाना	8 जून, 2019	लोक सभा के साथ चुनाव होना है
5.	छत्तीसगढ़	5 जनवरी, 2019	5 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
6.	हरियाणा	2 नवंबर, 2019	5 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
7.	कर्नाटक	मार्च 2018	13 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
8.	मध्य प्रदेश	जनवरी, 2019	5 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
9.	महाराष्ट्र	नवंबर, 2019	5 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
10.	मिज़ोरम	दिसंबर, 2018	6 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
11.	राजस्थान	जनवरी, 2016	5 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
12.	सिक्किम	मई, 2019	1 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
13.	त्रिपुरा	मार्च, 2018	13 महीने अवधि बढ़ानी होगी।
14.	दिल्ली	फरवरी, 2020	8 महीने अवधि बढ़ानी होगी।

उपरोक्त राज्यों में कर्नाटक और त्रिपुरा ही ऐसे राज्य हैं जहाँ विधान सभा का कार्यकाल 13 महीने बढ़ाना पड़ेगा। किंतु यदि कोई बड़ा फैसला लिया जाता है तो इस तरह का प्रावधान तो करना ही पड़ेगा। जब 14 राज्य विधान सभाओं के चुनाव लोक सभा के चुनावों के साथ हो जाएँगे, तो शेष 16 विधान सभाओं के चुनाव वर्ष 20121 में कराए जाएँ, जब लोक सभा की आधी अवधि बीत चुकी होगी। इस प्रस्ताव के अनुसार पाँच वर्ष में दो बार ही चुनाव कराए जाएँगे। पहले मई-जून, 2019 में लोक सभा चुनावों के साथ और दूसरी बार नवंबर, 2021 में जब अधिकांश विधान सभाओं का कार्यकाल पूरा होने वाला होगा या थोड़ा-बहुत समय बढ़ा कर या घटा कर ऐसा किया जा सकेगा।

अभी नीति आयोग की तरफ से एक प्रस्ताव आया है कि लोक सभा और विधान सभाओं की इस तरह के चुनाव वर्ष 2024 से कराए जाएँ। लोक सभा और विधान सभाओं के चुनाव एक साथ कराने की व्यवस्था चाहे वर्ष 2019 से लागू की जाए या वर्ष 2024 से, दोनों स्थितियों में विधान सभाओं का कार्यकाल तो घटाना-बढ़ाना ही होगा। देश को अगर गंभीरता से विकास की ओर ले जाना है और चुनावों पर हो रहे ख़र्च को कम करना है तो इस प्रस्ताव को कार्य रूप देने के लिए विचार-विमर्श शुरू होना ही चाहिए।

❑

विपिन कुमार सिंह

कंपनियों का राजनैतिक चंदा एवं चुनाव सुधार

लोकतंत्र की सरकारें जनता द्वारा, जनता के लिए और जनता की होती हैं। देश का प्रत्येक नागरिक जिसकी आयु 18 वर्ष हो, निर्वाचन में मतदान का अधिकार रखता है। झुग्गी-झोपड़ी में निवास करने वाले निर्धन से लेकर अट्टालिकाओं में बसने वाले रईसों को समान मताधिकार प्राप्त है और भारतीय संविधान में उम्मीदवार की आयु लोक सभा हेतु कम-से-कम 25 वर्ष तथा राज्य सभा हेतु कम-से-कम 30 वर्ष का प्रावधान है। आज राज्य सभा पैसे वालों की हो गई है। अपराधी चुनाव लड़ रहे हैं। इस व्यवस्था में बदलाव संविधान में संशोधन से ही संभव है। आज कोई भी पार्टी राजनीतिक सुधार की बात ही नहीं करती है। इसका अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि जब उच्चतम न्यायालय ने प्रत्याशियों द्वारा अपने घोषणा-पत्र में संपत्ति का ब्यौरा दिए जाने का आदेश दिया तो संसद में बैठी सभी पार्टियों ने एकमत से इस आदेश को ख़ारिज कर दिया और कहा कि उच्चतम न्यायालय को इस तरह का आदेश देने का कोई अधिकार नहीं है। आज चुनाव सुधार के लिए कोई भी राजनीतिक पार्टी आगे नहीं आना चाहती है। पार्टियाँ नहीं चाहती हैं कि ऐसे आयोग की व्यवस्था हो जो निष्पक्ष एवं स्वतंत्र हो तथा दबाव, भय, प्रलोभन आदि से परे हो।

वर्तमान समय में हमारे देश के व्यापारी देश चला रहे हैं जबकि उनका कार्य व्यापार चलाना होना चाहिए न कि देश चलाना। राजनीतिक चंदा काले धन और भ्रष्टाचार का बड़ा स्रोत है, विशेष रूप से विदेश से आने वाला पैसा आमतौर पर बड़े उद्योग घराने लाइसेंस, कोटा और बैंक लोन के बदले पार्टियों को दान देते हैं। पार्टियों को चंदा कई तरीक़े से मिलता है। असली दान काले धन के रूप में होता है न कि सफ़ेद धन के रूप में। ज़्यादातर पैसा विदेशी टैक्स हेवन से आता है। यह पैसा भारत से बाहर जाता है और फिर देश में निवेश के रूप में वापस आता है, इसी पैसे का एक भाग राजनीतिक दलों के पास चंदे के रूप में भी आता है। इस माया रूपी मकड़जाल को

सभी राजनीतिक पार्टियाँ जानती और समझती हैं किंतु कोई भी राजनीतिक पार्टी इसे पारदर्शी नहीं बनाना चाहती है। राजनीतिक दल एक-दूसरे के विरोधी होते हुए भी एक दूसरे के हितों का इस मामले में बखूबी ख्याल रखते हैं। उदाहरण के रूप में सन् 2014 में विदेशी कंपनी वेदांता से चुनावी चंदा लेने के लिए दो राष्ट्रीय पार्टियाँ बीजेपी और कांग्रेस को दोषी पाया गया था। दिल्ली उच्च न्यायालय ने 28 मार्च 2014 को फैसले पर कार्यवाही हेतु चुनाव आयोग को 6 माह का समय दिया। बीजेपी और कांग्रेस ने इसके ख़िलाफ़ उच्चतम न्यायालय में अपील कर दी। यह मामला अभी अदालत में ही लंबित था कि सरकार ने वित्त विधेयक के साथ नत्थी एक व्यवस्था से विदेशी चंदा लेने का उपाय खोज लिया। सरकार ने विदेशी सहायता (नियमन) अधिनियम, 2010 (एफसीआरए) में पिछली तारीख़ में एक बदलाव किया जिससे विदेशी चंदे की परिभाषा बदल गई। अब किसी भारतीय कंपनी में 50 प्रतिशत से अधिक पैसा लगाने वाली कंपनी विदेशी कंपनी नहीं मानी जाएगी।

राजनीतिक दलों का पंजीकरण : राजनीतिक दलों का पंजीकरण व मान्यता देना केंद्रीय निर्वाचन आयोग का कार्य है। जन प्रतिनिधि अधिनियम, 1951 के अनुसार निर्वाचन आयोग सिर्फ़ उसी दल का पंजीकरण करेगा, जो भारतीय संविधान, लोकतंत्र, समाजवाद पर पूरा विश्वास करता हो। चुनाव प्रचार के दौरान सभी राजनीतिक दल पंजीकरण की शर्तों का खुलेआम उल्लंघन करते हैं। ऐसे में इनकी मान्यता रद्द करने का नियम है किंतु वास्तव में ऐसा नहीं होता है। ऐसे अनेक राजनीतिक दल हैं जो चुनाव सिर्फ़ इसलिए लड़ते हैं जिससे चंदा वसूली के जरिए काले धन को सफ़ेद किया जा सके। इनका भी पंजीकरण चुनाव आयोग द्वारा निरस्त नहीं किया जाता है। 1990 में मुख्य चुनाव आयुक्त टी.एन. शेषन ने ऐसी कुछ शक्तियों का प्रयोग किया था जिनके बारे में तत्कालीन सरकार द्वारा कहा गया कि ये चुनाव आयोग के अधिकार में ही नहीं है। चुनाव आयोग की शक्तियाँ संसद द्वारा बनाई गई विधि के अधीन है। इस प्रकार हमारी सरकारें स्वयं नहीं चाहती कि चुनाव सुधार हो सके।

राजनीतिक दलों का घोषणा-पत्र : आज राजनीतिक दल मनमाने चुनाव घोषणा-पत्र जारी करते रहते हैं किंतु उनकी मंशा उन्हें पूर्ण करने की नहीं होती है। इस संबंध में हमारे न्यायालयों के निर्णय भी उदासीन रहे हैं। क्या किसी राजनीतिक दल को अपने घोषणा-पत्र को लागू करने के लिए बाध्य किया जा सकता है? आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने इसका नकारात्मक उत्तर दिया है। न्यायालय ने कहा कि यदि कोई राजनीतिक दल अपने घोषणा-पत्र के अनुरूप कार्य नहीं करता है तो इसे संवैधानिक व्यवस्था का उल्लंघन नहीं कहा जा सकता है।[4]

कंपनियों का सामाजिक दायित्व : आज कंपनियाँ प्रत्यक्ष रूप से टी.वी., मोबाइल,

इंटरनेट आदि के माध्यम से विभिन्न पार्टियों का प्रचार करती रहती हैं अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कोई कार्यक्रम संचालित करती हैं तथा उसमें नेताओं को बुलाकर उनका सम्मान करते हुए प्रचार-प्रसार करती हैं और ऐसे प्रचार-प्रसार के लिए कंपनियाँ नेताओं से पैसा न लेकर अपना ही धन पानी की तरह बहाती हैं। स्पष्ट है कि ये कंपनियाँ बिना निजी स्वार्थ के ऐसा नहीं कर सकती हैं। इस प्रकार जब ये कंपनियाँ क़ानून निर्माता सांसदों का इन माध्यमों से सहयोग करती हैं तो फिर क़ानून बनाते समय ये सांसद क्या न्याय कर पाएँगे? स्पष्ट है कि कंपनी के ख़िलाफ़ कोई कठोर क़ानून नहीं बनेगा। नए कंपनी अधिनियम, 2013 में एक लोक कल्याणकारी उपबंध बनाया गया है जिसमें ऐसी बड़ी कंपनियों पर सामाजिक दायित्व आरोपित किया गया है जिसका वार्षिक व्यापार 500 करोड़ रुपए या अधिक का अथवा जिसका टर्न ओवर 1000 करोड़ या अधिक का अथवा जिसका शुद्ध लाभ 5 करोड़ रुपए या अधिक किसी वित्तीय वर्ष में होता है उसे एक सामाजिक उत्तरदायित्व समिति का गठन करना होगा। यह समिति यह सुनिश्चित करेगी कि कंपनी के तत्काल तीन वित्तीय वर्ष के औसत शुद्ध लाभ का कम-से-कम 2 प्रतिशत सामाजिक दायित्वों हेतु ख़र्च हो।[5] उदाहरण के रूप में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की शिक्षा, स्वास्थ्य, भोजन, स्वच्छ जल, पर्यावरण, समावेशी विकास आदि की व्यवस्था के लिए राशि ख़र्च करने की अपेक्षा की गई है। इस प्रकार, वर्तमान कंपनी अधिनियम, 2013 के द्वारा कंपनियों पर अपने शुद्ध लाभ का कम-से-कम 2 प्रतिशत सामाजिक दायित्वों में ख़र्च करने का भार दिया गया है। ऐसी दशा में वह राजनैतिक हितों को साधने में ही अपना ध्यान लगाती हैं तो चुनाव सुधार की अपेक्षा नहीं की जा सकती है।

कंपनी अधिनियम, 2013 के अंतर्गत राजनीतिक चंदा से संबंधित उपबंध : कंपनी अधिनियम, 1956 से पूर्व कंपनी द्वारा राजनीतिक चंदे देने पर कोई सीमा नहीं लगाई गई थी किंतु धीरे-धीरे सुधार करते हुए इस संबंध में प्रावधान किया गया है। इसकी शुरुआत कंपनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों से होती है। कंपनी अधिनियम, 1956 में कंपनी के निदेशक बोर्ड को अनेक शक्तियाँ प्रदान की गई थी जो कंपनी के हित में हो। किंतु साथ ही साथ निदेशक बोर्ड की शक्तियों पर निर्बंधन भी लगाया गया था। एक पब्लिक कंपनी का या ऐसी प्राइवेट कंपनी का, जो पब्लिक कंपनी की समनुशंगी है, निदेशक बोर्ड साधारण अधिवेशन में ऐसी पब्लिक कंपनी या समनुशंगी कंपनी की सम्मति से ऐसी किसी **धर्मदा या अन्य निधियों** में, जो उसके कर्मचारियों के कल्याण से प्रत्यक्षतः संबंधित नहीं है, इतनी रक़म का दान दे सकता है जो एक वित्तीय वर्ष में 25000 रुपए से अधिक या पूर्ववर्ती तीन वित्तीय वर्षों में हुए औसत शुद्ध लाभों में 5 प्रतिशत से अधिक है।[6]

जहाँ तक कंपनियों द्वारा राजनीतिक चंदा देने का प्रश्न है, सन् 1960 से पूर्व

तक कंपनियाँ राजनीतिक दलों को किसी भी सीमा तक चंदा दे सकती थी। इससे सभी कंपनियाँ राजनीतिक दलों को चंदा देकर अप्रत्यक्ष रूप से अपना हित साधने में लग गई। इसलिए चुनाव सुधार हेतु क़दम उठाते हुए 1960 के संशोधन द्वारा सर्वप्रथम कंपनियों पर राजनीतिक चंदा देने के संबंध में प्रतिबंध लगाया गया कि कोई भी कंपनी किसी वित्तीय वर्ष में 25 हज़ार रुपए से अधिक का कोई अभिदाय किसी राजनीतिक पार्टी को या राजनीतिक कार्यों के लिए नहीं करेंगी अर्थात् केवल 25 हज़ार रुपए तक ही कंपनियाँ राजनीतिक दलों को चंदा दे सकती हैं। ऐसे अभिदाय को न्यायालयों ने भी वैध ठहराया।

परंतु इस संशोधन से लोकमत संतुष्ट नहीं था क्योंकि इसमें कंपनियाँ अपने काले धन को राजनीतिक चंदे के रूप में सफ़ेद करने में लग गई, इसमें सरकारी कंपनियाँ भी पीछे नहीं थी। ये कंपनियाँ सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग करने में लीन हो गई। उन्हें अपना वित्तीय स्वार्थ साधने का एक सुनहरा अवसर मिल गया। सरकारी कंपनियों पर भी कोई रोक नहीं थी इसलिए लोकमत इस संशोधन का विरोध करने लगा क्योंकि यह संशोधन चुनावों में भ्रष्टाचार एवं पक्षपात को बढ़ावा देने वाला था। जनमत के आवाज़ बुलंद करने के फलस्वरूप कंपनी (संशोधन) अधिनियम, 1969 के द्वारा ऐसे राजनीतिक अभिदायों पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया गया जिसके अनुसार कोई भी कंपनी अधिनियम में किसी अन्य उपबंध में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी न तो साधारण अधिवेशन में और न उसका निदेशक बोर्ड किसी रक़म या किन्हीं रक़मों का अभिदाय न तो किसी राजनीतिक दल को कर सकता है, और न ही किसी व्यक्ति या निकाय को किसी राजनीतिक प्रयोजन के लिए कर सकता है।[7]

किंतु यह संशोधन राजनीतिक दलों को बिल्कुल अच्छा नहीं लगा। उनके पास क़ानून बनाने की शक्ति होते हुए भी ऐसी व्यवस्था का रहना असहनीय था, जो उनके हित के प्रतिकूल हो। अतः कंपनी (संशोधन) अधिनियम, 1985 द्वारा कतिपय प्रतिबंधों के अधीन राजनीतिक चंदा देने का प्रावधान पुनः बनाया गया। इस संशोधन द्वारा राजनीतिक अभिदायों पर लगाया गया पूर्ण प्रतिषेध हटा लिया गया जिससे अब कंपनियाँ अपने शुद्ध लाभ का 5 प्रतिशत तक चंदा दे सकती थी बशर्ते ऐसी कंपनी सरकारी कंपनी न हो तथा ऐसी कंपनी जिनका अस्तित्व 3 वर्षों से कम अवधि का न हो।[8] इस प्रकार कंपनियाँ ज़्यादा-से-ज़्यादा 5 प्रतिशत तक चंदा राजनीतिक पार्टियों को दे सकती थीं। ऐसे अनुदान में कंपनियों को कर से छूट देने का भी प्रावधान था।

वर्तमान कंपनी अधिनियम, 2013 में भी राजनीतिक दलों के चंदे के बारे में प्रावधान किया गया है। इस नए अधिनियम में कतिपय कंपनियों पर राजनैतिक चंदा देने पर पूर्ण प्रतिबंध तथा शेष सभी कंपनियों पर आंशिक प्रतिबंध लगाया गया है। अधिनियम

के अनुसार ऐसी कंपनियाँ जो सरकारी कंपनी हैं, तथा एक ऐसी अन्य कंपनी जो तीन से कम वित्तीय वर्षों से अस्तित्व में है, पर राजनैतिक चंदा देने पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया गया है। शेष सभी कंपनियाँ राजनीतिक दलों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई भी राशि चंदे के रूप में दे सकती है किंतु वह राशि तत्काल 3 पूर्ववर्ती वित्तीय वर्षों के औसत शुद्ध लाभ का 7.5 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा।[9] इसके अतिरिक्त ऐसा संकल्प निदेशक बोर्ड द्वारा साधारण अधिवेशन में पारित किया जाना आवश्यक होगा तथा प्रत्येक कंपनी को अपने वार्षिक लाभ तथा हानि लेखे में यह बताना अनिवार्य होगा कि उस वर्ष कितना पैसा, किस व्यक्ति या राजनीतिक दल को चंदे के रूप में दिया गया है। 'राजनीतिक चंदे' के संदर्भ में 'राजनीतिक दल' से आशय ऐसे सभी राजनीतिक दलों से है जो जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (1951 का 43) की धारा 29-क के अंतर्गत पंजीकृत हैं।[10]

किसी व्यक्ति को दान देना जिसके बारे में युक्तियुक्त रूप से जाना जा सकता है कि वह किसी दल के लिए जनता का समर्थन बढ़ाएगा, वह भी इस प्रकार का चंदा माना जाएगा। विज्ञापन या इश्तेहार के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दिया गया पैसा भी ऐसा ही चंदा माना जाएगा, यदि वह विज्ञापन किसी प्रकाशन, ब्रोचर, ट्रेक्ट, पैंपलेट्स आदि में जो किसी राजनीतिक दल की ओर से या उसके लाभ के लिए छापा गया है।[11] कंपनी अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन करके यदि किसी कंपनी द्वारा राजनैतिक चंदा दिया जाता है तो कंपनी की दशा में अभिदाय की गई राशि से 5 गुना तक जुर्माना लगाया जा सकेगा, तथा कंपनी के अधिकारी द्वारा व्यतिक्रम की दशा में 6 माह तक की अवधि का कारावास एवं अभिदाय की राशि के 5 गुने तक जुर्माने से दंडित किया किया जा सकता है।[12]

खेद इस बात का है कि सरकारें चुनावी फंडिंग में पारदर्शिता को लेकर बड़ी-बड़ी बातें करती है लेकिन वर्तमान सरकार ने ऐसा संशोधन लाया है जिससे भारतीय राजनीति में उद्योग जगत् की भूमिका काफ़ी बढ़ने का अंदेशा है। अभी हाल ही में कंपनियों द्वारा राजनीतिक दलों को दिए जाने वाले चंदे की उपरी सीमा को हटाने के लिए वित्त विधेयक, 2017 लाया गया। इस विधेयक को संसद की मंजूरी मिल गई। मार्च, 2017 में इसे लोक सभा द्वारा पारित कर दिया गया। चूँकि यह एक धन विधेयक है इसलिए इसे उच्च सदन (राज्य सभा) न तो ठुकरा सकता है और न ही संशोधन करने का दबाव डाल सकता है। यह लोक सभा में बहुमत वाली सरकार का धन विधेयक का दुरुपयोग कर राज्य सभा से बचने का एक उदाहरण है। यह इसलिए और भी आसान हो जाता है क्योंकि कौन सा विधेयक धन विधेयक है या नहीं, यह तय करने का अधिकार संविधान में लोक सभा अध्यक्ष को दिया गया है। इसी का फ़ायदा वर्तमान सरकार ने भी उठाया

है। अभी तक कंपनियों पर यह सीमा थी कि वे पिछले तीन साल के अपने शुद्ध लाभ के औसत का 7.5 फ़ीसदी से अधिक चंदा नहीं दे सकती थी। लेकिन अब यह सीमा हटा दी गई है। अब कंपनियाँ राजनीतिक दलों को कितना भी चंदा दे सकती हैं तथा इसे सूचना के अधिकार की सीमा से भी बाहर कर दिया गया है।[13] इसका उद्देश्य राजनीतिक व्यवस्था में काले धन के प्रवाह को रोकने तथा वैध धन के प्रवाह को प्रोत्साहन मिलना बताया जा रहा है। कंपनियों को भी अब न चंदे की राशि को घोषित करना पड़ेगा और न ही उस राजनीतिक दल का नाम बताना पड़ेगा जिसे उसने चंदा दिया है। इस नए संशोधन से उद्योग घरानों और राजनीतिक दलों के गठजोड़ को बढ़ावा मिलेगा और फलस्वरूप राजनीतिक दलों की कार्यप्रणाली और भी अपारदर्शी होगी।

आयकर से छूट : राजनीतिक दलों को आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 13-क के तहत आयकर से पूरी छूट प्राप्त है। उन्हें केवल 20,000 रुपए से अधिक चंदा देने वालों का हिसाब चुनाव आयोग को देना होता है। यह आश्चर्यजनक है कि सभी राजनीतिक पार्टियों की लगभग 80 फ़ीसदी कमाई 20,000 रुपए से नीचे के चंदे की है। चुनाव आयोग द्वारा 20,000 रुपए के चंदे को घटाकर 2,000 रुपए किए जाने के सुझाव को मानते हुए माननीय वित्तमंत्री अरूण जेटली ने 2,000 रुपए से अधिक के चंदे को हिसाब में देने हेतु क़ानून में संशोधन की घोषणा की।[14]

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि चुनाव धन बल के आधार पर होने लगा है। अधिकतर राजनीतिक दल चंदा वसूली के जरिए काले धन को सफ़ेद करने के लिए निष्क्रिय रूप में चुनाव लड़ रहे हैं। राजनेता दो निर्वाचन क्षेत्रों से चुनाव लड़ रहे हैं। राजनीतिक दल मनमाने घोषणा-पत्र जारी करते हैं जिनको पूर्ण करने की उनकी कोई मंशा नहीं होती है। चुनाव आयोग पंगु बना हुआ है। कंपनियाँ राजनीतिक दलों को चुनावी चंदा देकर एवं उनका प्रचार-प्रसार करके अपना स्वार्थ साधने में लगी हुई हैं। कंपनियों का काला धन विदेशों में जाकर हवाला के माध्यम से सफ़ेद होकर वापस लौट रहा है। कंपनियों द्वारा चुनावी चंदा देने पर विशेष लाभ तथा न देने पर प्रताड़ना की संभावना बनी रहती है। कंपनी अधिनियम, 2013 द्वारा सरकारी कंपनियों एवं तीन वर्ष से कम अवधि के अस्तित्व वाली कंपनी के राजनैतिक चंदा देने पर पूर्ण प्रतिबंध एवं शेष कंपनियों पर 7.5 प्रतिशत की सीमा तक चंदा देने का प्रावधान किया गया है। किंतु वित्त विधेयक, 2017 के माध्यम से कंपनियों द्वारा राजनीतिक दलों को चंदा देने की सीमा भी अब हटा दी गई है। चुनाव सुधार के नाम पर 20 हज़ार रुपए तक के चंदे, जिसका हिसाब चुनाव आयोग को देना होता है, उसे 2 हज़ार कर दिया गया है।

इसलिए चुनाव सुधार हेतु अब समय आ गया है कि चुनावों में उद्योग जगत्

की भूमिका को पूरी तरह से समाप्त किया जाए। कंपनियों द्वारा राजनीतिक दलों को चंदा देने की सीमा को समाप्त करना नहीं अपितु 7.5 प्रतिशत की सीमा को और भी कम करने की आवश्यकता है। आज चुनाव आयोग को दिए जाने वाले हिसाब की सीमा को 2,000 रुपए करने का भी कोई औचित्य नहीं है क्योंकि उसका भी फ़ायदा उठाया जा सकता है। उदाहरण के लिए पहले जो कंपनियाँ 20,000 रुपए के बजाय 19,999 रुपए के 10 रसीद चंदे के लिए काटती थी अब 1,999 के 100 रसीद काटेंगी। केवल डिजिटल चंदे को ही मान्य किया जाना चाहिए। वर्तमान समय में जब ग़रीब-से-ग़रीब आदमी से यह अपेक्षा की जा रही है कि वह पेटीएम, भीम आदि ऐप के माध्यम से डिजिटल संव्यवहार करे तो फिर कंपनियों को क्यों बाध्य नहीं किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त चुनाव सुधार हेतु राजनीतिज्ञों को भी 'स्किल डेवलपमेंट' के लिए एक ट्रेनिंग कोर्स कराए जाने की ज़रूरत है तथा लोक सभा एवं विधान सभा का चुनाव एक साथ कराना भी चुनाव सुधार हेतु एक अच्छा क़दम होगा। कंपनी अधिनियम, 2013 के सामाजिक दायित्व हेतु 2 प्रतिशत के योगदान पर कंपनियों द्वारा विशेष बल देने की आवश्यकता है न कि राजनैतिक चंदों पर। हाल ही में माननीय वित्त मंत्री अरूण जेटली ने सुझाव दिया है कि अब कंपनियों द्वारा बैंकों से बॉण्ड ख़रीदने का प्रावधान होगा जिसे राजनीतिक दलों को दिया जा सकेगा, चूँकि बॉण्ड में ख़रीदने वाले का नाम पता नहीं चल सकेगा तो कोई भी दल उस कंपनी को प्रताड़ित भी नहीं कर सकेगा। किंतु उनके सुझाव से भी आगे बढ़कर सोचने की ज़रूरत है। इस परिप्रेक्ष्य में आज राष्ट्रीय स्तर पर एक 'राष्ट्रीय निर्वाचन कोष' (नेशनल इलेक्शन फंड) बनाए जाने की आवश्यकता है जिसमें कंपनियाँ जितना चाहें उतने पैसे जमा करें। इंद्रजीत गुप्ता समिति द्वारा सुझाई गई 'राज्यपोषित कोष' (स्टेट फंडिंग) के समान ही सरकारें राजनीतिक दलों को उनके ख़र्च के हिसाब से उस राष्ट्रीय निर्वाचन कोष से राशि प्रदान करें। इससे आम जनता भी खुश रहेगी कि उसमें उसका पैसा नहीं लग रहा है अपितु उद्योग जगत् का पैसा ख़र्च हो रहा है तथा इसका एक विशेष लाभ यह है कि पहले की तरह कोई भी दल की सरकार बनने पर न किसी विशेष कंपनी को लाभ दे सकेगा न किसी कंपनी को प्रताड़ित करने की संभावना होगी क्योंकि यहाँ फंडिंग एक राष्ट्रीय कोष में हो न कि किसी विशेष दल को।

❑

संदर्भ

1. अनु. 324, भारतीय संविधान, 1950
2. अनु. 327, भारतीय संविधान, 1950
3. सादिक अली बनाम इलेक्शन कमीशन ए.आई.आर. 1972 एस.सी. 187

4. आंध्र प्रदेश संपूर्ण मद्यनिषेध समिति बनाम स्टेट ऑफ आंध्र प्रदेश, ए.आई.आर. 1997 आंध्र प्रदेश, 312
5. धारा 135, कंपनी अधिनियम, 2013
6. धारा 293(1), कंपनी अधिनियम, 1956
7. धारा 293क, कंपनी अधिनियम, 1956
8. धारा 293(क)(1)व(2) कंपनी अधिनियम, 1956
9. धारा 182, कंपनी अधिनियम, 2013
10. स्पष्टीकरण, धारा 182, कंपनी अधिनियम, 1956
11. ग्रेफाइट इंडिया लिमिटेड बनाम दलपत राय मेहता, (1978) एस.सी.सी. 152: (1978)48 कंपनी केसेज 683 (एस.सी.)
12. धारा 182(4), कंपनी अधिनियम, 2013
13. http://www.prsindia.org/uploads/media/Finance%20Bill /Analysis% 20Proposed%20amendments%20to%20the%20Financ e%20Bill.pdf
14. https://scroll.in/article/828281/will-the-rs-2000-cap-on-cash-donations-for-political-parties-bring-more-transparency-in-the-system

गीता

चुनाव और चुनाव आचार संहिता

चुनाव लोकतंत्र का आधार स्तंभ है। आज़ादी के बाद से भारत में चुनावों ने एक लंबा रास्ता तय किया है। चुनाव या निर्वाचन, लोकतंत्र की एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसके द्वारा जनता अपने प्रतिनिधियों को चुनती है। चुनाव के द्वारा ही क्षेत्रीय एवं स्थानीय निकायों के लिए भी व्यक्तियों का चुनाव होता है। वस्तुतः चुनाव का प्रयोग व्यापक स्तर पर होने लगा है और यह निजी संस्थानों, क्लबों, विश्वविद्यालयों, धार्मिक संस्थानों आदि में भी प्रयुक्त होता है।

चुनाव आचार संहिता (आदर्श आचार संहिता/आचार संहिता) का मतलब है चुनाव आयोग के वे निर्देश जिनका पालन चुनाव ख़त्म होने तक हर पार्टी और उम्मीदवार को करना होता है। अगर कोई उम्मीदवार उन नियमों का पालन नही करता तो चुनाव आयोग उसके ख़िलाफ़ कार्यवाही कर सकता है, उसे चुनाव लड़ने से रोका जा सकता है, उम्मीदवार के ख़िलाफ़ एफ.आई.आर दर्ज़ हो सकती है और दोषी पाए जाने पर उसे जेल भी जाना पड़ सकता है।

चुनाव एक लंबी प्रक्रिया के तहत संपन्न होते हैं। चुनाव की प्रक्रिया में चरणबद्ध तरीक़े से काम किया जाता है इसमें राज्यों में चुनाव की तारीख़ों के ऐलान के साथ ही वहाँ चुनाव आचार संहिता भी लागू हो जाती है। चुनाव आचार संहिता के लागू होते ही प्रदेश सरकार और प्रशासन पर अंकुश लग जाते हैं। सरकारी कर्मचारी चुनाव प्रक्रिया पूरी होने तक निर्वाचन आयोग के कर्मचारी बन जाते हैं। वे आयोग के मातहत रहकर उसके दिशा-निर्देश पर काम करते हैं, इसलिए वर्ष 2017 में हुए चुनावों में आदर्श आचार संहिता के लागू होते ही उत्तर प्रदेश, मणिपुर, गोवा, पंजाब और उत्तराखंड में सरकार और प्रशासन पर कई अंकुश लग गए थे। सरकारी कर्मचारी चुनाव प्रक्रिया पूरी होने तक निर्वाचन आयोग के कर्मचारी बन गए।

आदर्श आचार संहिता तथा इसका विकास

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव लोकतंत्र के आधार हैं। इसमें मतदाताओं के बीच अपनी नीतियों तथा कार्यक्रमों को रखने के लिए सभी उम्मीदवारों तथा सभी राजनीतिक दलों को समान अवसर तथा बराबरी का स्तर प्रदान किया जाता है। इस संदर्भ में आदर्श आचार संहिता का उद्देश्य सभी राजनीतिक दलों के बीच बराबरी का समान स्तर उपलब्ध करना, प्रचार, अभियान को निष्पक्ष बनाना तथा स्वस्थ रखना, दलों के बीच झगड़ों तथा विवादों को टालना है। इसका उद्देश्य केंद्र या राज्यों की सत्ताधारी सत्ता पार्टी द्वारा आम चुनाव में अनुचित लाभ लेने से सरकारी मशीनरी के दुरुपयोग को रोकना है। आदर्श आचार संहिता लोकतंत्र के लिए भारतीय निर्वाचन प्रणाली का प्रमुख योगदान है। आदर्श आचार संहिता राजनीतिक दलों तथा विशेषकर उम्मीदवारों के लिए आचरण और व्यवहार का मानक है। इसकी विचित्रता यह है कि यह दस्तावेज़ राजनीतिक दलों की सहमति से अस्तित्व में आया और विकसित हुआ। 1960 में केरल विधान सभा चुनाव के लिए आदर्श आचार संहिता में यह बताया गया कि क्या करें और क्या न करें। इस संहिता के तहत चुनाव सभाओं के संचालन, जुलूसों, भाषणों, नारों के पोस्टर तथा पट्टियाँ आती हैं। 1962 के लोक सभा आम चुनावों में आयोग ने इस संहिता को सभी मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों में वितरित किया तथा राज्य सरकारों से अनुरोध किया गया कि वे राजनीतिक दलों द्वारा इस संहिता की स्वीकार्यता प्राप्त करें। 1962 के आम चुनाव के बाद प्राप्त रिपोर्ट यह दर्शाती है कि कमोबेश आचार संहिता का पालन किया गया। 1967 में लोक सभा तथा विधान सभा चुनावों में आचार संहिता का पालन हुआ।

आदर्श आचार संहिता का विकास तथा 1967 से इसका क्रियान्वयन --

- 1968 में निर्वाचन आयोग ने राज्य स्तर पर सभी राजनीतिक दलों के साथ बैठकें की तथा स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए व्यवहार के न्यूनतम मानक के पालन संबंधी आचार संहिता का वितरण किया गया।
- 1971-1972 में लोक सभा/विधान सभाओं के आम चुनावों में आयोग ने फिर आचार संहिता का वितरण किया।
- 1974 में कुछ राज्यों की विधान सभाओं के आम चुनावों के समय में आयोग ने राजनीतिक दलों को आचार संहिता जारी की। आयोग ने यह सुझाव भी दिया कि जिला स्तर पर जिला कलेक्टर के नेतृत्त्व में राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों को सदस्य के रूप में शामिल कर समितियाँ गठित की जाएँ ताकि आचार संहिता के उल्लंघन के मामलों पर विचार किया जा सके तथा सभी राजनीतिक दलों तथा उम्मीदवारों द्वारा संहिता के परिपालन को सुनिश्चित किया जा सके।

- 1977 में लोक सभा के आम चुनाव के लिए राजनीतिक दलों के बीच संहिता का वितरण किया गया।
- 1979 में निर्वाचन आयोग ने राजनीतिक दलों से विचार-विमर्श कर आचार-संहिता का दायरा बढ़ाते हुए एक नया भाग जोड़ा जिसमें 'सत्तारूढ़ दल' पर प्रतिबंध लगाने का प्रावधान हुआ ताकि सत्ताधारी दल अन्य पार्टियों तथा उम्मीदवारों की अपेक्षा अधिक आर्थिक लाभ उठाने के लिए शक्ति का दुरुपयोग न करे।
- 1991 में आचार संहिता को मज़बूती प्रदान की गई और वर्तमान स्वरूप में इसे फिर से जारी किया गया।
- वर्तमान आचार संहिता में राजनीतिक दलों तथा उम्मीदवारों के सामान्य आचरण के लिए दिशा-निर्देश जारी किए गए जिसमें (निजी जीवन पर कोई हमला नहीं, सांप्रदायिक भावनाओं वाली कोई अपील नहीं, बैठकों में अनुशासन और शिष्टाचार, जुलूस, सत्तारूढ़ दल के लिए दिशा-निर्देश सरकारी मशीनरी तथा सुविधाओं का उपयोग चुनाव के लिए नहीं किया जाएगा।) मंत्रियों तथा अन्य अधिकारियों द्वारा अनुदानों, नई परियोजनाओं आदि की घोषणा पर प्रतिबंध लगाया गया।
- मंत्रियों तथा सरकारी पद पर आसीन लोगों की सरकारी यात्रा के साथ चुनाव यात्रा को जोड़ने की अनुमति नहीं होगी।
- सार्वजनिक कोष की क़ीमत पर विज्ञापनों के जारी करने पर प्रतिबंध।
- अनुदानों, नई योजनाओं/परियोजनाओं की घोषणा नहीं की जा सकती। आदर्श आचार संहिता लागू होने से पहले घोषित ऐसी योजनाएँ जिनका क्रियान्वयन आरंभ नहीं हुआ है, उन्हें लंबित स्थिति में रखने की आवश्यकता।
- ऐसे प्रतिबंधों के माध्यम से सत्ता में रहने के लाभ को रोका जाता है तथा बराबरी के आधार पर चुनाव लड़ने का अवसर उम्मीदवारों को प्रदान किया जाता है।
- आदर्श आचार संहिता को देश के शीर्ष न्यायालय से न्यायिक मान्यता मिली है। आदर्श आचार संहिता के प्रभाव में आने की तिथि को लेकर उत्पन्न विवाद पर भारत संघ बनाम हरबंश सिंह जलाल तथा अन्य [एस.एल.पी. (सिविल) संख्या 22724-1997] में 26.04.2001 को उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि चुनाव तिथियों की घोषणा संबंधी निर्वाचन आयोग की प्रेस विज्ञप्ति या इस संबंध में वास्तविक अधिसूचना जारी होने की तिथि से आदर्श आचार संहिता लागू होगी। प्रेस विज्ञप्ति जारी होने के दो सप्ताह बाद अधिसूचना जारी की जाती है। उच्चतम न्यायालय के इस निर्णय से आदर्श आचार संहिता के लागू होने की तिथि से जुड़ा विवाद हमेशा के लिए समाप्त हो गया। इस तरह आदर्श आचार संहिता चुनाव घोषणा की तिथि से चुनाव पूरे होने तक प्रभावी रहता है।

आचार संहिता को वैधानिक दर्जा : निर्वाचन आयोग की राय

कुछ हिस्सों में आदर्श आचार संहिता को वैधानिक दर्ज़ा देने की बात की जाती है, लेकिन निर्वाचन आयोग आदर्श आचार संहिता को ऐसा दर्ज़ा देने के पक्ष में नहीं है। निर्वाचन आयोग के अनुसार क़ानून की पुस्तकों में आदर्श आचार संहिता को लाना केवल अनुत्पादक (प्रतिकूल) होगा। हमारे देश में निश्चित कार्यक्रम के अनुसार सीमित अवधि में चुनाव कराए जाते हैं। सामान्यतः किसी राज्य में आम चुनाव निर्वाचन आयोग द्वारा चुनाव कार्यक्रम घोषित होने की तिथि से लगभग 45 दिनों में कराया जाता है। इस तरह आदर्श आचार संहिता के उल्लंघन संबंधी मामलों को तेज़ी से निपटाने का महत्त्व है। यदि आदर्श आचार संहिता के उल्लंघन को रोकने तथा उल्लंघनकर्त्ता के विरुद्ध चुनाव प्रक्रिया के दौरान सही समय से कार्रवाई नहीं की जाती तो आदर्श आचार संहिता का पूरा महत्त्व समाप्त हो जाएगा तथा उल्लंघनकर्ता उल्लंघनों से लाभ उठा सकेगा। आदर्श आचार संहिता को क़ानून में बदलने का अर्थ यह होगा कि कोई भी शिकायत पुलिस/मजिस्ट्रेट के पास पड़ी रहेगी। न्यायिक प्रक्रिया संबंधी जटिलताओं के कारण ऐसी शिकायतों पर निर्णय संभवतः चुनाव पूरा होने के बाद ही हो सकेगा।

आदर्श आचार संहिता विकास गतिविधियों में बाधक नहीं

आदर्श आचार संहिता के सीमित अवधि में लागू किए जाने पर भी जारी विकास गतिविधियाँ रोकी नहीं जाती और उन्हें बिना किसी बाधा के आगे जारी रखने की अनुमति दी जाती है और ऐसी नई परियोजनाएँ चुनाव पूरे होने तक टाल दी जाती हैं जो शुरू नहीं हुई हैं। ऐसे काम जिनके लिए अकारण प्रतीक्षा नहीं की जा सकती (आपदा की स्थिति में राहत कार्य आदि) उन्हें मंजूरी के लिए आयोग को भेजा जा सकता है।

आदर्श आचार संहिता को कई हिस्सों में बाँटा गया है। वे निम्न प्रकार हैं --

सामान्य आचरण (सभी दलों के लिए)

- किसी दल या उसके प्रत्याशी को कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए जो विभिन्न जातियों, धार्मिक और भाषाई समुदायों के बीच मतभेदों को बढ़ाए, घृणा और तनाव पैदा करे।
- राजनीतिक दल ऐसी कोई भी अपील जारी नहीं करेंगे, जिससे किसी की धार्मिक या जातीय भावनाएँ आहत होती हों।
- वोट के लिए जाति या संप्रदाय के आधार पर अपील न करें।
- दूसरे राजनीतिक दलों की आलोचना उनकी नीतियों, कार्यक्रमों, उनकी पुरानी छवि और काम तक ही सीमित होनी चाहिए। व्यक्तिगत जीवन के ऐसे किसी पहलू की आलोचना नहीं की जानी चाहिए जिनका संबंध अन्य दलों के नेताओं या

कार्यकर्त्ताओं के सार्वजनिक क्रियाकलाप से न हो। दलों या कार्यकर्त्ताओं की ऐसी कोई आलोचना भी नहीं की जानी चाहिए जिसकी सत्यता स्थापित न हो।

- वोट हासिल करने के लिए जातीय या सांप्रदायिक भावनाओं का सहारा नहीं लेना चाहिए। धार्मिक स्थानों/मस्जिदों, मंदिरों, गिरजाघरों, गुरूद्वारों या पूजा के अन्य स्थलों का चुनाव प्रचार के लिए उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।
- दलों और उनके प्रत्याशियों को ऐसे सभी कार्यों से बचना चाहिए जो निर्वाचन विधि के तहत भ्रष्ट आचरण और अपराध की श्रेणी में आते हैं। मसलन वोटरों को रिश्वत देना, उन्हें डराना, धमकाना व पोलिंग स्टेशन तक ले जाना, पोलिंग स्टेशन के 100 मीटर के अंदर उनसे वोट देने का अनुरोध करना, मतदान की समाप्ति के लिए नियत समय को समाप्त होने वाली 48 घंटे की समयावधि के दौरान सार्वजनिक सभाएं करना।
- राजनीतिक दल और प्रत्याशियों को ध्वजदंड बनाने, झंडा टांगने, सूचनाएँ चिपकाने, नारे लिखने के लिए, किसी व्यक्ति की जमीन, भवन, अहाते, दीवार आदि का इस्तेमाल उसकी अनुमति के बिना नहीं करना चाहिए।
- राजनीतिक दल व उसके प्रत्याशी यह सुनिश्चित करेंगे कि उनके समर्थक, विरोधी दलों की सभाओं, जुलूसों में बाधाएँ न डालें। किसी दल को अपना जुलूस उन स्थानों से लेकर नहीं ले जाना चाहिए, जहाँ दूसरे दल की सभाएं हो रही हों। एक दल द्वारा लगाए गए पोस्टर को दूसरे दल के कार्यकर्त्ताओं द्वारा नहीं हटाया जाना चाहिए।
- राजनीतिक दल और उसके प्रत्याशी लोगों के विचारों या कार्यों का विरोध करने के लिए उनके घरों के सामने प्रदर्शन या धरना आयोजित न करें।

राजनीतिक सभाएँ

- दल या उसके प्रत्याशियों को किसी प्रस्तावित सभा के स्थान और समय के बारे में स्थानीय पुलिस अधिकारियों को पूर्व सूचना देनी चाहिए ताकि वह यातायात को नियंत्रित करने और शांति व्यवस्था बनाए रखने के लिए ज़रूरी इंतज़ाम कर सके।
- दल या अभ्यर्थी को ऐसे स्थान पर सभा आयोजित नहीं करनी चाहिए जहाँ कोई प्रतिबंधात्मक आदेश लागू हो। यदि ऐसे निबंधात्मक आदेश से कोई छूट चाहिए तो इसके लिए समय से आवेदन कर छूट हासिल करनी चाहिए।
- किसी प्रस्तावित सभा स्थल में लाउडस्पीकर के इस्तेमाल या किसी अन्य सुविधा के लिए अनुमति लेनी हो तो दल या प्रत्याशी को संबंधित अधिकारी के पास काफ़ी पहले से आवेदन कर ऐसी मंजूरी हासिल करनी चाहिए। सभा के आयोजकों को सभा में बाधा डालने या अव्यवस्था फैलाने वाले व्यक्तियों से निपटने के लिए

ड्यूटी पर तैनात पुलिस की सहायता करनी चाहिए। उन्हें ख़ुद ऐसे लोगों के ख़िलाफ़ कार्यवाही करनी चाहिए।

जुलूस या रैली

- जुलूस का आयोजन करने वाले दल या प्रत्याशी को पहले ही यह तय कर लेना चाहिए कि जुलूस किस समय, किस मार्ग व स्थान से होकर गुजरेगा और कब समाप्त होगा।
- आयोजक कार्यक्रम के बारे में स्थानीय पुलिस को अग्रिम सूचना दें ताकि आवश्यक इंतज़ाम हो सके।
- आयोजकों को पता कर लेना चाहिए कि जिन इलाकों से होकर जुलूस गुजरना है, वहाँ पर धारा 144 वगैरह तो नहीं लगी है। ऐसे इलाकों के लिए जब तक सक्षम प्राधिकारी से अनुमति न मिले, जुलूस नहीं निक़ला जा सकता।
- जुलूस इस तरह निक़ले जिससे सामान्य यातायात में बाधा न पड़े।
- यदि एक ही रास्ते पर दो या दो से अधिक दल एक ही समय पर जुलूस निकालना चाहते हैं तो उन्हें आपस में समन्वय स्थापित कर ऐसी योजना बनानी चाहिए, जिससे टकराव न हो और यातायात भी बाधित न हो। स्थानीय पुलिस उनकी सहायता करेगी।
- किसी भी राजनीतिक दल को अन्य राजनीतिक दल के नेताओं के पुतले लेकर चलने और उन्हें जलाने का समर्थन नहीं करना चाहिए।
- जुलूस सड़क के दायीं ओर से निकाला जाए।
- मतदान केंद्र के पास लगाए जाने वाले राजनीतिक दलों के कैंप पर किसी प्रकार की भीड़ नहीं लगनी चाहिए।
- कैंप साधारण होना चाहिए। किसी भी कैंप पर पार्टी का चिह्न, झंडा या बैनर नहीं लग सकता।
- मतदान के दिन वाहन चलाने के लिए उसका परमिट प्राप्त करें।

सत्ताधारी दल के लिए

- कार्यकलापों में शिकायत का मौका न दें।
- मंत्रियों को सरकारी दौरों को पार्टी के प्रचार के साथ नहीं जोड़ना चाहिए। पार्टियों के प्रचार के दौरान वे सरकारी मशीनरी तथा कर्मचारियों का उपयोग नहीं कर सकते।
- सरकारी विमान व गाड़ियों का उपयोग पार्टी के प्रचार में नही होना। अगर सरकारी कार्यक्रम में जा रहे हैं तभी इसका उपयोग कर सकते हैं।

- सभा स्थल या हैलीपेड बनाने के लिए किसी मैदान पर सत्तादल का एकाधिकार नहीं होगा। दूसरे दलों को भी उसी नियम और शर्तों के तहत यह स्थान उपलब्ध होगा, जिस नियम और शर्त से सत्तादल को दिया जाएगा।
- विश्राम एवं डाक बंगले, सरकारी आवासों या अन्य सरकारी आवासों पर भी सत्ता दल का एकाधिकार नहीं होगा बल्कि सभी दलों को निर्धारित शर्तों पर आवंटित होगा, लेकिन कोई भी राजनीतिक दल इसका उपयोग चुनाव प्रचार के लिए नहीं करेगा।
- सरकारी पैसे से कोई विज्ञापन समाचार पत्रों या टी.वी. चैनलों पर नहीं दिया जाएगा।

चुनाव आचार संहिता का मतलब है चुनाव आयोग के वे निर्देश जिनका पालन चुनाव ख़त्म होने तक हर पार्टी और उसके उम्मीदवार को करना होता है। ये नियम राजनीतिक पार्टी के साथ बातचीत और सहमति के साथ ही बनाए गए हैं। चुनाव आयोग ने आदर्श आचार संहिता को हिस्सों में बाँट रखा है। साधारण आचरण, मीटिंग और जुलूस के लिए ज़रूरी बातें, सत्ता पर क़ाबिज़ पार्टी और मतदान के दिन का आचरण यानी हर मौके के लिए अलग-अलग क़ायदे क़ानून हैं। आदर्श आचार संहिता का विकास तथा क्रियान्वयन सन् 1967 से माना जाता है यद्यपि 1962 के आम चुनाव के बाद प्राप्त रिपोर्ट यह दर्शाती है कि कमोबेश इन चुनावों में भी आचार संहिता का पालन किया गया। आदर्श आचार संहिता को समय-समय पर वैधानिक दर्ज़ा देने की बात कही जाती है, लेकिन निर्वाचन आयोग आदर्श आचार संहिता को ऐसा दर्ज़ा देने के पक्ष में नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि यदि आदर्श आचार संहिता को क़ानून में बदला जाता है तो कोई भी शिकायत पुलिस/मजिस्ट्रेट के पास पड़ी रहेगी। न्यायिक प्रक्रिया संबंधी जटिलताओं के कारण ऐसी शिकायतों पर निर्णय संभवतः चुनाव पूरा होने के बाद ही हो सकेगा। आदर्श आचार संहिता राजनीतिक दलों की सहमति से तैयार की गई है अतः यह सर्वमान्य है।

❑

रेनू नूर

एक विचार जो हुआ साकार

भारत जैसे सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश में चुनाव की बड़ी महत्ता है। यहाँ आए दिन कोई न कोई चुनाव होते ही रहते हैं; इसका सबसे नवीनतम उदाहरण तो 2017 के आरंभिक महीनों में पाँच राज्यों के विधान सभा चुनाव ही हैं। आए दिन होने वाले चुनावों से देश की अर्थव्यवस्था को तो हानि पहुँचती ही है साथ आम-जन को भी कई परेशानियों का सामना करना पड़ जाता है और ये परेशानियाँ अधिकतर चुनावों के प्रचार-प्रसार के कारण सामने आती हैं।

हमारे देश में चुनावी माहौल एक त्यौहार की तरह है जिसमें गाजे-बाजों के साथ विभिन्न पार्टियों के उम्मीदवार दर-दर जाकर स्वयं को मत देने के लिए हाथ जोड़कर लोगों के सामने विनती करते हैं तथा उन्हें विभिन्न प्रकार के लोभ-लालच देकर अपनी ओर करने का प्रयास भी करते हैं।

इसी चुनाव से संबंधित मुझे मेरा एक वाद-विवाद याद आता है जिसमें मैंने आज से लगभग 14-15 पहले भाग लिया था। वो वाद-विवाद भी चुनावी माहौल के दौरान हुआ था। उस वाद-विवाद का कोई विशेष शीर्षक तो नहीं था पर हाँ उसमें हमें चुनावी माहौल तथा चुनाव की समस्याएँ, उसकी प्रक्रिया आदि किसी भी शीर्षक पर अपने विचार प्रस्तुत करने थे।

मुझे आज भी याद है कि उस दिन मैं सभी के विचारों को बड़ी ध्यानपूर्वक सुन रही थी और सभी ने अपने बड़े ही अच्छे और निर्णायक विचार वहाँ रखे। वहाँ सबसे बड़ी बात यही उठ रही थी कि हमें अपने मत का पूर्ण प्रयोग करना चाहिए और यदि हम अपने मत का प्रयोग नहीं करते हैं तो यह लोकतंत्र के नियमों का एक प्रकार से उल्लंघन ही होगा क्योंकि हम सदैव से यही सुनते आए हैं कि एक वोट से कोई जीत सकता है तो कोई हार भी सकता है। मैं भी इस बात से पूरी तरह सहमत हूँ

क्योंकि यह 100 प्रतिशत सत्य है। परंतु मेरे मन में एक विचार सदा ही आता रहा कि क्या मुझे तब भी वोट देना पड़ेगा, जबकि मैं जानती हूँ कि चुनाव में खड़े या नामांकित किए गए प्रत्याशियों में से कोई भी प्रत्याशी सत्ता में आने लायक ही न हो? मैं न चाहते हुए भी क्यों किसी ऐसे व्यक्ति को अपना वोट दूँ जो हमें विकास पथ की ओर ले जाने की बागडोर संभालने में जरा भी काबिल न हो?

जब मैंने अपनी यह बात सभी के सामने रखी तो मुझे सभी के नकारात्मक रवैये का सामना करना पड़ा, जो कि प्रत्याशित भी था। ये नकारात्मक रवैया इसी कारण था क्योंकि हम सदा से यही सुनते आए हैं कि वोट देना तो हमारा अधिकार है जो हमें पूरी तरह से मिलना चाहिए, जिसका हमें उपयोग भी करना चाहिए। उस वाद-विवाद में मेरा यह विचार सुनकर तो मुझ पर विभिन्न तरह के प्रश्नों की बौछार होने लगी कि मेरा यह विचार क्यों है?, क्या मेरे एक के वोट न देने से सत्ता में ग़लत व्यक्ति आने से रुक जाएँगे?, क्या मेरा अनुकरण करते हुए लोग वोट न दें तो चुनाव-प्रक्रिया में परिवर्तन आएगा? आदि ऐसे प्रश्न थे जिनका जवाब मुझे उस दौरान देना पड़ा।

जब मैंने कहा कि मैं ऐसे किसी भी व्यक्ति को वोट नहीं दे सकती जो सत्ता में आने के लायक ही नहीं और यदि सभी प्रत्याशी एक जैसी श्रेणी के हुए तो मैं अपने वोट का उपयोग ही नहीं करूँगी क्योंकि मैं शासन की बागडोर ऐसे व्यक्ति के हाथ में देने की ग़लती में अपना जरा भी योगदान नहीं दे सकती जो देश के विकास से पहले अपने विकास को महत्त्व दे, जो किसी भी प्रकार से उचित नहीं है।

मेरे इस विचार से असहमति जताते हुए किसी ने मुझ से कहा कि हम मानते हैं कि सत्ता में आने वाले अधिकतर लोग सर्वप्रथम अपना हित चाहते हैं, उनमें से बहुत से लोग भ्रष्ट होते हैं लेकिन सभी के बारे में जानते-समझते हुए हमें उस व्यक्ति को चुनना चाहिए जो सबसे कम भ्रष्ट है और जिसके विरुद्ध कम-से-कम क़ानूनी बंदिशें हों। लेकिन मेरा मन इस तथ्य को स्वीकार करने में भी अक्षम रहा और मैंने कहा कि इसकी क्या गारंटी है कि सत्ता में आने के पश्चात् वह और अधिक भ्रष्ट, और अधिक उग्र नहीं होगा। सत्ता का मोह तो ऐसा है जो कि शरीफ से शरीफ व्यक्ति को राजनीति तथा कूटनीतियों से और अधिक भ्रष्ट बना देता है, फिर पहले से ही भ्रष्ट लोगों का क्या भरोसा?

उस समय मेरे इस विचार से शायद ही कोई सहमत हुआ होगा कि किसी ग़लत प्रत्याशी को वोट देने से अच्छा है कि आप अपने वोट का प्रयोग ही न करें। परंतु आज जब चुनाव में नोटा का अधिकार सामने आया है तो मुझे एक बात की अत्यंत प्रसन्नता होती है कि मेरा वह विचार अत्यधिक संशोधित रूप में सबके सामने है।

नोटा (NOTA – None of the above) भारतीय लोकतंत्र में मतदाताओं के उस अधिकार को दर्शाता है, जिसमें कि वह किसी क्षेत्र में चुनाव लड़ रहे प्रत्याशियों से संतुष्ट नहीं है तो उन्हें इस बात की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है कि वे किसी भी प्रत्याशी का चुनाव न करें। निर्वाचन आयोग ने 2009 में उच्चतम न्यायालय को इस संदर्भ में निर्णय देने की गुजारिश की थी। 'द पीपल युनियन फॉर सिविल लिबर्टीज' नामक एक गैर-सरकारी संगठन द्वारा नोटा के संदर्भ मे दायर एक जनहित याचिका पर उच्चतम न्यायालय ने अपना फैसला सुनाया था। वर्ष 2013 में उच्चतम न्यायालय ने नोटा को मान्यता प्रदान करते हुए निर्वाचन आयोग से सभी वोटिंग मशीनों में इसके लिए बटन बनाने का आदेश दिया जिसके फलस्वरूप आज हम सभी EVM मशीनों में NOTA की एक विशेष जगह पाते हैं।

मुझे खुशी सिर्फ़ इस बात की ही नहीं है कि मेरे विचार का एक सार्थक संशोधित रूप 'नोटा' हमारे सामने है बल्कि खुशी इस बात की भी है कि एक नई तकनीक VVPAT का भी चुनाव प्रक्रिया में प्रतिपादन हुआ; यह मतदाताओं को फीडबैक देने का वह तरीक़ा है जिसमें मतदाता पावती रसीद या वोटर वेरिफाइड पेपर ऑडिट ट्रायल मतपत्र रहित मतदान प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। यह व्यवस्था मतदाता को इस बात की पुष्टि करने की अनुमति देती है कि उसकी इच्छानुसार मत पड़ा है या नहीं। समझा जाता है कि सरकार ने EVM मशीनों में की व्यवस्था करने के लिए धनराशि भी स्वीकृत कर दी है। अब जब भी देश में मतदान होगा, VVPAT का प्रयोग अवश्य होगा।

इस प्रकार देखा जाए तो हमारे देश की चुनाव प्रक्रिया में समय-समय पर सुधार किए जा रहे हैं जिससे कि चुनाव कार्य सरल और निष्पक्ष रूप से कर पाने में सफलता प्राप्त हो रही है।

❑

डॉ. साधना गुप्ता

हिंदी उपन्यासों में चुनाव सुधार

स्व से शासित होकर राज्य व्यवस्था को बुनियादी ढंग से संचालित करने की व्यवस्था को लोकतंत्र की संज्ञा दी जाती है और इसकी अनवरत क्रियाशीलता के लिए संविधान में चुनाव का प्रावधान किया जाता है। चुनाव का पर्यवेक्षण, निर्देशन, नियंत्रण कर स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव संपादन के लिए हमारे संविधान के अनुच्छेद 324 से 329 में चुनाव आयोग की स्थापना की गई।

चूँकि लोकतंत्र सतत चलने वाली प्रक्रिया है, इसकी जीवंतता में कोई बाधा न आए, इसलिए चुनाव सुधार की आवश्यकता भी अनुभव हुई और चुनाव के दौरान अपनाए जाने वाले भ्रष्ट तरीक़ों को समाप्त करने के लिए राजनैतिक दलों के नेताओं, प्रबुद्ध नागरिकों ने अनेक मंचों से सुधार संबंधी विचार रखे। परिणामस्वरूप 1988 में संसद में दो विधेयक ''संविधान संशोधन विधेयक एवं जन प्रतिनिधित्व विधेयक पास कराए गए। परंतु व्यावहारिक उदाहरण इस बात की गवाही देते हैं कि ये नाकाफ़ी हैं, वस्तुतः हमारे लोकतंत्र में चुनाव ऐसी पुस्तक के समान है जिसका मुख्य पृष्ठ बहुत आकर्षक है परंतु अंदर लिखे सूत्र अपना अर्थ खो चुके हैं। चुनाव संपन्न कराते समय चुनाव आयोग के समक्ष काले धन का प्रयोग, सरकारी तंत्र का दुरुपयोग, फ़र्ज़ी मतदान, मतदाता सूची में हेरफेर, बलपूर्वक मतदान, धन-बाहुबल के द्वारा वोटिंग इत्यादि अनेक समस्याएँ आती हैं। हिंदी भाषा के क़लमकारों ने अपनी रचनाओं में इन्हें सजीवता से चित्रित किया हैं। विस्तार भय से बचने के लिए हम कुछ उपन्यासों की कथावस्तु के माध्यम से अपनी बात रखना चाहेंगे।

आज चुनाव में विजयी हो संसद में बैठ करोड़ों भारतीयों के भाग्य का फैसला करने वाले राजनेताओं को स्व विकास में ही देश विकास नज़र आ रहा है। साहित्यकार राजनेताओं की इस मानसिकता से चिंतित हैं, उन्हें सचेत करना चाहते हैं। अपने इस उद्देश्य की

पूर्ति हेतु राजनेताओं के विविध रूपों के चित्रण के माध्यम से उनकी मानसिकता को उजागर किया है। आज राजनेताओं का प्रमुख ध्येय कुर्सी प्राप्त करना रह गया है, जिसे प्राप्त करते ही सत्ता के मद में मस्त राजनेताओं की कथनी-करनी में अंतर आ जाता है। चुनावी वायदों को पूर्ण करने के नाम पर उनके स्वर बेसुरे हो जाते हैं। जनता के आईने में अपनी सुंदर छवि बनाकर 'सत्ता' प्राप्त करने वाले रंगे सियारों की मानसिकता का वर्णन 'प्रेमलाल भट्ट' के उपन्यास 'राजनेता' में दृष्टव्य है। जनता भी ऐसे आश्वासनों को बाख़ूबी समझती है -- यह तथ्य उपन्यास के पात्र देवीप्रसाद रामाश्रव्य के कथन से स्वतः स्पष्ट है -- ''पंड़ित जी, आज का तथा-कथित राजनेता और वह भी किसी को वचन दे, यह क्या कह रहे हैं आप? यह संभवतः दुनिया का सबसे बड़ा झूठ होगा। पंडित जी, इनके शब्द-कोश में वचन का अर्थ होता है -- कोरा आश्वासन।''

हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि समाजवाद लाने का आश्वासन आज़ादी के 70 वर्षों के बाद भी खोखला ही साबित हुआ हैं, फिर भी जो आश्वासनों की जितनी अधिक ख़ैरात बाँटने में सफल होता है वह राजनीति में भी उतना ही अधिक सफल हैं। यहाँ यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि आज समाजवाद केवल नारों तक ही सीमित रह गया है। राजनेताओं की भाषा में जितनी मिठास होती है, उससे कहीं अधिक कड़वाहट और छल उसके व्यापक अर्थ में निहित होता है। यशवंत सिंह नाहर के 'चालीस साल बाद' में विजयी इंद्र सिंह का कथन है -- ''आपके प्यार ने मुझे जिताया, आपका प्यार ही मुझे आगे बढ़ाएगा, लेकिन मेरे लिए सबसे बड़ा काम होगा -- मेरे क्षेत्र में व्याप्त ग़रीबी, निरक्षरता को दूर करना।'' इसी प्रकार मन्नू भंडारी का 'महाभोज' चुनावी दावपेचों का जीवंत दस्तावेज़ है जिसमें चुनावी भाषण देते हुए सुकूल बाबू का संबोधन हैं -- ''यह मत सोचिए कि मैं यहाँ आपसे वोट माँगने आया हूँ। मैं खड़ा हूँ आप लोगों के हक़ की लड़ाई के लिए।'' यहाँ यह कहने की आवश्यकता नहीं हैं, प्रबुद्ध पाठक जानते हैं कि सुकूल बाबू कुर्सी की लड़ाई लड़ रहे हैं, यही उनका मूल मंतव्य है। साक्षरता, बेरोज़गारी उन्मूलन, भ्रष्टाचार एवं महँगाई समाप्त करने, सुरक्षित जीवन तथा बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति का आश्वासन प्रत्येक राजनेता अपने चुनावी भाषण में देता है, आज मतदाताओं को आश्वासनों के चक्रव्यूह में फँसा चुनाव जीतना हमारे देश में नेताओं की परिपाटी बन गई है।

परिणाम उनके लिए सत्ता, त्याग एवं सेवा के लिए नहीं, वरन् समाज के दुर्बल पक्ष पर अत्याचार करने के लिए है। 'महाभोज' में दा साहब का कथन हैं -- ''सब अपने आदमियों को घुसाने की तिकड़म में लगे रहते हैं ....काम करने के लिए कोई तैयार नहीं, पद के लिए सभी उत्सुक व उतावले हैं।'' आज मूल्यहीनता ने राजनीति

को खोखला कर दिया है। चुनावों में जो गठबंधन होते हैं, उनका लक्ष्य सत्ता हथियाना होता है। राजनीति की नैतिकता राजनेताओं में लेशमात्र भी दिखलाई नहीं देती। परिणाम स्वरूप दल के अंदर भी गुट की राजनीति खेली जाती है। सत्ताधारी नेता को अपने ही दलों के गुटों को संभालने में नाकों चने चबाने पड़ते हैं, तभी तो एक और मुख्यमंत्री के शंकर भाई प्रामाणिक राजनेता के रूप में कहते हैं -- ''अरविंद जी, आप याद रखिए, हमारी यह कांग्रेस पार्टी कभी-न-कभी इन्हीं विरोधियों और भ्रष्टाचार के कारण अपनी शक्ति और सत्ता दोनों को खो देगी।'' इस कथन को सत्य होते आज हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं। वास्तव में देखा जाए तो इस राजनीतिक भ्रष्टाचार की जड़ हमारी चुनाव प्रणाली में निहित है। आज धन के बिना चुनाव लड़ने की बात करना ही बेमानी है, हास्यास्पद है।'' टिकट प्राप्ति से लेकर मंत्री पद तक'', -- सब धन की ही माया है। अतः राजनेता येन-केन प्रकारेण इतना धन कमा लेना चाहता हैं जो चुनाव के समय पानी की तरह बहाने पर भी कम न पड़े। तेल तो तिल में से ही निकालना है, अतः इस हेतु राजनीतिक पार्टियों में बढ़ता भ्रष्टाचार जोक की तरह सामान्य जनता का ख़ून चूसने लगा। नेताओं द्वारा सार्वजनिक धन का दुरुपयोग, भाई-भतीजावाद की नीति अपनाकार सभी क्षेत्रों में अपने रिश्तेदारों को बैठाकर किया जाने लगा। इसका सटीक चित्रण 'चालीस साल बाद' में हुआ हैं -- ''भाई साहब, जो भी कहा जाए, वह थोड़ा है, विधायक तबादलों में खो रहे हैं ....लोकतंत्र में भ्रष्टाचार ही लोकनायक हो गया हैं।'' बंदरबाट की इस प्रवृत्ति ने राजनीति का अपराधीकरण कर दिया है। निजी स्वार्थ के लिए भारतीय नीतियों को बेचने वाले राजनेता रक्षक के स्थान पर भक्षक बन गए है। 'दारूलशफा' के रंगीन राय का स्पष्ट कथन हैं -- ''हमारा यही कहना है, आज नेता का चुनाव जो किया है, वह ग़लत है। उत्सुकदास के ऊपर भ्रष्टाचार के गंभीर आरोप हैं जिससे पूरी पार्टी में असंतोष की ज्वाला धधक रही है।''

इसी प्रकार आज अवसरवादी नेताओं द्वारा सत्ता प्राप्ति के लिए चुनावों में दिखाई जाने वाली राजनीतिक पैंतरेबाज़ी का ख़ुलासा भी कलमकारों द्वारा किया गया हैं। 'एक और मुख्यमंत्री' में मुख्यमंत्री अरविंद का यह कथन दृष्टव्य हैं -- ''तुम बनारसी, ठहरे गधे-के-गधे। चुतर आदमी वह है जो कोयले की दलाली करे, पर अपने हाथ काले न होने दे।''

चुनावी घोषणाओं की पूर्ति के नाम पर पंचवर्षीय योजनाओं से देश का विकास कितना हुआ हैं? इसकी पोल खोलता है -- ''एक मंत्री स्वर्ग लोक' का पात्र 'इंदु' 'अब ज़रा बताइए तो, चार-चार पंच वार्षिक योजनाएँ बनाकर कितना विकास कर लिया था आपने देश का? उद्धार यदि हुआ भी तो बड़े-बड़े उद्योगपतियों का, व्यापारियों का, नेताओं

का, सरकारी कर्मचारियों का, साधारण जनता तो उलटे पहले से ज़्यादा भूखों मरने लगी।'' इसी प्रकार, कैलाश कल्पित भी 'स्वराज ज़िंदाबाद' में इस विषय को बेलाग कथन में वाणी देते हैं -- ''प्रदेश में सूखा पड़ा है और हमारे विधायक और मंत्री अपने वेतन भत्तों और सुविधाओं में विस्तार का बिल पास कर रहे हैं। यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि आज धन-पद प्राप्ति के लिए राजनेता बिकाऊ वस्तु बन गए हैं, क्योंकि वर्तमान राजनीति में धन व पद के सहारे विजयश्री का वरण कर सत्ता प्राप्ति आसान हैं। इन सभी चित्रणों के माध्यम से लेखक का उद्देश्य यह ध्वनित करना है कि चुनाव में धन के दुरुपयोग पर रोक लगानी आवश्यक है।

पाँच वर्ष के अंतराल पर संसद एवं विधान-सभाओं के चुनाव की व्यवस्था का प्रावधान हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था का आधार हैं। चुनाव लड़ने के लिए किसी पंजीकृत पार्टी का उम्मीदवार बनने के प्रयास में नेता दल-बदलने एवं अवसरवादी प्रवृत्ति अपनाने में नहीं हिचकते। परिणाम, ''कल तक जो नेता विपक्ष के दोषों को गिनवा रहे थे, आज उनका गुणगान करते नज़र आते हैं। इस अवसरवादी प्रवृत्ति पर यादवेंद्र शर्मा ने 'प्रजाराम' में टिप्पणी की है -- ''यह दल बदलना भी बहुत ही घिनौनी अनैतिकता है। यह तो सरासर प्रजा के साथ धोखा है, कपट है।'' लेखक ने समाधान भी प्रस्तुत किया है -- ''वह दुबारा उस आदमी को अपने दल में कभी न लें, ताकि दलबदलुओं को एक सीख मिले, एक दंड मिले। यदि इतनी कठोर नैतिक संहिता हो जाए तो राष्ट्र के नेताओं का चरित्र ज़रूर बनेगा।''

सत्ता संघर्ष में साम-दाम-दंड-भेद की युक्ति अपनाने वाले नेताओं में न किसी दल के प्रति निष्ठा है, न कोई सिद्धांत। यह स्थिति प्रजातंत्र के लिए घातक है। रचनाकार इस विभीषिका की ओर चिंतनशील पाठक का ध्यान आकृष्ट करवाना चाहता है। उदाहरण के लिए एक और मुख्यमंत्री में कृष्ण कुमार बिस्सा का कथन है -- ''लोकतंत्र में जितने अधिक दल होंगे, उतने ही प्रजातंत्र के लिए घातक होंगे।''

सिद्धांतहीनता के साथ चरित्र हीनता, 'एक तो करेला, दूजा नीम चढ़ा' की उक्ति को चरितार्थ करती है। जमाखोरों, तस्करों और गुंडों से घनिष्ट संबंध रखने वाले राजनेताओं का चरित्र रम, रमा और रमी के इर्द-गिर्द ही चक्कर लगाता नज़र आता हैं। महिला सशक्तिकरण की ध्वजा तले राजनीति में महिलाओं का प्रवेश हुआ। परंतु सफलता की बुलंदी छूने हेतु मुख्य राजनेताओं का हाथ थामना, उन्हें ऐसे चक्रव्यूह में फँसा देता है जहाँ न जीना संभव है, न मृत्यु। दारूलशफ़ा में विमला देवी और लक्ष्मी एक और मुख्यमंत्री में 'शची' के चरित्रांकन द्वारा नैतिक पतन की इस स्थिति को दर्शाने का प्रयास किया है। यहाँ यह कहना अन्यथा न होगा कि आज नारी देह ने रिश्वत का रूप ले लिया

है, जिसे कहीं अपनी महत्त्वाकाँक्षा के कारण वह स्वयं देती है तो कहीं मज़बूरी वश एवं कहीं पुरुष द्वारा दी जाती हैं। इस सभी स्थितियों का चित्रण उपन्यासों में किया गया है। एक और मुख्यमंत्री की 'शची', दारूलशफा की 'विमलादेवी', पूजाराम की 'मनोरमा', दंड विधान की 'मीनू' का चरित्र प्रथम प्रकार का, चालीस साल बाद की 'कामायनी' का चरित्र द्वितीय प्रकार का एवं दारूलशफ़ा की 'विमला देवी' का चरित्र तृतीय प्रकार को वाणी देता हैं। दारूलशफ़ा का उत्सुकदास लोबीराम को अपने पक्ष में करने के लिए 'विमलादेवी' को लोबीराम के चरणों में अर्पित कर देता है, क्योंकि वह जानता है कि ''नारी लोबीराम की कमज़ोरी है।'' चालीस साल बाद में 'श्रवण कुमार' का स्पष्ट कथन हैं -- ''भाई आजकल यह अभियोग राजनेताओं पर लगाया जाता है कि वे नारी के सतीत्व को लूटकर उसका कार्य संपादन करते हैं, नारी का शरीर रिश्वत है।'' अपने साथ होने वाले इस शारीरिक शोषण की टीस उसे कितनी है इसका चित्रण भी रचनाकार ने किया है। एक और मुख्यमंत्री की 'शची' अरविंद से कहती है -- ''और यहाँ तुम्हारी कृपा से मैं रानी-सा जीवन गुज़ार रही हूँ... अपने को पवित्र-सी महसूस करती हूँ, फिर भी तुम्हारे द्वारा अपवित्र हो जाती हूँ।

सत्ता सुख भोगने वाले नेताओं की कथनी-करनी में ज़मीन-आसमाँ का अंतर होता है। स्वदेशी एवं देश-प्रेम के नाम पर सफ़ेद पोशी का दिखावा करने वाले नेताओं की आसुरी प्रवृत्ति का शब्द चित्र स्वराज ज़िंदाबाद के 'रामेश्वर' तथा किस्सा लोकतंत्र का के 'चौधरी जगतपाल' के रूप में देखा जा सकता है।

यहाँ समाजवाद के नाम पर देश में फैलने वाले गुंडाराज की चर्चा भी आवश्यक है। आज की राजनीति में सत्ताधारी ही अत्याचार करते हैं, दंगा-फ़साद करवाते हैं और डाकुओं को राजनैतिक संरक्षण देकर उनका हौसला बढ़ाते हैं। महाभोज, चालीस साल बाद इत्यादि उपन्यासों को उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। 'चालीस साल बाद' के मुख्यमंत्री का कथन है -- ''स्वंय विधायक ने डकैतों को आश्रय दे रखा है और आज उनके निवास पर से चार डाकुओं को पकड़ा है।'' सच्चाई तो यह है कि आज हर राजनीतिक दल में गुंडों को धन व आतंक के बल पर चुनावी टिकट मिल जाता है और वे चुनकर भी आ जाते हैं। राजनीति का यह अपराधीकरण अत्यंत चिंतनीय विषय हैं, जिसकी ओर जागरूक पाठक का ध्यान आकर्षित कर रचनाकार चुनाव प्रक्रिया में आवश्यक परिवर्तन की आकांक्षा अभिव्यक्त करता है।

सार रूप में लोकतांत्रिक व्यवस्था में चुनाव सफल लोकतंत्र की नींव है, आवश्यक शर्त है, जिसका अर्थ केवल शांतिपूर्ण मतदान से न होकर उस संपूर्ण प्रक्रिया से है जिसके माध्यम से चरित्रवान, ईमानदार, देशभक्त, प्रबुद्ध, कर्मठ, सत्यनिष्ठ, कर्त्तव्यनिष्ठ,

वीर, दृढ़-निश्चयी, निडर राजनेता शासन संचालन हेतु संसद एवं विधान परिषद्रों में पहुँचे एवं जनता व देशहित में कार्य करें। चुनाव प्रक्रिया में क़ानून के माध्यम से सुधार तो हमने कई किए पर बुनियादी खामियाँ, जिनका संबंध नैतिक एवं मानसिक उत्थान से हैं, नहीं हुआ। क्योंकि सुधार प्रक्रिया एक ऐसी पुस्तक के समान है जिसके बीस प्रतिशत पृष्ठ क़ानून द्वारा लिखे जाते हैं और शेष अस्सी प्रतिशत जनता की जागरूकता द्वारा। अतः अपने उपन्यासों में जीवन चरित्र चित्रित कर लेखक मुर्दे की नींद सोए समाज के दिल बहलाव की अपेक्षा उसे झकझोर कर जगाना चाहता है, कहना चाहता है -- ''जब तक हमारे राजनेताओं की यह सोच बदलेगी नहीं, तब तक क़ानून द्वारा थोपे गए सभी सुधार असफल होते रहेंगे। वे राजनेता, जनता को कभी कमतर नहीं समझें, क्योंकि लोकतंत्र में जनता की ऊर्जा राख के ढ़ेर के नीचे सुलगते अंगारों के समान है जो दिखलाई भले ही न दे, पर फैल कर सब कुछ स्वाहा करने की सामर्थ्य रखती है।''

❑

आरती

लोकतंत्र में चुनाव और भ्रष्टाचार

लोकतंत्र

लोगों का, लोगों के लिए, लोगों के द्वारा बनाया गया तंत्र लोकतंत्र कहलाता है। लोकतंत्र एक ऐसी शासन व्यवस्था है, जिसमें जनता अपना शासक ख़ुद चुनती है। लोकतंत्र एक ऐसी राजनीतिक प्रणाली है, जो पदाधिकारियों को बदल देने के लिए नियमित संवैधानिक अवसर प्रदान करती है और एक ऐसे रचनातंत्र का प्रावधान करती है जिसके तहत जनसंख्या का एक विशाल हिस्सा राजनीतिक प्रभार प्राप्त करने के इच्छुक प्रतियोगियों में से मनोनुकूल चयन कर महत्त्वपूर्ण निर्णयों को प्रभावित करती है।

लोकतंत्र में चुनाव

भारत में लोकतंत्र सिर्फ़ एक राजनीतिक व्यवस्था नहीं है, बल्कि जीवन का हिस्सा है। यहाँ हर सामाजिक-राजनीतिक संगठन लोकतंत्र के सिद्धांतों पर ही खड़ा है। लोकतंत्र में चुनावों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। बिना चुनाव के लोकतंत्र बन ही नहीं सकता अन्यथा वह राजतंत्र बन जाएगा। लोकतांत्रिक व्यवस्था सुनिश्चित रहे, इसके लिए चुनावों का महत्त्व असंदिग्ध है। भारत चुनावों का देश है। चुनाव माध्यम है, अपना शासक चुनने का।

चुनाव में भ्रष्टाचार

वर्तमान में चुनाव भ्रष्टाचार रूपी दीमक से ग्रस्त है। आज चुनाव महँगे हो गए है, ये हर कोई जानता है। पंचायत के चुनाव में दस-पंद्रह लाख ख़र्च आम बात है। आज चुनाव, चुनाव न रहकर व्यापार बन गया है। इस व्यापार में एक लगाओ सौ पाओ की नीति कार्य कर रही है। ऐसा लगता है मानो चुनाव, चुनाव न रह कर धन

उपार्जन का साधन बन गया है। निर्वाचित प्रतिनिधि को यह ही पता नहीं होता है कि वे किस काम के लिए चुने गए है। असल में जनता को भी नहीं पता होता है कि उन्होंने किसे और किस काम के लिए चुना है। यही कार्य नेता भी करते हैं जब वोट माँगने जनता के बीच जाते हैं तो वे सभी वायदे कर देते हैं जो कि उनके क्षेत्र में नहीं आते। अब सड़के बनवाने का कार्य सांसद निधि से भी हो रहा है और पार्षद के पैसों से भी। न तो कर्त्तव्यों का भान है और न ही अधिकारों की परवाह। ये नेता अपने भाषणों में 100 दिनों में जटिलतम समस्याओं के समाधान पेश करने की घोषणा करके अपने को भी हास्यास्पद बना लेते हैं।

चुनाव में नेता अपने धन, बल और बाहुबल का अधिकाधिक प्रयोग करते हैं। भय और आंतक के माहौल में मतदाता वोट नहीं दे पाता, बल्कि उनके मतों का अपहरण हो जाता है। उनसे यह हक़ छीन लिया जाता है कि उन्हें किसे वोट देना है और किसे नहीं।

चुनाव में रुपयों को पानी की तरह बहाया जाता है। सबसे अधिक टेलीविज़न पर प्रचार किया जाता है जिसमें बहुत अधिक रुपए ख़र्च होते है, अन्य प्रचार माध्यमों में भी अपना प्रचार कर ये रुपयों को ख़र्च करते हैं। जब इन (प्रतिनिधि) से पूछा जाता है कि 'इन्कम' कितनी है तो साफ़-साफ़ नहीं बोलते। भाषण देते वक़्त तो कहते हैं कि सड़कें बनवाएँगे, जहाँ बिजली नहीं वहाँ बिजली की व्यवस्था करेंगे और न जाने क्या-क्या, लेकिन जब करने की बात आती है तो इनके पास धन नहीं होता। इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में विज्ञापन पर अत्यधिक धन ख़र्च कर देते हैं। चुनावों में अंधाधुंध ख़र्चा काले धन को बढ़ावा देता है।

आज खुल्लम-खुल्ला चुनाव की आचार संहिता का उल्लंघन हो रहा है। यह राजनीतिक प्रचार का सांप्रदायिक तरीक़ा है। नेता धर्म और जाति को आधार बनाकर चुनाव लड़ते हैं, जिसमें इनका फ़ायदा होता है ये वही कार्य करते हैं, जनता को फ़ायदा हो या नुक़सान, इससे इनका कोई सरोकार नहीं होता। इन्हें ये पता होता है कि भाषण में क्या बोलना है जिससे जनता इन्हें वोट दे। सभी जातियों और संप्रदायों के वोट बैंक बन गए जिन्हें सिर्फ़ पारंपरिक अपील से चुनावी मुहिम में जोड़ा जा सकता है।

चुनाव में भ्रष्टाचार का एक मुद्दा यह भी है-वंशवाद। सत्ता में वंशवाद एक अलग बात है लेकिन रातनीति में वंशवाद भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है। प्रतिनिधि की बात तो अलग है कोई भी व्यक्ति यह नहीं चाहेगा कि उसका वंश पिछड़ जाए या इन्हें जीवन की सुविधाएँ उपलब्ध न हो जिनके वे अभ्यस्त हैं, इसलिए ये अपने वंशजों को बढ़ावा देते हैं किसी अन्य को नहीं। पदों के दुरुपयोग के अधिकांश मामले इसीलिए

उठते हैं। आज जो जितना आधुनिक है या जो लोग आधुनिकता की सबसे अधिक दुहाई देते हैं वे ही लोग अपने सगे-संबंधियों को आगे बढ़ाने में सबसे अधिक रूचि भी दिखलाते हैं। हाल ही में हुए चुनाव में यह सामने आया है कि उत्तर प्रदेश का चुनाव पूरी तरह धर्म और जाति पर आधारित है लेकिन शोर ऐसे मचाया जा रहा है जैसे वहाँ सर्वधर्म और सर्वजाति समरूपता हो।

संसदीय लोकतंत्र और प्रशासन के पद पर बैठे ये लोग अपने फैसले से किसी भी व्यक्ति को विशाल धनराशि का लाभ दे सकते हैं या हानि पहुँचा सकते हैं। जब तक ये ऊँचे पद वाले ऐसा करते रहेंगे तब तक भ्रष्टाचार युक्त समाज मुक्त नहीं हो पाएगा।

चुनाव एक ऐसी व्यवस्था बन गया है जिससे अधिक से अधिक धन कमाया जा सके। एक तरफ एक विशाल प्रतिष्ठान हैं जिनके पास अकूत धन हैं और दूसरी तरफ सरकारी सत्ता है जिसके हाथ में इन प्रतिष्ठानों को सुविधा देने या वंचित करने का अधिकार है। यह कैसी विडंबना है कि इस चुनाव अभियान में असली समस्याएँ उभर कर नहीं आती बल्कि सामने आता है तो यह कि कौन बनेगा प्रधानमंत्री। अगर हम यह कहे कि चुनाव सर्वोच्च शासक के राज्याभिषेक का महोत्सव भर रह गया है तो यह अतिशयोक्ति न होगी।

नेता लोग भाषण में कभी भी प्रमुख मुद्दों को नहीं उठाते। ये कभी भी भ्रष्टाचार को चुनावी मुद्दा नहीं बनाते जबकि तहलका, तेलगी, प्रतिभूति जैसे घोटाले होते रहे हैं। जिसमें जनता का हज़ारों करोड़ रुपया दाव पर लग जाता है, जिसे ये लोग आसानी से हजम कर जाते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि इन घोटालों में जिन लोगों का नाम सामने आता है वे सीना ताने चुनावी मैदान में सूत्रधार की भूमिका निभाते रहे हैं।

कोई भी राजनीतिक पार्टी अपने चंदे का हिसाब नहीं देती और इन्हीं पैसों का इस्तेमाल वह चुनाव में बाँटने और उपहार बाँटने जैसे आदि कार्यों में करती है। यह एक प्रकार का राजनीतिक भ्रष्टाचार है। यहीं से पक्षपात और घूसखोरी की शुरुआत होती है। कहने को तो उपरोक्त सभी बातें पाठ्य-पुस्तकों में वर्णित है लेकिन भाषा व परीक्षा में नंबर लाने के लिए रटंत से अधिक नहीं है। बहुत से लोगों का वोट न डालना भी चुनावों में उम्मीदवारों की बढ़ती संख्या और बढ़ता व्यय भ्रष्टाचार को बढ़ावा देना है।

आज लोकतंत्र की परिभाषा बदल गई है। सभी को 'मज़बूत नहीं मज़बूर' सरकार चाहिए। आज चुनाव आम आदमी की पहुँच से दूर होता जा रहा है, उसी का परिणाम

है कि उससे उपजा प्रतिनिधि भी जनता से बहुत दूर है। यह सब इसलिए हो रहा है, क्योंकि आज चुनाव चैनलों पर लड़ा और जीता जा रहा है। यह जनतंत्र की जीत नहीं लोकतंत्र की हार है।

अंततः कहा जा सकता है कि आज भ्रष्टाचार अपने चरमोत्कर्ष पर है। यदि हमें इसे ख़त्म करना है तो चुनावों में धन, बल और बाहुबल को ख़त्म करना होगा। राजनीतिक पार्टी लोकतंत्र और वित्तीय पारदर्शिता, इन दोनों में सुधार के बिना चुनाव को स्वच्छ नहीं बनाया जा सकता। यदि भ्रष्टाचार को पूर्ण रूप से ख़त्म करना है तो हमें उम्मीदवार को शैक्षिक योग्यता, अनुभव और आपराधिक रिकार्ड जैसे शर्तों पर परखना होगा। तभी हम पूरे तंत्र को भ्रष्टाचार जैसी बड़ी बीमारी से निज़ात दे पाएँगे।

❑

खंड : 2

चुनाव और हिंदी

डॉ योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरुण'

लोकतंत्र को शक्ति प्रदान करती हिंदी

किसी भी राष्ट्र में लोकतंत्र होना उस राष्ट्र के जन-जन का सम्मान माना जाता है। ब्रिटिश शासन की लंबी गुलामी के बाद जब सन् 1947 में भारत को स्वाधीनता मिली, तो हमारे नीति-निर्धारकों ने देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था लागू करने का निर्णय लिया, जिसके लिए तब एक 'संविधान सभा' का गठन किया गया। भारत का संविधान कैसा हो? उसमे कैसी शासन-व्यवस्था को लागू करने का वचन दिया जाए? जो संविधान बने, वह जन-जन की आकांक्षाओं के अनुरूप बनेगा या नहीं? ये सारे प्रश्न संविधान सभा के समक्ष थे, जिनको सुलझाने का भागीरथ प्रयास भारत के राजनेताओं ने मनोयोगपूर्वक किया। डॉ. भीम राव अंबेडकर के नेतृत्व में भारत का जो संविधान बनाया गया, उसमें विश्व के प्रतिष्ठित लोकतांत्रिक राष्ट्रों के संविधानों से अच्छी-अच्छी बातें चुन-चुन कर रखी गई।

इतिहास इस सत्य का साक्षी है कि 1857 के स्वाधीनता संग्राम की लड़ाई जब लड़ी गई थी, तब अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद से लोहा लेने में सबसे अधिक कारगर हथियार हमारी 'हिंदी' ही बनी थी और जन-जन में क्रांति की ज्वाला धधकाने का काम जहाँ 'रोटी और कमल' के प्रतीक ने किया था, वहीं कवियों की हिंदी कविताओं ने क्रांति की ज्वाला को दहकाने में सबसे बड़ी भूमिका निभाई थी। भले ही 1857 की हमारी क्रांति सफल नहीं हो सकी थी, लेकिन 'हिंदी भाषा' की अजेय शक्ति का अनुमान हमें तभी हो गया था।

26 जनवरी, 1950 को जब भारत के संविधान को स्वीकृति मिली, तो हमारा गणतंत्र भारत 'लोकतांत्रिक गणराज्य' बना और हमने अपने देश के शासन हेतु जिस प्रणाली को चुना, वह थी 'संघ और राज्य शासन प्रणाली', जिसमे पूरा देश एक केंद्रीय शासन के अंतर्गत विभिन्न राज्यों की सरकारों के माध्यम से लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाने

के लिए तैयार हुआ। हमने सर्वोच्च स्तर पर चार स्तम्भ लोकतंत्र के निर्धारित किए, जिनमें ये हैं --

1. विधायिका, जो देश के लिए क़ानून बनाएगी।
2. कार्यपालिका, जो उन क़ानूनों को लागू कराएगी।
3. न्यायपालिका, जो देश में न्याय सुलभ कराएगी।
4. स्वतंत्र प्रेस, जो अभिव्यक्ति की आज़ादी को सुनिश्चित करेगी।

उक्त चारों लोकतंत्र के स्तंभों के मुख्य-मुख्य दायित्व निर्धारित कर दिए गए और केंद्र का शासन संभालने के लिए जनता द्वारा चुनी हुई 'लोक सभा' और राज्यों के प्रतिनिधित्व के लिए 'राज्य सभा' की व्यवस्था हुई, तो प्रत्येक राज्य में जनता के द्वारा चुनी हुई 'विधान सभा' और जहाँ आवश्यकता हुई 'विधान परिषद्' की व्यवस्था की गई।

यहीं से देश में 'चुनाव' की आवश्यकता पैदा हुई। लोक सभा और विधान सभाओं का कार्यकाल पाँच वर्ष रखा गया, तो राज्य सभा और विधान परिषद्‌ों का कार्यकाल छः वर्ष निश्चित हुआ।

लोक सभा और विधान परिषद्‌ों के चुनाव करने के लिए एक स्वतंत्र और निष्पक्ष संस्था बहुत ज़रूरी थी। संविधान के अनुसार पूरे देश में निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनाव करने के लिए एक 'निर्वाचन आयोग' की स्थापना की गई, जो पूरे देश में होने वाले लोक सभा और विधान सभाओं के साथ-साथ अन्य सभी लोकतांत्रिक संस्थाओं के चुनावों को सफलतापूर्वक कराने का दायित्व देश में निरंतर संभालता है।

चुनावों में हिंदी की भूमिका

सन् 1950 में हुए लोक सभा और विधान सभाओं के चुनावों से लेकर आज तक भारत के चुनावों में 'हिंदी की भूमिका' को अगर देखा जाए, तो हम पाएँगे कि भारत का कोई भी चुनाव हिंदी भाषा के प्रयोग के बिना लड़ा जाना या कराया जाना संभव ही नहीं है।

लोक सभा को देश की सर्वोच्च 'निर्वाचित पंचायत' कहा गया है। स्पष्ट है कि देश में जब लोक सभा के चुनाव होते हैं, तो पूरा देश यानी उत्तर, दक्षिण, पूरब और पश्चिम, चुनावों में भाग लेता है। राष्ट्रव्यापी चुनाव के लिए प्रचार अभियान चलाया जाता है! कोई भी यह नहीं सोच सकता कि पूरे भारत में चुनाव केवल प्रादेशिक या स्थानीय भाषाओं में प्रचार करके लड़ा या जीता जा सकता है। राष्ट्रव्यापी प्रचार अभियान के लिए प्रत्येक राजनीतिक दल एक ऐसी भाषा में प्रचार करना चाहता है, जो अधिकाधिक लोगों तक उसकी बात को पहुँचा सके।

यही वह पहली कसौटी है, जिस पर 'हिंदी' एकमात्र भाषा के रूप में खरी उतरती है और पूरे भारत में सर्वाधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा का गौरव इसी हिंदी भाषा को प्राप्त हुआ है। मैं इस बात का प्रमाण यहाँ इस तथ्य से देना चाहूँगा कि स्वाधीनता दिवस पर जब देश के प्रधान मंत्री दिल्ली के लाल किले की प्राचीर से 'राष्ट्र के नाम अपना संबोधन' देते हैं, तो वह 'हिंदी भाषा' में ही होता है और आज तक किसी भी प्रदेश या किसी भी भाषा के व्यक्ति ने लाल किले की प्राचीर से दिए गए प्रधानमंत्री के हिंदी संबोधन पर कोई आपत्ति नहीं उठाई है।

यहीं मैं एक और सत्य का उल्लेख करना चाहूँगा, जो भारत के लोकतंत्र में अमिट इतिहास के रूप में स्वर्णाक्षरों में अंकित है! जब अहिंदी भाषी श्री देवगौड़ा भारत के प्रधानमंत्री बने और उन्हें लाल किले की प्राचीर से 'स्वाधीनता दिवस' पर पूरे राष्ट्र को संबोधित करना था, तो उन्होंने अपना संबोधन 'हिंदी' में ही किया था। इस तथ्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि भले ही संविधान में हिंदी को 'राज भाषा' का दर्ज़ा मिला हुआ हो, लेकिन जन-मानस में सर्वाधिक और उच्चतम सम्मान 'हिंदी' को ही प्राप्त है।

यही कारण है कि लोक सभा के सामान्य निर्वाचन में हिंदी अनेक स्तरों पर अपनी अत्यंत प्रभावी भूमिका निभाती है। प्रत्येक राजनीतिक दल अपनी प्रचार सामग्री का प्रकाशन अधिकाधिक 'हिंदी भाषा' में इसलिए करना चाहता है कि उसकी बात अधिक-से-अधिक मतदाताओं तक पहुँच सके। प्रचार अभियान के लिए भी अधिकाधिक नेतागण अपनी सभाओं में जब भाषण देते हैं, तो 'हिंदी भाषा' को ही आधार माध्यम के रूप में चुनते हैं। भारत के प्रधानमंत्री दिल्ली या उत्तरी राज्यों से बाहर जब बंगाल या तमिलनाडु या ओड़िसा या असम या फिर पूर्वोत्तर राज्यों में भी जाते हैं, तो अपना भाषण हिंदी में ही देना पसंद करते हैं। चाहे पंडित जवाहर लाल नेहरू रहे हों या फिर लाल बहादुर शास्त्री या श्रीमती इंदिरा गाँधी, राजीव गाँधी हों या अब वर्तमान में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी, श्रीमती सोनिया गाँधी या राहुल गाँधी, सभी चुनावों में व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए हिंदी भाषा का ही प्रयोग करते रहे हैं।

चुनाव की प्रचार-सामग्री और हिंदी

लोक सभा और राज्यों की विधान सभाओं के चुनावों के लिए सभी राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर मान्यता प्राप्त राजनीतिक दल अपने चुनाव प्रचार के लिए विभिन्न प्रकार की प्रचार-सामग्री प्रकाशित करते हैं। इसी के साथ स्थानीय स्तर पर होने वाले नगर निकायों जैसे नगर निगम, नगर पालिका, जिला पंचायत चुनावों के लिए भी प्रचार सामग्री छपवाई जाती है। इस प्रचार सामग्री की भाषा 70 से 80 प्रतिशत हिंदी ही होती है,

चूँकि हिंदी भाषी राज्यों के साथ-साथ अन्य राज्यों में भी हिंदी भाषी मतदाताओं की संख्या काफ़ी होती है, अतः सभी राजनीतिक दल अपनी बात उन तक पहुँचाने के लिए 'हिंदी भाषा' में छपी प्रचार सामग्री का ही प्रयोग करते हैं।

अभी हमने देखा है कि लोक सभा के चुनावों में सभी प्रमुख राजनीतिक दलों, जैसे भारतीय जनता पार्टी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, बहुजन समाज पार्टी, समाजवादी पार्टी, जेडीयू और मार्क्सवादी पार्टी आदि ने अपने 'मेनीफेस्टो' हिंदी भाषा में ही जारी किए, क्योंकि सभी राजनीतिक दल हिंदी भाषा के माध्यम से ही अधिक से अधिक मतदाताओं तक अपनी पार्टी की बात पहुँचाना चाहते हैं। मतदाताओं के लिए निर्वाचन आयोग जो मतदाता पहचान पत्र वितरित करता है, उसमे भी केंद्र की भाषा नीति के अनुसार सारी सूचनाएँ पहले 'हिंदी' और फिर अंग्रेज़ी में दी जाती है। सबसे बड़ी बात यह है कि चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशी जो विज्ञापन समाचार पत्रों में देते हैं, उनमें 80 प्रतिशत विज्ञापन हिंदी के समाचार पत्रों में ही प्रकाशित कराए जाते हैं, ताकि वे अधिक से अधिक मतदाताओं तक अपनी बात पहुँचा सकें।

भारत की अधिकांश जनता गाँवों और छोटे कस्बों में रहती है, जिन में से बहुत बड़ी संख्या या तो अशिक्षित है या बहुत कम पढ़ी-लिखी है। हिंदी भारत की सर्वाधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा होने के कारण रेडियो और दूरदर्शन आदि पर भी चुनाव प्रचार 80 प्रतिशत से अधिक हिंदी में ही होता है।

लोकतंत्र का सीधा अर्थ ही 'लोक से जुड़ना' अर्थात् देश के छोटे से छोटे व्यक्ति से जुड़ना होता है। महानगरों, नगरों और बड़े कस्बों को छोड़ कर अधिकांश मतदाता ग्रामीण क्षेत्रों के या आदिवासी क्षेत्रों के होते हैं, जो अंग्रेज़ी तो किसी भी रूप में समझ ही नहीं सकते। लोक सभा का चुनाव चूँकि पूरे देश के लिए होता है और अधिकांश संसद सदस्य हिंदी भाषी क्षेत्रों अर्थात् उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखंड, उत्तराखंड, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और छत्तीसगढ़ के होते हैं, इसलिए सभी प्रत्याशियों के लिए अपना प्रचार हिंदी भाषा में कराना अधिक लाभदायक होता है।

अब तो बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों से लेकर छोटे-छोटे विद्यालयों तक में विद्यार्थी अपने 'छात्र संघों' और शिक्षक गण अपने 'शिक्षक संघों' के चुनावों में भी अधिकाधिक प्रचार हिंदी में ही करते दिखाई देते हैं। राजधानी दिल्ली के दिल्ली विश्वविद्यालय, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी सहित देश के अधिकांश शिक्षा संस्थानों के छात्र संघों के चुनाव में प्रचार अधिकतर हिंदी भाषा के माध्यम से ही होता है।

पंचायती राज अधिनियम लागू होने के बाद ग्राम पंचायतों के चुनावों में राज्यों

की भाषाओं में चुनाव प्रचार होता हो, लेकिन यहाँ भी 60 से 70 प्रतिशत चुनाव प्रचार हिंदी में ही होता है। हम निस्संकोच कह सकते हैं कि लोकतंत्र के लिए होने वाले चुनावों के प्रचार और प्रसार की रीढ़ वस्तुतः पूरे देश में हिंदी ही है।

भले ही राजनीति के कारण हिंदी भारत की 'राष्ट्र भाषा' घोषित नहीं हो सकी हो, लेकिन पूरा भारत हिंदी को ही मन से 'राष्ट्र भाषा' स्वीकार कर चुका है, यह भी आज एक सर्वमान्य सत्य ही है। अब कोई भी राजनीतिक दल या व्यक्ति चुनाव में हिंदी की उपेक्षा अथवा विरोध नहीं कर सकता। भारत की प्रशासनिक सेवाओं में जाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को 'अनिवार्य हिंदी' का प्रश्न-पत्र लेना और उसमें न्यूनतम अर्हता प्राप्त करना अनिवार्य है, इसलिए अब भारत के दक्षिणी राज्यों में भी हिंदी की स्वीकार्यता निरंतर बढ़ती जा रही है। यही कारण है कि देश के चुनावों में हिंदी भाषा का वर्चस्व भी निरंतर बढ़ता जा रहा है और सामान्य निर्वाचन में हिंदी भाषा का प्रयोग निरंतर वृद्धि पर है।

❑

डॉ. शिखा कौशिक कॉधला (शामली)

चुनावी हिंदी -- हिंदी भाषा का नवीन स्वरूप

अरस्तू से लेकर आज तक अनेक राजनीतिक विचारकों ने शासन का संचालन करने वाली अनेक प्रणालियों अथवा सरकारों के रूपों के संबंध में विभिन्न मत प्रस्तुत किए हैं; जिनमें प्रमुख हैं --

राजतंत्र, अधिनायक तंत्र या तानाशाही, कुलीनतंत्र, प्रजातंत्र या लोकतंत्र, संसदात्मक शासन प्रणाली, अध्यक्षात्मक शासन-प्रणाली, एकात्मक शासन-प्रणाली, संघात्मक शासन-प्रणाली आदि।

इन सभी शासन प्रणालियों में से आधुनिक युग में प्रजातंत्र अथवा लोकतंत्र को सर्वश्रेष्ठ शासन-प्रणाली माना जाता है। प्रजातंत्र में शासन सत्ता जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में रहती है। इसीलिए प्रजातंत्र में चुनाव का व्यापक महत्त्व है। प्रजातंत्र में शासन सत्ता की प्राप्ति का एकमात्र साधन चुनाव हैं। चुनाव जीतने के लिए विभिन्न राजनीतिक दल अपने कार्यक्रमों एवं नीतियों का प्रचार-प्रसार करके जनमत को अपने पक्ष में करने का प्रयास करते हैं और विजयी होने पर सरकार बनाकर शासन-सत्ता ग्रहण करते हैं। चुनाव ही प्रजातंत्र का आधार होता है।

15 अगस्त, 1947 को ब्रिटिश शासन की गुलामी से आज़ाद होने के पश्चात् 26 जनवरी, 1950 को भारत का संविधान पूरे देश में [जम्मू-कश्मीर राज्य को छोड़कर] लागू किया गया जिसमें भारत को 'लोकतंत्रात्मक संघात्मक गणराज्य' घोषित किया गया अर्थात् भारत में लोकतंत्र शासन की स्थापना की गई, जिसके अंतर्गत देश का शासन, जनता का, जनता के लिए तथा जनता द्वारा किए जाने की घोषणा की गई। संघात्मक शासन प्रणाली के अंतर्गत शक्तियों का विभाजन केंद्र व राज्यों के बीच किया गया।

केंद्रीय शासन के अंतर्गत भारत में संसदीय व्यवस्था को अपनाया गया। भारत की संसद राष्ट्रपति, राज्य-सभा तथा लोक-सभा से मिलकर बनती है। राष्ट्रपति नाममात्र की

कार्यपालिका है तथा राज्य-सभा स्थाई सदन है और प्रधानमंत्री व उसका मंत्रिमंडल वास्तविक कार्यपालिका है जो लोक सभा के गठन के लिए होने वाले चुनावों द्वारा चुनकर आते हैं; बहुमत दल के चुने हुए सांसद ही अपने में से किसी को प्रधानमंत्री चुनते हैं।

लोक सभा के सदस्यों का निर्वाचन वयस्क-मताधिकार (18 वर्ष से अधिक आयु के नागरिकों को मताधिकार है) के आधार पर राज्य की जनता द्वारा किया जाता है। इसी प्रकार राज्यों की व्यवस्थापिका राज्यपाल व द्विसदनीय विधान-मंडल से मिलकर बनती है। जहाँ निचला सदन विधान-सभा व उच्च सदन विधान परिषद् होती है। विधान-सभा के सदस्यों का निर्वाचन भी वयस्क-मताधिकार के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार लोकतंत्र को वास्तविक रूप प्रदान करने का श्रेय चुनावों को ही जाता है, जिनसे संबंधित कार्यों का संचालन चुनाव-आयोग करता है।

यह भी हम भारतवासियों के लिए गर्व का विषय है कि भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र के आधार रूप इन चुनावों अथवा निर्वाचनों में भारत में राष्ट्र भाषा के पद पर विराजमान हिंदी भाषा भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि भाषा ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा एक प्राणी अपने भावों व विचारों को दूसरों तक पहुँचाता है। ''आज भारत में यूँ तो 826 भाषाएँ प्रयुक्त की जाती हैं, मगर इनमें सर्वोपरि, सर्वप्रधान और सर्वव्यापक भाषा हिंदी ही है।''

कई विरोधों के बावजूद हिंदी के महत्त्व और भारतीय जनता के हिंदी के प्रति लगाव के कारण ही 1950 में लागू हुए भारतीय-संविधान (की धारा 343-1) में स्पष्टतया प्रावधान किया गया है कि ''संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में हिंदी होगी।'' इसी हिंदी भाषा में जनता से संवाद स्थापित कर कितने ही राजनैतिक दलों ने सत्ता का सुख भोगा और कई अहिंदी राज्यों में हिंदी का विरोध कर कई राजनैतिक दल सत्तारूढ़ हुए। उदाहरण के लिए तमिलनाडु की राजनीति तो जैसे हिंदी-विरोध के आसपास ही सिमटकर रही है --

"The Anti-Hindi imposition agitations of Tamil Nadu were a series of agitations that happened in the Indian state of Tamil Nadu (formerly Madras State and part of Madras Presidency) during both pre & and post-Independence periods. The agitations involved several mass protests, riots, student and political movements in Tamil Nadu concerning the official status of Hindi in the state.

The first anti-Hindi imposition agitation was launched in 1937, in opposition to the introduction of compulsory teaching of Hindi in the schools of Madras Presidency by the first Indian National Congress government led by C. Rajagopalachari (Rajaji). This move was immediately opposed by E.V. Ramasamy (Periyar) and the opposition [Justice Party (India) [Justice Party] (later Dravidar Kazhagam). The agitation, which lasted three years,

was multifaceted and involved fasts, conferences, marches, picketing and protests. The government responded with a crackdown resulting in the death of two protesters and the arrest of 1,198 persons including women and children. Mandatory Hindi education was later withdrawn by the British Governor of Madras Lord Erskine in February 1940 after the resignation of the Congress Government in 1939.

The adoption of an official language for the Indian Republic was a hotly debated issue during the framing of the Indian Constitution after India's independence from the United Kingdom. After an exhaustive and divisive debate, Hindi was adopted as the official language of India with English continuing as an associate official language for a period of fifteen years, after which Hindi would become the sole official language. The new Constitution came into effect on 26 January 1950. Efforts by the Indian Government to make Hindi the sole official language after 1965 were not acceptable to many non-Hindi Indian states, who wanted the continued use of English. The Dravida Munnetra Kazhagam (DMK), a descendant of Dravidar Kazhagam, led the opposition to Hindi. To allay their fears, Prime Minister Jawaharlal Nehru enacted the Official Languages Act in 1963 to ensure the continuing use of English beyond 1965. The text of the Act did not satisfy the DMK and increased their skepticism that his assurances might not be honoured by future administrations.

As the day (26 January 1965) of switching over to Hindi as sole official language approached, the anti-Hindi movement gained momentum in Madras State with increased support from college students. On 25 January, a full-scale riot broke out in the southern city of Madurai, sparked off by a minor altercation between agitating students and Congress party members. The riots spread all over Madras State, continued unabated for the next two months, and were marked by acts of violence, arson, looting, police firing and lathi charges. The Congress Government of the Madras State, called in paramilitary forces to quell the agitation; their involvement resulted in the deaths of about seventy persons (by official estimates) including two policemen. To calm the situation, Indian Prime Minister Lal Bahadur Shastri gave assurances that English would continue to be used as the official language as long as the non-Hindi speaking states wanted. The riots subsided after Shastri's assurance, as did the student agitation.

The agitations of 1965 led to major political changes in the state. The DMK won the 1967 assembly election and the Congress Party never managed to recapture power in the state since then. The Official Languages Act was eventually amended in 1967 by the Congress Government headed by Indira Gandhi to guarantee the indefinite use of Hindi and English as official languages. This effectively ensured the current "virtual indefinite

policy of bilingualism" of the Indian Republic. There were also two similar (but smaller) agitations in 1968 and 1986 which had varying degrees of success."

राजनीतिक दल जिनके लिए प्रो. मुनरो ने यहाँ तक लिखा है कि ''स्वतंत्र राजनैतिक दल ही प्रजातंत्र का दूसरा नाम हैं।'' चुनावों में हिंदी भाषा का प्रयोग कर उसको क्या स्वरूप प्रदान कर रहे हैं, ये आज चिंतन का गंभीर मुद्दा है। विभिन्न बिंदुओं के अंतर्गत हम इसका विश्लेषण व विवेचन कर सकते हैं --

(अ) हिंदी भाषा में चुनाव अथवा निर्वाचन से संबंधित महत्त्वपूर्ण शब्दावली

- **प्रजातंत्र अथवा लोकतंत्र :** जनतंत्र का प्रयोग भी प्रजातंत्र के लिए किया जाता है।' लोकतंत्र अंग्रेज़ी के डेमोक्रेसी शब्द का हिंदी अनुवाद है। डेमोक्रेसी शब्द यूनानी भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है -- 'डेमास' का अर्थ है जनता और 'क्रेसिया' का अर्थ शासन होता है। इस प्रकार लोकतंत्र का अर्थ जनता का शासन हुआ।''
- **जनमत :** जनमत का सामान्य अर्थ है -- जनता का मत या विचार।
- **चुनाव अथवा निर्वाचन :** प्रजातंत्र में शासन सत्ता की प्राप्ति का एकमात्र साधन चुनाव है। चुनाव से तात्पर्य है -- ''पद के लिए उम्मीदवारों में से बहुमत के आधार पर चुनना।'' निर्वाचन से भी यही तात्पर्य है -- वोट द्वारा चुनाव करना।''
- **निर्वाचन-आयोग :** भारत में निर्वाचन संबंधी कार्यों का संचालन निर्वाचन अथवा चुनाव आयोग के द्वारा संपादित होता है। केंद्र व राज्यों के पृथक्-पृथक् निर्वाचन आयोग होते हैं।
- **मतदाता :** जिस नागरिक को चुनाव में मत देने का अधिकार प्राप्त हो, उसे मतदाता कहते है।
- **वयस्क-मताधिकार :** ''वयस्क-मताधिकार का आशय यह है की पागल, दिवालिया व कुछ विशेष अयोग्यताओं को रखने वाले व्यक्ति को छोड़कर सभी स्त्री-पुरुषों को मताधिकार प्राप्त हो। भारत में संसद व विधान-मंडलों के चुनावों में मताधिकार की आयु 62वें संविधान-संशोधन द्वारा 18 वर्ष निश्चित की गई है। उत्तर-प्रदेश में स्थानीय संस्थाओं के सदस्यों के निर्वाचन के लिए मताधिकार की आयु 18 वर्ष ही है।
- **चुनाव-चिन्ह :** प्रत्येक राजनीतिक दल का एक पंजीकृत चिह्न होता है। निर्दलीय उम्मीदवारों को पृथक् चुनाव-चिह्न आवंटित किए जाते हैं। राष्ट्रीय राजनीतिक दलों में जैसे कांग्रेस का 'हाथ का पंजा' व भारतीय जनता पार्टी का 'कमल का फूल' आदि पंजीकृत चुनाव-चिह्न हैं।
- **ई.वी.एम. :** वर्तमान में मतदान हेतु 'इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन' का प्रयोग किया

जाता है, जिसे संक्षेप में ई.वी.एम. कहकर संबोधित करते हैं।

- **मत-पत्र :** प्रत्येक मतदाता को मतदान हेतु एक ऐसा काग़ज़ दिया जाता है जिसमें सभी प्रत्याशियों के चुनाव-चिह्न व नाम मुद्रित होते हैं, इस काग़ज़ को ही 'मत-पत्र' कहते हैं।
- **मतदान-प्रणाली :** प्रजातंत्र में प्रतिनिधियों का निर्वाचन जिस विधि से किया जाता है, उसे मतदान प्रणाली कहते हैं। भारत में निर्वाचन-आयोग का अध्यक्ष अथवा चुनाव आयुक्त चुनाव संबंधी प्रक्रियाओं का संचालन करता है। चुनाव की विभिन्न प्रक्रियाओं का विवरण निम्नवत है --

1. **निर्वाचन-क्षेत्रों का निर्धारण :** सर्वप्रथम चुनाव-आयोग जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधियों के लिए निर्वाचन-क्षेत्रों का निर्धारण करता है।
2. **मतदाता-सूची का निर्माण :** चुनाव आयोग मतदान क्षेत्र के मतदाताओं की सूची का निर्माण कराता है और अंतिम संशोधित सूची को तैयार करवाकर प्रकाशित करवाता है।
3. **चुनाव की घोषणा :** चुनाव संबंधी तैयारियाँ पूरी होने पर सरकार चुनाव संबंधी आवश्यक तिथियों की विधिवत् घोषणा कर देती है। इसके साथ नामांकन-पत्र प्रस्तुत करने, उसकी जाँच करने, नाम वापस लेने आदि की प्रक्रियाएँ संपन्न होती हैं।
4. **प्रत्याशियों का नामांकन :** एक निश्चित तिथि तक चुनाव में भाग लेने वाले सभी प्रत्याशी अपना नामांकन-पत्र भर कर जमा कर देते हैं।
5. **नामांकन-पत्रों की जाँच :** निर्धारित समय में नामांकन पत्रों की चुनाव-आयोग द्वारा जाँच कराई जाती है और अशुद्ध व अपूर्ण नामांकन-पत्रों को रद्द कर दिया जाता है।
6. **नामांकन :** पत्रों की वापसी-निर्धारित तिथि तक चुनाव न लड़ने की इच्छा होने पर प्रत्याशी अपना नामांकन-पत्र वापस ले सकते हैं।
7. **चुनाव-चिह्नों का वितरण :** जो प्रत्याशी स्वतंत्र रूप से चुनाव लड़ते हैं, उन्हें चुनाव आयोग चुनाव-चिह्न वितरित करता है।
8. **मतपत्रों का अथवा ई.वी.एम. पर प्रकाशन :** स्वीकृत नामांकन-पत्रों के आधार पर चुनाव आयोग मत-पत्रों का प्रकाशन करता है। इसमें प्रत्याशियों के नाम उनके चुनाव-चिह्न सहित मुद्रित किए जाते हैं। वर्तमान में भारत में अधिकांश चुनाव चूँकि ई.वी.एम. द्वारा संपादित हो रहे हैं, इसलिए चुनाव-आयोग ई.वी.एम. पर ये सब कार्य प्रदर्शित करता है।
9. **मतदान-केंद्रों की स्थापना :** चुनाव-आयोग संपूर्ण निर्वाचन क्षेत्र में जनता की सुविधा

को ध्यान में रखकर स्थान-स्थान पर विभिन्न मतदान-केंद्रों की स्थापना करता है।

10. **मतदान :** निश्चित तिथि को मतदान होता है। जो विभिन्न चरणों में विभक्त किया जाता है। यदि ई.वी.एम. पर मतदान किया जाता है तो इच्छित चुनाव-चिह्न के सामने वाला बटन दबाकर अपना मत दिया जाता है और यदि मत-पत्र द्वारा मतदान किया जाता है तब मत-पत्र पर इच्छित प्रत्याशी के नाम व चुनाव चिह्न के सामने मुहर लगाकर मत-पत्र मतपेटी में डाल दिया जाता है।

11. **मतगणना-मतदान के बाद चुनाव :** अधिकारियों के संरक्षण में मत-पत्रों अथवा ई.वी.एम. पर मतों की गणना की जाती है। जो प्रत्याशी सर्वाधिक मत प्राप्त करता है, उसे विजयी घोषित किया जाता है।

- **राजनीतिक दल :** लोकतांत्रिक शासन-व्यवस्था में भिन्न-भिन्न सिद्धांतों व राजनीतिक विचारधारा के आधार पर राष्ट्र-हित में संगठित समूह को राजनीतिक दल कहते हैं। प्रो. मुनरो का कथन है कि ''स्वतंत्र राजनीतिक दल ही प्रजातांत्रिक सरकार का दूसरा नाम है।''
- **विरोधी दल :** सार्वजनिक निर्वाचन में जो राजनीतिक दल व्यवस्थापिका में बहुमत प्राप्त करने में असफल रह जाते हैं तथा सरकार में सम्मिलित नहीं होते हैं, उन्हें विरोधी-दल की संज्ञा दी जाती है।
- **चुनाव घोषणा-पत्र :** प्रत्येक राजनीतिक दल एक चुनाव घोषणा-पत्र जारी करता है, जिसमें वह अपने उद्देश्यों, नीतियों, कार्यक्रमों और उपलब्धियों से सामान्य जनता को अवगत कराता है और जनमत प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। चुनाव घोषणा-पत्र राजनीतिक दल के महासचिव अथवा अध्यक्ष द्वारा जारी किया जाता है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त प्रत्याशी, उम्मीदवार, मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री, केंद्रीय-सरकार, राज्य-सरकार, राज्य-विधान मंडल, संसद, लोक-सभा, राज्य-सभा, विधान-सभा, विधान-परिषद्, सांसद, विधायक, चुनाव-परिणाम, बहुमत, अल्पमत, गठबंधन, निर्दलीय आदि हज़ारों शब्द आज भारतीय चुनाव के परिप्रेक्ष्य में अत्यधिक प्रचलन में हैं। निश्चित रूप से चुनावों के माध्यम से हिंदी भाषा की शब्दावली में अनेक नए शब्द जुड़े व प्रचलित हुए हैं।

आ. चुनाव और हिंदी का बढ़ता शब्द भंडार

यह तो सर्वज्ञात ही है कि ''भाषा विचार-विनिमय का साधन है। भावों और विचारों की सपाट बयानी के लिए विश्व की प्रत्येक गतिशील भाषा अन्यान्य भाषाओं से सुविधानुसार शब्द-समूह ग्रहण करती है।

चुनावी हिंदी के शब्द-समूह में संस्कृत, अरबी-फारसी के शब्दों के बाहुल्य के साथ-साथ अंग्रेज़ी के शब्दों का बहुत प्रयोग किया जारहा है। चुनावी हिंदी के प्रमुख रूपों में एक

तो हिंदुस्तानी रूप है; जिसमे अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग अधिक किया जाता है और दूसरा रूप जिसमे परिनिष्ठित खड़ी बोली का प्रयोग अधिक किया जाता है, इसमें संस्कृत से सीधे हिंदी में आए (तत्सम, शब्दों का प्रयोग किया जाता है। साथ ही वर्तमान में चुनावी हिंदी में अंग्रेज़ी के शब्दों का बढ़ता प्रयोग एक नई भाषायी समीकरण हिंदी+इंग्लिश=हिंग्लिश की ओर संकेत कर रहा है।

चुनावी हिंदी में प्रयुक्त होने वाले हिंदी के शब्द-समूह का वर्गीकरण दो भागों में किया जा सकता है --

क. **भारतीय भाषाओं के शब्द :** चुनावी हिंदी के शब्द-भंडार को सर्वाधिक समृद्ध आर्य-भाषाओं के शब्दों ने ही बनाया है क्योंकि ये ही हिंदी भाषा की मातृ-समान संरक्षिका भाषा हैं।

भारतीय आर्य भाषाओं में संस्कृत से मूल रूप में हिंदी में आए शब्दों का योगदान चुनावी हिंदी में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इन्हें तत्सम शब्द कहा जाता है। ''किसी भाषा के वे शब्द जो मूल रूप में ही दूसरी भाषाओं द्वारा ग्रहण कर लिए जाते हैं, तत्सम कहलाते हैं। हिंदी में संस्कृत भाषा से मूल रूप में जो शब्द आए, उन्हें तत्सम शब्दों की संज्ञा दी गई है।''

चुनावी हिंदी, जो राजनैतिक दलों के प्रवक़्ताओं, प्रतिनिधियों व मीडिया द्वारा चुनावों के दौरान प्रयुक्त की जाती है उसमें अनेक तत्सम शब्दों की बहुलता रहती है। उदाहरणार्थ --

प्रभारी	सभा	बाहुबली-विधायक
आयोग	चिह्न	जन-सेवक
प्रत्याशी	अभियान	जन-प्रतिनिधि
प्रजा	शासक	रणनीति
प्रचार	आदर्श	आचार संहिता
प्रतिद्वंदी	प्रचारक	मत
घोषणा-पत्र	निरीक्षक	जंगलराज
मतदानाधिकार	ध्रुवीकरण	नेता
नेत्री	विधायक	संसद
सांसद	संघर्ष	बहुमत
अल्पमत	खंडित-जनादेश	

तत्सम शब्दों के साथ-साथ अर्ध-तत्सम, तद्भव, देशज, संकर, अनुकरणात्मक, प्रतिध्वन्यात्मक आदि शब्द भी चुनावी हिंदी शब्द समूह में प्रयोग किए जाते हैं। देशज शब्दों के अंतर्गत ऐसे शब्द आते हैं ''जो हिंदी में प्रचलित तो हैं किंतु उनकी व्युत्पत्ति

का कुछ पता नहीं चलता और देशी बोलियों में मिलते हैं, वे देशज कहलाते हैं।'' चुनावी हिंदी में प्रयुक्त होने वाले शब्द--घपला, भोंपू, गड़बड़, वोटकटवा आदि ऐसे ही शब्द हैं।

चुनावी हिंदी में प्रतिध्वन्यात्मक शब्दों के दर्शन भी होते हैं। प्रतिध्वन्यात्मक शब्दों से तात्पर्य है कि जिन शब्दों के प्रकार और संबंध का ज्ञान करने के लिए आंशिक आवृत्ति कर दी जाए। यथा--चंदा-वंदा, नेता-वेता आदि।

चुनावी हिंदी वर्तमान में जिस दिशा से जिस दिशा में बढ़ रही है, उसके सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बिंदु हैं -- 'संकर' शब्द। ''जो शब्द दो भाषाओं के योग से बने हैं, उन्हें 'संकर' शब्द कहते हैं।'' यथा --

*	अमन-सभा	--	[अरबी + संस्कृत]
*	काउन्सिल-निर्वाचन	--	[अंग्रेज़ी + संस्कृत]
*	स्टार-प्रचारक	--	[अंग्रेज़ी + संस्कृत]
*	कांग्रेसी	--	[अंग्रेज़ी + संस्कृत]
*	कांग्रेस-अध्यक्ष	--	[अंग्रेज़ी + संस्कृत]
*	भारतीय जनता पार्टी	--	[सं + सं + अंग्रेज़ी]
*	पैदल-मार्च	--	[हिंदी + अंग्रेज़ी]
*	विधान-सभा-सीट	--	[सं + अंग्रेज़ी]
*	सिटिंग-विधायक	--	[अंग्रेज़ी + संस्कृत]
*	पार्टी-अध्यक्ष	--	[अंग्रेज़ी + संस्कृत]
*	पार्टी-उम्मीदवार	--	[अंग्रेज़ी + फ़ारसी]
*	पार्टी-प्रत्याशी	--	[अंग्रेज़ी + संस्कृत]
*	माफिया-राज	--	[अंग्रेज़ी + हिंदी]

चुनावी हिंदी में बंगाली, मराठी, पंजाबी, गुजराती आदि आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाओं के शब्द भी सम्मिलित हुए हैं। यथा-गुजराती से 'हड़ताल', मराठी से 'चालू', 'लागू', बंगला से 'भद्रलोग' इत्यादि।

भारतीय-आर्य भाषाओं के अतिरिक्त चुनावी हिंदी में आर्येतर भाषाओं के शब्दों का प्रचलन भी प्रमुखता के साथ किया जाता है। अनार्य-भाषाओं के शब्दों में तमिल, तेलुगू, मलयालम, कन्नड़ भाषाओं के शब्द मुख्य रूप से प्रचलित हैं। यथा-कटु, कलुष, महिला, माला आदि।

द्रविड़ परिवार के अतिरिक्त आग्नेय व मुंडा कुल की भाषाओं के शब्द भी चुनावी हिंदी में प्रयुक्त किए जाते हैं।

(ख) विदेशी भाषाओं के शब्द : चुनावी हिंदी में समय-समय पर वैश्विक स्तर पर

हो रहे परिवर्तनों एवं भारतीय परिस्थितियों के कारण अनेक विदेशी भाषाओं के शब्दों का प्रचलन बढ़ा है। इन विदेशी शब्दों के स्रोतों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है --

1. **मुस्लिम संपर्क से आए शब्द और चुनावी हिंदी :** मुस्लिम नेताओं और गंगा-जमुना दोआब के आस-पास की जनता द्वारा हिंदी भाषा के जिस रूप का प्रयोग किया जाता है उसे हिंदुस्तानी की संज्ञा दी जाती है और चुनावों के दौरान राजनैतिक दलों व नेताओं द्वारा जनता से संवाद स्थापित करने में वे इसी का प्रयोग करते है। हिंदुस्तानी भाषा में उर्दू, अरबी, फारसी, ईरानी, पश्तो, तुर्की आदि शब्दों का बाहुल्य है। चुनावी हिंदी में मुस्लिम-संपर्क से आए प्रमुख शब्द कुछ इस प्रकार हैं --

   * ईरानी शब्द-क्षत्रप, तीर आदि।
   * पश्तो शब्द-लुच्चा, अटकल, गुंडा आदि
   * तुर्की शब्द-बाबा, काबू, कुर्ता, कैंची, तुर्क आदि।

अरबी-फारसी शब्द--चुनावी हिंदी में मुस्लिम संपर्क से आए अरबी-फारसी भाषा के ही शब्द सर्वाधिक प्रयुक्त किए जाते हैं क्योंकि मध्यकाल में भारत में मुस्लिम शासकों का शासन रहा और उस समय की राजभाषा फारसी ही थी। चुनावी हिंदी में चूँकि जन-जन की बोलचाल की भाषा के प्रचलित शब्द ही प्रयुक्त होते हैं और अरबी-फारसी के शब्द भारतीयों की हिंदी भाषा में इस तरह घुल-मिल गए हैं कि वे हिंदी के ही लगते हैं। उदाहरणार्थ --

*	सरकार	[फारसी]	*	जंग	[फ़ारसी]
*	वादा	[अरबी]	*	मुद्दा	[अरबी]
*	उम्मीदवार	[फारसी]	*	सियासत	[अरबी]
*	सियासी	[अरबी]	*	बग़ावत	[अरबी]
*	बागी	[अरबी]	*	ऐलान	[अरबी]

2. **यूरोपीय प्रभाव से आए शब्द और चुनावी हिंदी :** चुनावी हिंदी में अनेक शब्द यूरोपीय देशों से संपर्क के कारण भी प्रचलित हुए। इनमें पुर्तगाली, फ्रांसिसी, अंग्रेज़ी शब्दों की बहुलता है। चुनावी-हिंदी में यूरोपीय भाषाओं में से सर्वाधिक शब्द अंग्रेज़ी के प्रयुक्त होते हैं। यथा --

* लीडर	* इलेक्शन	* रोड-शो
* सिम्बल	* पार्टी	* पब्लिक
* कैंडिडेट	* रिजल्ट	* स्पीच

* स्टेज	* ई.वी.एम.	* बूथ
* बूथ-कैप्चरिंग	* कमेटी	* कांग्रेस
* पब्लिसिटी	* वर्कर	* वर्किंग-कमेटी
* सोशल-इंजीनियरिंग	* पार्टी-सुप्रीमो	
* वोट	* वोटर	* वोट-बैंक
* मार्च	* गेम-चेंजर	* पॉलिटिकल-इंजीनियरिंग

उपर्युक्त वर्णित शब्द-समूहों के अतिरिक्त अनेक यूरोपीय भाषाओं के साथ-साथ अन्य महाद्वीपों के संपर्क में आने के कारण उनके शब्द भी हिंदी के चुनावी स्वरूप को समृद्ध कर रहे हैं। इस प्रकार स्पष्ट है की चुनावी-हिंदी का शब्द-समूह निरंतर बढ़ रहा है और नित नवीन शब्द इसके शब्दकोश में जुड़ रहे हैं।

इ. **चुनावी हिंदी और मुहावरे :** ''मुहावरा शब्द हिंदी में उर्दू के संपर्क से आया है। उर्दू भाषा में यह शब्द अरबी से गृहित है और इसका तत्सम रूप है -- मुहावरः, जिसका अर्थ है -- बोलचाल या बातचीत। किसी भाषा की बोलचाल में प्रयुक्त होने वाले वे शब्द-युग्म या वाक्यांश; जो जन-भाषा का अंग बन गए हो और जिनका अर्थ शब्दार्थ या वाक्यार्थ से भिन्न और चमत्कारपूर्ण होता है, मुहावरे कहलाते हैं। मुहावरों के प्रयोग से भाषा की व्यंजना-शक्ति में पंख लग जाते हैं। वंचित प्रयोजन को व्यक्त करने में इनसे वक़्त को बड़ी सफलता मिलती है।''

चुनाव के दौरान मीडिया व राजनैतिक दलों के प्रवक़्ताओं, चुनाव-रैली में नेताओं-नेत्रियों द्वारा प्रायः मुहावरेदार भाषा का प्रयोग किया जाता है। यथा--

* भाजपा के लिए 'नाक का सवाल' बना मणिपुर चुनाव।
* आपके फैसले पर टिकी पूरे देश की निगाहें।
* बसपा-भाजपा के 'चक्रव्यूह में फँसे' माता प्रसाद।
* पाँचवें दौर में सभी दलों के बीच काँटे की लड़ाई।
* चौथा चरणः राजा भैया सहित दिग्गजों की 'प्रतिष्ठा दाव पर।'
* चुनावी चक्रव्यूह का छठ द्वार भेदने की रोचक जंग।
* 'शायद इसलिए मोदी और शाह ने पूर्वांचल की दूसरी समस्याओं के साथ इस मुद्दे पर भी 'हमला बोलना' ज़रूरी समझ।'
* पूर्वांचल में बागी 'बने सिरदर्द।'
* ताल-ठोकना, दामन थामना।

न केवल हिंदी के प्रचलित मुहावरों का प्रयोग चुनावी हिंदी में किया जाता है वरन् चुनावी-हिंदी में कुछ नवीन मुहावरे भी सृजित हो रहे हैं --

* **पार्टी का चेहरा होना :** पार्टी का प्रतिनिधित्व करने वाला नेता।
* **चुनावी-जंग होना :** दो पार्टी के प्रत्याशियों के बीच चुनाव में विजय प्राप्त करने की प्रतिस्पर्धा।
* **गठबंधन की राजनीति :** कई राजनैतिक दलों द्वारा मिलकर सरकार बनाना।
* **वोट-बैंक की राजनीति :** किसी विशेष सम्प्रदाय को आकर्षित करना राजनैतिक दलों द्वारा चुनाव में।
* **सत्ता पर क़ाबिज़ होने का सपना देखना :** चुनाव में बहुमत प्राप्त करने की अभिलाषा करना।
* **चुनावी-वादे :** ऐसे आश्वासन जिनके पूरे होने की आशा नहीं करनी चाहिए।

ये ही नहीं प्रमुख नेताओं द्वारा भाषणों में मुहावरों का भरपूर प्रयोग किया जाता है। यथा --

''मझवाँ के चंदईपुर में शुक्रवार को सभा में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने कहा कि खाट बिछाने वालों की खाट तो लोग पहले ले गए, अब इनकी 'खटिया खड़ी करने की बारी' है।''

इस प्रकार स्पष्ट है कि चुनावी भाषा का मुहावरेदार होना इसकी एक प्रमुख विशेषता है --

1. **'प्रतीकों' से प्रहार :** हिंदी साहित्य में 'प्रतीक' का सामान्य अर्थ है -- संकेत-चिह्न, जिसका प्रयोग किसी अन्य अर्थ के स्थान पर किया जाता है। दूसरे शब्दों में जब कोई पदार्थ किसी भाव या विचार का संकेत बन जाता है, तो प्रतीक कहलाता है। प्रतीक योजना का उद्देश्य साहित्य में प्रमुखतः कथ्य को आकर्षक रूप प्रदान करना होता है।'

चुनाव के दौरान चाहे नेता/नेत्रियाँ हो अथवा मीडिया-सभी अपने कथ्य को आकर्षक व जन-जन तक अपनी बात मज़बूती के साथ पहुँचाने के लिए 'प्रतीकों' के माध्यम से विपक्षियों पर प्रहार करते हैं, साथ ही इनकी एक और मंशा यह भी होती है कि प्रतीकों के माध्यम से विपक्षियों को कटु-भड़काने वाले वचन भी कह दिए जाए और ये निर्वाचन आयोग की आचार संहिता से भी बचे रहें। उदाहरणार्थ --

* **भगवा पार्टी :** भारतीय जनता पार्टी के लिए विपक्षियों द्वारा ये प्रतीक प्रयोग किया किया जाता है।
* **बहन जी :** बहुजन समाज पार्टी की अध्यक्षा सुश्री मायावती जी के लिए बहन जी शब्द का प्रयोग किया जाता जाता है।
* **बाहुबली :** आपराधिक पृष्ठभूमि वाले नेताओं के लिए बाहुबली शब्द का प्रयोग किया जाता है।

* **पप्पू :** सोशल साइट्स पर विरोधियों द्वारा पप्पू प्रतीक बनाया गया है कांग्रेस पार्टी के उपाध्यक्ष श्री राहुल गाँधी की राजनीतिक अपरिपक्वता का।
* **फेंकू :** विपक्षियों द्वारा सोशल साइट पर लोक-सभा चुनाव 2014 के दौरान श्री नरेंद्र मोदी द्वारा किए जाने वाले चुनावी-वादों को लेकर उनके लिए यह प्रतीक प्रयोग किया गया।

उपर्युक्त के अतिरिक्त राजनैतिक दल को निर्वाचन आयोग द्वारा जो चुनाव-चिह्न आवंटित किए जाते हैं वे भी उनके प्रतीक बन जाते हैं -- जैसे कांग्रेस पार्टी का चुनाव-चिह्न 'हाथ' व भारतीय जनता पार्टी का 'कमल का फूल' चुनाव-चिह्न हैं।

* **चुनावी-हिंदी व नारे :** 'नारों से तात्पर्य ऐसे शब्द-समुच्चय से होती है जो किसी व्यक्ति, वस्तु, कंपनी, राजनैतिक दल, के समर्थकों द्वारा स्व-हित में उच्चारित किए जाते हैं अथवा पोस्टरों, विज्ञापनों व सोशल-साइट्स पर प्रदर्शित किए जाते हैं।

लोकतंत्र में जितना महत्त्व चुनाव का है, चुनाव में उतना ही महत्त्व 'नारों' का होता है। एक सार्थक नारा पूरे चुनाव का रुख़ ही पलट देता है। चुनाव-प्रचार के महत्त्वपूर्ण अंश जिन्होंने भारतीय-राजनीती को दिशा प्रदान की कुछ इस प्रकार हैं --

* ''जनसंघ को वोट दो, बीड़ी पीना छोड़ दो, बीड़ी में तम्बाकू है, कांग्रेस वाला डाकू है।'' [1967 चुनाव]
* ये देखो इंदिरा का खेल, खा गई शक्कर, पी गई तेल। [जनसंघ चुनाव प्रचार]
* ग़रीबी हटाओ, इंदिरा लाओ, देश बचाओ। [1971 चुनाव प्रचार कांग्रेस]
* जब तक सूरज-चाँद रहेगा, इंदिरा तेरा नाम रहेगा। [1984 चुनाव]
* हर हर मोदी, घर घर मोदी [लोक सभा चुनाव 2014]
* यू.पी. को ये साथ पसंद है [विधान सभा चुनाव 2017 उत्तर प्रदेश]
* सबका साथ-सबका विकास [भारतीय जनता पार्टी]

चुनावी हिंदी और गद्य-पद्य विधाओं का रूप-चुनाव के दौरान जहाँ मौखिक रूप में भाषण, नारों आदि के माध्यम से प्रचार किया जाता है वही राजनैतिक दल जनता को आकर्षित करने के लिए हिंदी की गीत विधा का भी भरपूर प्रयोग करते हैं। चुनावी गीत टेलीविजन, वेबसाइट्स के साथ-साथ गली-गली में लाउडस्पीकर पर बजाए जाते हैं। गीतों में चुनावी मुद्दों का प्रचार व विपक्षियों की भर्त्सना की जाती है। कई बार ये फिल्मी गानों की धुन पर तैयार किए जाते हैं और कई बार हिंदी के लोक गीतों की धुन पर इन्हें तैयार किया जाता है। सन 2014 के लोक सभा चुनाव में भारतीय जनता पार्टी का प्रचार गीत -- ''अच्छे दिन आने वाले हैं।'' अत्यधिक लोकप्रिय हुआ था। गीत के अतिरिक्त चुनाव से संबंधित हिंदी पद्य की विधाओं में, छंद जैसे-दोहा, कुंडलिनी, पद आदि समाचार-पत्रों में प्रकाशित होते हैं, जिनके माध्यम से रचनाकार या तो किसी

पार्टी विशेष का समर्थन करता है अथवा जनता को जागरूक करने का प्रयास करता है। अमर-उजाला दैनिक ने विधान-सभा चुनाव 2017 के दौरान एक पूरा पृष्ठ 'महासंग्राम' नाम से चुनाव की रिपोर्टिंग को ही समर्पित किया हुआ था। उस पृष्ठ पर 'सनद रहे' कॉलम के अंतर्गत हिंदी के चुनावी-छंद लेखन को प्रोत्साहित करते हुए नित्य छंद प्रकाशित किए जाते रहे। उदाहरणार्थ-बनज कुमार बनज का दोहा --

''लोकतंत्र जीवित रखो, दो जाकर के वोट
ऐसा लेना फैसला, ना हो जिसमें खोट!''

हिंदी गद्य की विधाओं में चुनावी हिंदी के अंतर्गत रिपोर्टिंग, यात्रा-वृत्तांत, महान् नेताओं की जीवनी व आत्मकथा, समाचार-पत्र, पत्रिकाओं में प्रकाशित आलेख आदि महत्त्वपूर्ण रूप से इसके स्वरुप को निखार रहे हैं।

चुनावी-हिंदी की अन्य विशिष्टताएँ

1. चुनावी हिंदी में अभिधा शब्द-शक्ति के स्थान पर लक्षणा व व्यंजना का भरपूर प्रयोग किया जाता है। यथा -- ''जनता ने बिछाया ऐसा तार, सपा-बसपा और कांग्रेस को लगेगा करंट।'' -- मोदी।

यहाँ तार बिछाने व करंट लगाने से तात्पर्य यह है की जनता इस चुनाव में सपा-बसपा को वोट न देकर बीजेपी को वोट करेगी।

2. प्रसिद्ध हिंदी-उर्दू के कवियों-शायरों की पंक्तियों का प्रयोग कर भाषा को अलंकारमय बनाया जाता है। यथा -- ''कवि अशोक चक्रधर के हवाले से कहा कि किसी भी काम को कराने के लिए नज़राना, शुकराना, हकराना, जबरन् पेश करना होता है। इससे मुक्ति का एक ही उपाय है इनको 'हराना'। -- मोदी।

''मैं हिंदी और उर्दू का दोआब हूँ,
मैं वो आइना हूँ जिसमें हम और आप हैं।'' -- राहुल गाँधी।

3. शब्द-संक्षेपण व विस्तारण-चुनावी हिंदी में दोनों ही प्रवर्त्तियाँ परिलक्षित हो रही हैं। शब्द-संक्षेपण के अंतर्गत कई शब्दों के प्रारंभिक अक्षर को लेकर एक नया ही शब्द बना दिया जाता है। यथा --

भारतीय जनता पार्टी	--	बीजेपी
बहुजन समाज पार्टी	--	बसपा
समाजवादी पार्टी	--	सपा
राष्ट्रीय लोकदल	--	रालोद
नरेंद्र मोदी	--	नमो

चुनावी हिंदी में शब्द-विस्तारण के अंतर्गत किसी एक शब्द को लेकर उसकी नई ही व्याख्या प्रस्तुत की जाती है। इसके अंतर्गत अंग्रेज़ी शब्दों की हिंदी व्याख्या ज़्यादा

प्रचलन में है। यथा -- उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव 2017 में SCAM अंग्रेज़ी के शब्द का विस्तारण मोदी जी व राहुल जी द्वारा चुनावी रैलियों में भिन्न-भिन्न किया गया, वहीं मोदी जी ने बसपा शब्द-संक्षेप का विस्तारण कुछ और ही कर दिया। यथा-बहन जी की संपत्ति पार्टी।

चुनावी हिंदी में दिए जाने वाले भाषणों की शैली मुख्यतः व्यंग्यात्मक, उद्‌बोधनात्मक, आलंकारिक, सरस होती है। व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग अधिकांश मंझे हुए नेताओं द्वारा किया जाता है। वर्तमान में श्री नरेंद्र मोदी के भाषणों में इस शैली के दर्शन सर्वाधिक होते हैं। यथा -- ''लोग अच्छा काम करते हुए गायत्री मंत्र बोलते हैं, लेकिन सपा-कांग्रेस वाले गायत्री प्रजापति मंत्र बोल रहे हैं।'' यहाँ पर एक बलात्कार के आरोपी विधायक का साथ देने का आरोप लगाते हुए पैना व्यंग्य किया गया है।

सपा. कांग्रेस पर चुनावी हिंदी में अंग्रेज़ी का बोलबाला : चुनावी हिंदी के स्वरुप के संबंध में सर्वाधिक चिंतनीय विषय यह है कि वर्तमान में इसमें अंग्रेज़ी के शब्दों का प्रचलन बढ़ रहा है। अधिकांश नेता युवा पीढ़ी को आकर्षित करने के लिए ज़्यादा-से-ज़्यादा अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग करते हैं। मीडिया भी इसी भेड़चाल का शिकार हो रहा है। हाल ही में संपन्न विधान सभा चुनाव 2017 में भी नेताओं ने पलटवार करने में अंग्रेज़ी के शब्दों को हिंदी की तुलना में ज़्यादा तरजीह दी। यथा --

मायावती का पलटवार, बोली नरेंद्र मोदी का मतलब -- निगेटिव दलित मैन।
हार्वर्ड पर भारी हार्डवर्क -- मोदी।

चुनावी हिंदी में अपशब्दों का बढ़ता प्रयोग : भारतीय राजनीति की भाषा में ऐसी गिरावट शायद पहले कभी नहीं देखी गई। राजनीति से व्यंग्य गायब है, हँसी गायब है, परिहास गायब है। उनकी जगह गालियों और कटु वचनों ने ले ली है।

वास्तव में आज न किसी को अपने पद का लिहाज़ रह गया है, न आयु का। तब भाषा की मर्यादा को कौन बचाए? चुनावी हिंदी के गिरते हुए स्तर के प्रमाण हर चुनाव में सबके सामने आ ही जाते हैं। यथा --

* अखिलेश बोले -- अब तो गुजरात के गधों के विज्ञापन आने लगे हैं।
* पी.एम. को अपशब्द कहने पर लालू के ख़िलाफ परिवाद -- आरोप है कि जौनपुर सदर विधान सभा क्षेत्र के गंभीर बाज़ार में 28 फरवरी, 2017 को बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव ने कांग्रेस प्रत्याशी के समर्थन में आयोजित सभा में भाषण के दौरान पी.एम. नरेंद्र मोदी की तुलना हिजड़े से करते हुए हिजड़ा जैसा शब्द से संबोधित किया।

चुनावी हिंदी की इस विद्रूपता पर विचार व्यक्त करते हुए लखनऊ विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान, विभाग के पूर्व-अध्यक्ष डॉ. एस.के. द्विवेदी का कहना सटीक ही

है -- सियासी दलों का मंतव्य कुछ भी हो, उन्हें भाषा का स्तर बनाये रखना चाहिए। स्तरहीन भाषा जनतांत्रिक परिपक्वता का संकेत नहीं है। संसद के भीतर और बहार जिस तरह आचरण होने लगा है, उस पर सभी को विचार करना चाहिए। सभी को भाषा की मर्यादा बनाए रखनी चाहिए।

निष्कर्ष : उपर्युक्त समस्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि लगभग सात दशकों से लोकतांत्रिक प्रक्रिया चुनावों का अंग होते हुए जहाँ भाषा की दृष्टि से हिंदी के शब्द समूह में नए-नए शब्द जुड़े हैं; वहीं जिन्होंने हिंदी का एक नया ही स्वरूप 'चुनावी हिंदी' सृजित कर दिया है, वहीं अंग्रेज़ी शब्दों के अधिक प्रयोग के कारण चुनावी हिंदी 'हिंग्लिश' होने की ओर अग्रसर है। भारतीय जनता, नेताओं, हिंदी मीडिया को इस ओर विशेष ध्यानाकर्षण करने की आवश्यकता है। चुनावी हिंदी में अपशब्दों का बढ़ता प्रयोग भी इसके स्वरूप को विकृत कर रहा है। अतः इन पर सख़्त पाबंदी लगाई जानी चाहिए। नवीन उपमेय, उपमान, प्रतीकों के प्रयोग द्वारा चुनावी हिंदी हिंदी साहित्य के प्रयोगवादी काल का स्मरण कराती है। समय व प्रयोजन से भाषा का स्वरूप परिवर्तित होता आया है और ये एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। चुनावी हिंदी ने हिंदी भाषा को सामयिक महत्ता प्रदान करने में जो योगदान दिया है, निश्चय ही सराहनीय है।

❑

कल्याण कुमार

भारतीय दलीय व्यवस्था, चुनाव और हिंदी की भूमिका

भारत एक धर्म निरपेक्ष, पंथ निरपेक्ष व लोकतांत्रिक देश है जिसमें व्यक्ति चुनाव के माध्यम से अपने प्रतिनिधि का चुनाव करता है। भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में राजनीति का मुख्य आधार वर्तमान युग में राजनीतिक दलीय व्यवस्था ही है। जन भावनाओं की अभिव्यक्ति, शासन संचालन, नीति-निर्धारण और सत्ता परिवर्तन तक का कोई भी कार्य राजनीतिक दलों से अछूता नहीं रहा है। 'दल' शब्द को अंग्रेज़ी में 'चंतजल' कहा जाता है जो लैटिन भाषा के पार्स (pars) शब्द से व्युत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है भाग या खंड। उन्नीसवीं शताब्दी में दलीय व्यवस्था का प्रयोग यूरोप एवं अमेरिका में प्रतिनिधि-संस्थाओं और मताधिकार के विकास के परिणामस्वरूप हुआ, परंतु भारत में दलीय व्यवस्था आज-कल में नहीं अपितु स्वतंत्रता से पूर्व ही प्रारंभ हो चुकी थी जिसमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, मुस्लिम लीग, समाजवादी दल और हिंदू महासभा आदि प्रमुख दल थे।

आज़ादी से पूर्व इन दलों का एक मात्र उद्देश्य भारत को ब्रिटिश प्रशासन से आज़ादी दिलाना था परंतु अंग्रेज़ों द्वारा भारत छोड़े जाने पर मुस्लिम लीग भारत का विभाजन करवाने में सफल रहा। लोकतंत्र एवं राजनीतिक दल दोनों एक-दूसरे पर आधारित से प्रतीत होते हैं। ब्रिटिश शासनकाल के समय भारत में ऐसी परिस्थितियाँ पैदा हुई जिसके कारण राजनीतिक दलों का विकास हुआ।

भारत में सर्वप्रथम ए.ओ. ह्यूम ने 1885 में कांग्रेस की स्थापना की। इसका पहला अधिवेशन 1885 मुंबई में हुआ जिसमें 72 सदस्यों ने भाग लिया। कांग्रेस के 72 सदस्य भारत के विभिन्न राज्यों से आए थे। इस दल का मुख्य उद्देश्य इंग्लैंड में विरोधी दल की भाँति सरकार को प्रशासन में सहयोग देना व जनमत का ज्ञान प्रदान करवाना था। शुरूआती दौर में तो अंग्रेज़ी सरकार को कांग्रेस का पूर्ण सहयोग दिया परंतु धीरे-धीरे यह दल राष्ट्रवादी बन गया, इसके फलस्वरूप ब्रिटिश सरकार ने इसके प्रति रूखा व्यवहार

किया। कांग्रेस के विरोध में ब्रिटिश सरकार ने 1906 में मुस्लिम लीग की स्थापना को प्रोत्साहित किया व 'मुहम्मद अली जिन्ना' की अध्यक्षता में इस दल ने 1947 में भारत को दो भागों में विभाजित कर दिया। मुस्लिम लीग की स्थापना के फलस्वरूप सन् 1916 में 'भारतीय हिंदू महासभा' की स्थापना हुई। इस दल का उद्देश्य पूर्ण-स्वराज की प्राप्ति तथा हिंदू राष्ट्र की स्थापना करना था। इस दल के अध्यक्ष सावरकर के शब्दों में ''हिंदू महासभा का उद्देश्य हिंदू जाति, हिंदू संस्कृति और हिंदू सभ्यता की देखभाल, रक्षा, विकास और हिंदू राष्ट्र के गौरव में वृद्धि और पूर्ण स्वराज की प्राप्ति है।''[1]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के बाद पूर्ण उत्कर्ष के साथ 6 अप्रैल, 1980 को जनसंघ के पुनर्गठन के रूप में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) की स्थापना हुई। इस दल का प्रथम अध्यक्ष अटल बिहारी बाजपेयी को चुना गया। इस दल के गठन के बाद हुए चुनावों में इन्हें अधिक सफलता नहीं मिली लेकिन 1989 के चुनाव व 1991 के लोक सभा के मध्यावधि चुनाव में इस दल को पूरी सफलता मिली।

जनता दल का गठन अक्टूबर, 1988 में जनता पार्टी, लोक दल (ब) और जनमोर्चा के विलय के परिणाम स्वरूप हुआ। 1989 में हुए लोक सभा चुनाव में इस दल ने अन्य दलों के समर्थन के साथ केंद्र में सरकार का गठन किया लेकिन दल के आंतरिक भेद के कारण ये सरकार 11 माह में ही गिर गई। इस दल के कई विभाजन हो चुके हैं और वर्तमान में भी इसकी विभाजन प्रक्रिया जारी है।

26 दिसंबर, 1925 को साम्यवादी नेता एम.एन. राय के परामर्श व निर्देश से भारत में कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना हुई। आगे चल कर सन् 1964 में इस पार्टी का विभाजन हुआ। यह दल अपने गठन के बाद से ही प्रभावी है और इसका अधिक प्रभाव त्रिपुरा, केरल व पश्चिम बंगाल में देखने को मिलता है।

नेशनल कांफ्रेंस मुख्य रूप से 1930 में स्थापित 'वाचनालय दल' पर आधारित है। बाद में शेख अब्दुल्ला द्वारा इसे 'अखिल जम्मू तथा कश्मीर मुस्लिम कांफ्रेंस' के रूप में गठित किया गया।

आम आदमी पार्टी (आप) सामाजिक कार्यकर्ता अरविंद केजरीवाल एवं अन्ना हज़ारे के लोकपाल आंदोलन से जुड़े बहुत सारे सहयोगियों द्वारा गठित एक राजनीतिक दल है। इसके गठन की आधिकारिक घोषणा 26 नवंबर, 2012 को भारतीय संविधान की 63वीं वर्षगाँठ के अवसर पर जंतर-मंतर (दिल्ली) पर की गई।

राजनीतिक दलीय व्यवस्था वाले भारत देश में केवल राष्ट्रीय स्तर ही नहीं अपितु क्षेत्रीय स्तर पर भी विभिन्न दल पाए जाते हैं जैसे -- नेशनल कांफ्रेंस (जम्मू-कश्मीर), अकाली दल (पंजाब), तेलगु देशम (आंध्र प्रदेश), असम गण संग्राम परिषद् (असम), व

द्रविड़ कड़गम (तमिलनाडु) आदि।

राजनीतिक दल लोकतंत्र की आधारशिला है। राजनीतिक दल के अभाव में लोकतंत्र की कल्पना नहीं की जा सकती है, इसलिए राजनीतिक दलों को लोकतंत्र का प्राण कहा गया है। दलीय व्यवस्था को सरकार का चौथा अंग कहा जाता है। यही कारण है कि लोकतंत्रीय शासन को दलीय शासन भी कहा जाता है। लोकतंत्रीय प्रतिनिधित्व के विकास के कारण राजनीतिक दलों की अनिवार्यता बढ़ गई है। लोकतंत्र में राजनीतिक दलीय व्यवस्था को लेकर यह भी कहा गया कि ''party system is the blood of democracy."[2] यह तो सत्य है कि राजनीतिक दल लोकतंत्र का रक्त है, क्योंकि दलों के कारण ही लोकतंत्रीय शासन प्रणाली सुचारू रूप से चल पाती है। विभिन्न दल होने के कारण ही शासित दल अपने कार्यों का निष्पादन अच्छे ढंग से कर पाएगा, अन्यथा वह निरकुंश बन जाएगा जैसे मैक्सिको में इंस्टीट्यूशनल रिवोल्यूशनरी पार्टी (पी.आर.आई.) बन गया था। साथ ही दल उन्हें राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का ज्ञान भी करवाएगा और उनके समाधान के लिए पर्याप्त रूप से फैसला करने के लिए बाध्य भी करेगा। शासित दल द्वारा कोई भी अनुचित कार्य करने पर अन्य दल उसका विरोध भी करेंगे व शासित दल पदच्युत होने के भय से कार्यों का संचालन पूरी ईमानदारी से करेगा। प्रो. लास्की राजनैतिक दल की विशेषता को उजागर करते हुए कहते है, ''राजनैतिक दल देश में अफसरशाही से हमारी रक्षा करने का सर्वोत्तम साधन है।"[3]

यह तथ्य तो सत्य है कि राजनीतिक दल लोकतंत्र का रक्त है, परंतु लोकतंत्र रूपी शरीर में इस रक्त का संचालन चुनाव के माध्यम से होता है। चुनाव शब्द का तात्पर्य चुनने से है अर्थात् भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में जनता का शासन, जनता के लिए तथा जनता के द्वारा चुना जाता है। अगर देश में केवल दल बन जाए और चुनाव ही न हो तो कोई भी दल देश का शासन नहीं चला पाएगा जिसके कारण राजनीतिक दल की सार्थकता सिद्ध नहीं होगी। दलों के गठन के पश्चात् चुनाव एक ऐसा मार्ग है, जिस पर सभी दलों को चलना ही पड़ता है, परंतु लक्ष्य तक उसमें से केवल वही दल पहुँच पाता है, जिसके पास पूर्ण बहुमत होता है।

भारत जैसे हिंदी भाषी देश में दलों एवं चुनाव को पूर्ण आकार देने का कार्य हिंदी भाषा ही करती है। चुनाव के प्रचार-प्रसार में हिंदी भाषा का प्रयोग ही किया जाता है क्योंकि हिंदी भाषा से ही भारतवासियों का आत्मीय संबंध व संस्कृति का जुड़ाव होता है। चुनाव के दौरान राजनेताओं द्वारा आम जनता को संबोधित करने के लिए, अपनी नीतियाँ समझाने के लिए व जनता को अपनी ओर आकर्षित करने का कार्य हिंदी के अलावा कोई अन्य भाषा कर ही नहीं सकती। चुनाव के समय प्रचारों की अहम भूमिका

होती है। चुनाव में प्रचार के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए प्रो. लास्की कहते हैं ''संसदीय शासन प्रणाली का जीवन और मृत्यु प्रचार पर आधारित होता है।"[4] पहचान-पत्र व चुनावी निर्देश भी हिंदी भाषा में जारी किए जाते है। हिंदी भाषा के प्रयोग का ज्वलंत उदाहरण माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के केवल हिंदी में दिए गए भाषण है जो अपने विचारों का प्रसार अन्य देशों में भी इसी भाषा के माध्यम से करते हैं।

अंततः कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि भारत की लोकतंत्रीय प्रणाली में राजनीतिक दलों की अपनी प्रमुख भूमिका है जिसमें किसी भी दल का अपना कोई राजनीतिक धर्म नहीं होता क्योंकि हमारा भारत देश एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है। दलों का प्राणाधार चुनाव व हिंदी भाषा ही है। भारत की शासन व्यवस्था का लोकतंत्र अगर शरीर है तो रक्त राजनैतिक दल है, इस रक्त का पूरे शरीर में संचालन करने वाला चुनाव है, तथा इस लोकतंत्र रूपी शरीर का प्राणतत्त्व हिंदी है, क्योंकि हिंदी भाषा ही एकमात्र ऐसी शक्ति रखती है जो दलों व चुनावी माहौल को एक कड़ी के रूप में जोड़ने का कार्य करती है। ये सभी एक-दूसरे के बिना पंगु है। सत्य तो यही है कि भारतीय लोकतंत्र की व्यवस्था में राजनैतिक दल, चुनाव व हिंदी भाषा एक-दूसरे के पूरक है।

❑

संदर्भ

1. भारतीय लोकतंत्र में राजनीतिक दल -- डॉ. प्रताप कुमार, पृ. 96
2. लोकतंत्र की विडंबना -- डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी, पृ. 92
3. भारतीय लोकतंत्र में राजनीतिक दल -- डॉ. प्रताप कुमार पृ. 95
4. वही

सुनील भुटानी

भारत में चुनावों में हिंदी की भूमिका

भारत देश चुनावों का देश है। भारत में अलग-अलग प्रदेशों की भिन्न-भिन्न विशेष भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार मौसम बदलते रहते हैं, और कुछ इसी तरह इन प्रदेशों में चुनावी मौसम भी अपनी छटा बिखेरते रहते हैं। चुनाव किसी भी देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था की धुरी है, लोकतंत्र का अस्तित्व चुनाव... चुनाव-प्रक्रियाओं की बदौलत ही क़ायम है। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। इस देश में समय-समय पर ग्राम पंचायतों से लेकर लोक सभा एवं राज्य सभा और राष्ट्रपति पद तक के चुनाव होते रहते हैं। प्रत्येक चुनाव की गरिमा और प्रक्रिया भिन्न-भिन्न हो सकती है, लेकिन उद्देश्य लोकतांत्रिक व्यवस्था को क़ायम रखने के साथ-साथ मज़बूती प्रदान करना है। लोकतंत्र की क़ीमत भारत देश के नागरिकों से बेहतर कौन जान सकता है, राजतंत्र से लेकर दमनतंत्र का दंश हम भारतीयों ने बरसों-बरस झेला है। संप्रभुता एवं लोकतांत्रिक व्यवस्था प्राप्त करने की लंबी यात्रा में हमने अनेकों-अनेक बलिदान दिए हैं। हमारे बलिदानियों-शहीदों के रक्त से सींची गई भारत माँ की धरती पर हर बरस लोकतंत्र के चुनावी मेले लगते रहते हैं।

विश्व में हमारा भारत देश सचमुच बहुत ही निराला है। इसी भारत देश में विश्व की सबसे अधिक भाषाएँ-बोलियाँ बोली जाती हैं और साथ ही यह देश सबसे अधिक संस्कृतियों एवं परंपराओं से अलंकृत भी है। बहुभाषा-भाषी इस देश में ग्राम पंचायतों, ब्लॉक समितियों से लेकर नगर पालिकाओं-निगमों, विधान सभा एवं विधान-परिषद्रों से लेकर लोक सभा एवं राज्यसभा और राष्ट्रपति पद तक के चुनावों में प्रत्याशियों एवं मतदाताओं के बीच संपर्क और संवाद की भाषा आवश्यकता के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। पंचायतों-निगमों के चुनावों में ठेठ देसी भाषाओं-बोलियों के साथ-साथ हिंदी का इस्तेमाल होता है तो विधान सभा चुनावों में स्थानीय/क्षेत्रीय भाषाओं तथा हिंदी का

अधिक प्रभाव दिखाई देता है। यदि लोक सभा चुनावों की बात करें तो हिंदी और क्षेत्रीय भाषाएँ परस्पर संवाद का माध्यम बनती हैं। चूँकि हिंदी हमारे देश के जन-जन और मन-मन की भाषा होने के साथ-साथ वोटर के दिलों-दिमाग़ तक पहुँचने का माध्यम भी है, इसलिए भारत देश में होने वाले किसी भी चुनाव में हिंदी प्रयोग का विशेष महत्त्व रहता है।

हिंदी आधिकारिक रूप से भारत की राजभाषा होने के साथ-साथ लोक-स्वीकृत राष्ट्रभाषा एवं आँकड़ों की कसौटी पर परखी गई सर्वोच्च विश्वभाषा भी है। हिंदी भाषा का अद्‌भुत तरीक़े से प्रयोग कर सत्ता के शीर्ष पर पहुँचने का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी के रूप में हमारे सामने है। माननीय मोदी जी ने राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी का अनुकरण करते हुए देश के जनमानस की आत्मा को छूने के लिए हिंदी भाषा का ही सहारा लिया। हिंदी भाषा भी ऐसी कि हिंदी भाषा के प्रकांड विद्वान् और भाषाविज्ञान के मूर्धन्य हिंदी के एक नए रूप को 'चुनावी हिंदी भाषा' मानने के लिए विवश हो गए। आइए माननीय मोदी जी के कुछ ऐसे हिंदी कथनों को देखें जिन्होंने देश के लोगों के मानस पटल पर अपनी छाप छोड़ी थी और जनता ने उन्हें शीर्ष राजनीतिक पद पर स्थापित कर दिया --

- ''सबका साथ, सबका विकास।''
- ''एक ग़रीब हिंदू और एक ग़रीब मुसलमान को स्वयं से पूछना चाहिए -- क्या वे एक-दूसरे से लड़ना चाहते हैं या क्या वे ग़रीबी से लड़ना चाहते हैं? भारत के विकास के लिए, हमें ग़रीबी से लड़ना है, न कि एक-दूसरे से।''
- ''हमारी संस्कृति में स्त्री का स्थान सर्वोच्च है, प्रत्येक स्थान में जहाँ महिलाओं को अवसर मिला है, वे पुरुषों से दो क़दम आगे रही हैं।''
- ''आने वाला दशक उन लोगों का होगा जिन्हें आज समाज ने हाशिये पर धकेल दिया है। आज का युवा प्रतिभावान् है और उनकी इसी प्रतिभा का सम्यक् उपयोग देश में परिवर्तन लाएगा।''
- ''जितना अधिक आप मेरे ऊपर कीचड़ फेंकेंगे, उतना अधिक कमल खिलेगा।''
- ''आप मुझे एक मज़बूत सरकार दीजिए, मैं आपको एक मज़बूत भारत दूँगा।''
- ''भारत रिवर्स गियर में चल रहा है।''
- ''हम एक 'स्किल्ड इंडिया' चाहते हैं, लेकिन कांग्रेस ने 10 साल में एक 'स्कैम इंडिया' बना दिया है।''
- ''उनका एजेंडा मोदी है, बीजेपी का एजेंडा भारत है।''
- ''मैंने चाय बेची है, लेकिन कभी अपना देश नहीं बेचा।''

- ''शहज़ादे के लिए ग़रीबी पर्यटन है, मैं जीवन में चाय बेच कर उठा हूँ।''
- ''राजवंश लोकतंत्र का दुश्मन है।''
- ''किसी भी राजनीतिक पार्टी के लिए उसका घोषणा-पत्र गीता, कुरान और बाइबिल की तरह होना चाहिए।''
- ''पूर्वोत्तर, अष्टलक्ष्मी है, उसे एक कमल की ज़रूरत है।''
- ''अच्छे दिन आने वाले हैं।''
- ''मुझे देश के लिए मरने का अवसर नहीं मिला है, लेकिन मुझे देश के लिए जीने का अवसर मिल गया है।''

माननीय मोदी जी ने भारत के ऐसे राज्यों/क्षेत्रों में हिंदी में भाषण देकर लोगों के दिलों को छुआ है जिन्हें अहिंदी भाषी माना जाता रहा है। कई ऐसे मौके भी आए जब मोदी जी ने हिंदी में भाषण दिया तो राष्ट्रीय स्तर के वरिष्ठ नेताओं ने क्षेत्रीय-भाषा विशेषज्ञ की भूमिका अदा करते हुए मोदी जी के भाषण का क्षेत्रीय भाषा में ऐसा अनुवाद पेश किया कि लोग मोदी-मोदी कर उठे।

भारतीय राजनीतिज्ञों की विशेषता रही है कि वे लोगों से वोट उनकी भाषा और शैली में बोलकर ही पाते हैं भले ही सत्ता में आने के बाद शासन-प्रशासन में प्रचलित भाषाओं का उपयोग करने लगते हैं। लेकिन माननीय मोदी जी ने दीर्घकाल से जनता और शासन के बीच की दूरी के मूल अर्थात् भाषा-भेद को समझा और सरकार तथा जनता के बीच के संवाद की भाषाओं को हिंदी एवं क्षेत्रीय भाषाओं तक सीमित करने का सफल प्रयास किया है।

प्रधानमंत्री मोदी जी और लोगों के बीच सीधे संवाद का एक उत्कृष्ट उदाहरण 'मन की बात' हिंदी के साथ-साथ क्षेत्रीय भाषाओं में भी प्रसारित होता है। इसी तरह, आम लोगों के सरोकार वाले मुद्दों से संबंधित सूचनात्मक एवं ज्ञानवर्धक सामग्रियों को हिंदी एवं क्षेत्रीय भाषाओं में तैयार और प्रकाशित एवं प्रचारित-प्रसारित किया जा रहा है। माननीय मोदी जी ने चुनावों की राजनीति से ऊपर उठकर शासन-प्रशासन में भी हिंदी एंव क्षेत्रीय भाषाओं को उचित स्थान दिया है। ख़बरों के अनुसार, भारत सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों की वेबसाइटों को हिंदी-अंग्रेज़ी के साथ-साथ क्षेत्रीय भाषाओं में भी तैयार किए जाने की दिशा में प्रयास शुरू कर दिया गया है।

भारत में चुनावों में हिंदी भाषा के महत्त्व का एक अन्य उत्कृष्ट उदाहरण हमारे सामने है। जब भारतीय राजनीति के सबसे पुराने राजनीतिक दल 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' के अध्यक्ष पद का कार्यभार श्रीमती सोनिया गाँधी जी को सौंपा गया था तो उन्हें भारतीय राजनीति को समझने और चुनावों की राजनीति शुरू करने से पहले हिंदी भाषा सीखनी

पड़ी थी। उन्होंने हिंदी भाषा को आत्मसात् करके ही भारतीय संस्कृति और राजनीति में उसके महत्त्व को समझा और अपने दल को सत्ता के शीर्ष तक पहुँचाया था। हिंदी भारतीय चुनावी राजनीति की आत्मा है।

देश के राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर के राजनीतिक दल हिंदी एवं क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से अपना-अपना राजनीतिक विस्तार कर रहे हैं। हिंदी भाषा एक विशाल बरगद के समान है जिसकी मज़बूत शाखाएँ क्षेत्रीय भाषाएँ हैं और एक-दूसरे की पूरक हैं। राजनीतिक दलों की चुनाव प्रचार सामग्री अधिकांशतः हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशित एवं वितरित की जाती है। राजनीतिक दलों द्वारा इलेक्ट्रॉनिक एवं प्रिंट मीडिया के माध्यम से अधिकांशतः हिंदी एवं क्षेत्रीय भाषाओं में चुनाव संबंधी विज्ञापन जारी किए जाते हैं। चुनावी मौसम में अंग्रेज़ी मीडिया के लोग भी वोटरों की नब्ज़ टटोलने के लिए लोगों से हिंदी में बात करते हुए दिखाई दे जाते हैं। देश के लगभग 80 प्रतिशत लोग हिंदी बोलते और समझते हैं तथा इलेक्ट्रॉनिक एवं प्रिंट मीडिया के विभिन्न रूप टी.आर.पी. की दौड़ में शामिल दिखाई देते हैं, ऐसे में इनमें से कोई भी हिंदी एवं हिंदी-भाषियों को नज़रअंदाज नहीं कर सकता।

भारत में चुनाव करवाने की ज़िम्मेदारी स्वायत्त संस्था 'भारतीय चुनाव आयोग' को सौंपी गई है। यह संस्था एक केंद्रीय संगठन है और इस संस्था पर राजभाषा हिंदी के प्रयोग संबंधी सभी प्रावधान लागू होते हैं। इस संस्था द्वारा चुनावों में राजभाषा हिंदी के प्रयोग संबंधी प्रावधानों का पालन तो किया ही जाता है, इसके साथ ही साथ 'भारतीय चुनाव आयोग' के अधीन कार्य करने वाले 'राज्य चुनाव आयोग' राज्य विशेष की राजभाषा को भी साथ लेकर चलते हैं। निर्वाचन क्षेत्र विशेष को ध्यान में रखते हुए चुनाव सामग्री प्रकाशित और वितरित की जाती है। चुनाव ड्यूटी करने वाले सरकारी अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रशिक्षण-सामग्री और प्रशिक्षण हिंदी अथवा क्षेत्र विशेष की भाषा में दिया जाता है। चुनाव प्रक्रिया के दौरान चुनाव अधिकारियों/कर्मचारियों द्वारा वोटरों से बातचीत भी हिंदी अथवा क्षेत्र विशेष की भाषा में ही की जाती है। मतदान केंद्र पर मतदाताओं के लिए आवश्यक निर्देश और जागरूकता सामग्री भी हिंदी अथवा क्षेत्र विशेष की भाषा में दिए जाते हैं।

यदि हम भारत में चुनावों में हिंदी की भूमिका का क्रमवत् विश्लेषण करें तो अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रकट होते हैं, आइए इन पर संक्षेप में एक नज़र डालते हैं --

1. सर्वप्रथम, चुनावों की घोषणा और तारीख़ों के ऐलान संबंधी प्रैस कांफ्रेंस में मुख्य/उप/राज्य चुनाव आयुक्त, जैसी भी स्थिति हो, मीडिया को हिंदी में संबोधित करते हैं। हालाँकि, आवश्यकतानुसार अंग्रेज़ी और/अथवा क्षेत्रीय भाषा विशेष में

भी मीडिया को संबोधित करते हैं। राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन करते हुए, प्रेस-विज्ञप्ति हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं में जारी की जाती है।

2. चुनावों के विभिन्न चरणों के लिए भारत के राजपत्र में अधिसूचनाएँ, राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन करते हुए, द्विभाषा (हिंदी-अंग्रेज़ी) में प्रकाशित करवाई जाती हैं।
3. संपूर्ण चुनाव प्रक्रिया के अंतर्गत केंद्र एवं राज्य सरकारों के अधिकारियों/कर्मचारियों की सेवाएँ ली जाती हैं। इन अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण सामग्री हिंदी, अंग्रेज़ी और क्षेत्रीय भाषा, जैसी भी स्थिति हो, उपलब्ध करवाई जाती है। प्रशिक्षण कार्यक्रमों के दौरान हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषा, जैसी भी स्थिति हो, का इस्तेमाल किया जाता है।
4. चुनाव प्रचार के दौरान नेताओं/प्रत्याशियों द्वारा हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषा का इस्तेमाल किया जाता है।
5. चुनाव प्रक्रिया के अंतर्गत इस्तेमाल किए जाने वाले प्रपत्र द्विभाषी/हिंदी/क्षेत्रीय भाषा विशेष में, जैसी भी स्थिति हो, मतदान अधिकारियों को उपलब्ध करवाए जाते हैं जिन्हें अधिकारियों द्वारा अधिकांशतः हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषा में भरकर जमा करवाया जाता है।
6. चुनाव के दिन मतदान ड्यूटी करने वाले अधिकारियों/कर्मचारियों तथा वोटरों के बीच परस्पर मौखिक/लिखित संवाद की भाषा अधिकांशतः हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषा विशेष होती है।
7. मतदान के पश्चात् मतगणना अधिकारियों और प्रत्याशियों अथवा उनके द्वारा नामित एजेंटों के बीच परस्पर मौखिक/लिखित संवाद की भाषा अधिकांशतः हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषा विशेष होती है।
8. मतगणना परिणामों की घोषणा संबंधी काग़ज़ात/प्रमाण-पत्र द्विभाषी/हिंदी/क्षेत्रीय भाषा विशेष में, जैसी भी स्थिति हो, जारी किए जाते हैं।

उपर्युक्त प्रकट तथ्यात्मक स्थिति से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत में चुनावों में हिंदी की भूमिका बेहद अहम है और हिंदी प्रयोग के बिना भारत में लोकतांत्रिक महोत्सवों अर्थात् चुनावों के आयोजन की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती। विश्वभाषा हिंदी का डंका तो हाल ही में अमेरिका में संपन्न राष्ट्रपति चुनाव के दौरान भी देखने को मिला। इस राष्ट्रपति चुनाव के दोनों प्रत्याशियों श्रीमती हिलेरी क्लिंटन और श्री डोनाल्ड ट्रंप ने अमेरिका में रह रहे हिंदवासियों को अत्यंत महत्त्व दिया और कहीं न कहीं वहाँ का यह चुनाव भारत में संपन्न 2014 के लोक सभा चुनावों में अपनाई गई रणनीतियों

से भी प्रभावित दिखाई दिया। आश्चर्य तो तब हुआ जब अमेरिकी राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारों को मतदान करने के बाद इलेक्ट्रॉनिक रूप से प्राप्त होने वाली पर्ची पर हिंदी को भी स्थान दिया गया था।

निष्कर्षतः भारतीय लोकतंत्र की धुरी चुनाव है तो संपूर्ण चुनाव प्रक्रिया हिंदी के इर्द-गिर्द घूमती है। एक ओर जहाँ सरकारी चुनाव मशीनरी नियमों के तहत या कहें उससे भी आगे बढ़ कर देश के लोगों की भावनाओं के अनुरूप हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषाओं का इस्तेमाल कर रही है, वहीं दूसरी ओर राजनेता हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषाओं के नए कलेवर का प्रयोग कर सत्ता के शीर्ष पदों पर पहुँच रहे हैं। वर्ष 2014 के लोक सभा चुनावों और उसके बाद हुए कई विधान सभा चुनावों में हिंदी भाषा और इसकी विशिष्ट चुनावी शब्दावली का अत्यधिक प्रयोग कर एक राजनीतिक दल विशेष ने अपने विपक्षी प्रतिद्वंद्वियों को चारों खाने चित कर दिया है। आज हिंदी राष्ट्रवाद के अनेक प्रतीकात्मक चिह्नों में से एक विशिष्ट चिह्न के रूप में गुंजायमान हो रही है। मौजूदा चुनावी हिंदी ने देश के विभिन्न हिंदीभाषी और हिंदीत्तर भाषी प्रांतों के बीच राम-सेतु का काम भी किया है। जय हिंद... जय भारतीय लोकतंत्र... जय हिंदी।

❑

संतोष बंसल

चुनावों में हिंदी भाषा का विकसित होता मुहावरा अथवा भाषा का संस्कार

इस टॉपिक पर चर्चा से पूर्व मैं भारतीय ज्ञानपीठ से पुरस्कृत बांग्ला लेखक श्री शंख घोष की कविता की पंक्तियाँ उद्धरित करना चाहूँगी जो निम्नलिखित हैं --

अब कौन किसे क्या समझाये?
अर्थहीन शब्द आर्त्तनाद करते हैं
तुम स्तब्ध होकर सुनते रहते हो,
देश ने हमें आज तक कोई?
देश ने हमें अभी तक कोई मातृभाषा नहीं दी है।

इसके क्या कारण है? इसके लिए हमें देश में हिंदी भाषा की स्थिति के विषय में अब तक की सभी राजनीतिक, सामाजिक एवं समसामयिक परिस्थितियों को खंगालना होगा। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राज भाषा हिंदी का बोलबाला संविधान में राजभाषा संबंधी प्रावधानों के बाद हुआ और अनेक प्रदेशों में हिंदी में कामकाज शुरू हुआ। किंतु अनेक सरकारी, ग़ैर-सरकारी संस्थानों, तकनीकी सहयोग और अन्य प्रोत्साहनों के बाद एवं आज़ादी के इतने वर्षों बाद भी हिंदी भाषा सिर्फ़ संवैधानिक धक्के से ही चल रही है, स्वतः स्फूर्त प्रयासों से नहीं। कभी यह दक्षिण भारत में विरोध का मुद्दा बनी, तो कभी उत्तर भारत के विशेष क्षेत्र को 'हिंदी बेल्ट' के नाम से पुकारा जाने लगा। मतलब यह है कि इस विषय पर राजनीतिक रोटी सेकी गई और नेताओं की कभी एक राय नहीं बन पाई। अब हम इसकी सामाजिक पृष्ठभूमि को देखें तो पाएँगे कि आधुनिक हिंदी भाषा में तत्सम, तद्भव और देशज शब्दों की भरमार है और इसको खड़ा करने में इस धरती की अनेक बोलियों जैसे अवधी, बुंदेलखंडी, ब्रज, मालवी, राजस्थानी, मैथिली, भोजपुरी आदि का अहम योगदान है। केवल संस्कृत के बलबूते वह पूजा-पाठ के योग्य तो बन सकती

थी, किंतु 'लिंगुआ फ्रेंका' का दर्ज़ा हासिल न कर पाती। इन बोलियों का ही वैभव है कि अनेक भक्त कवियों और साहित्यकारों ने हिंदी भाषा को समृद्ध किया है। बोलियाँ न होती तो महाकवि तुलसी जन-जन में न छाए होते और कृष्ण भक्त सूरदास के पदों का लालित्य सर चढ़ कर न बोलता। विद्वान् विद्यापति मैथिली में लिखने के बावजूद हिंदी के सिरमौर कवि न कहलाते।

वास्तव में हिंदी भाषा का बुनकर कौन है? क्या लेखक और कवि? ये तो इसके उपभोक्ता या प्रयोक्ता है। इस भाषा के कारीगर गाँव-देहातों में, कस्बों और छोटे शहरों में है। यह भाषा चौक-चौराहों, लोहा मंडियों, ठठेरों, किसानों, जुलाहों, मज़दूरों, खदान में काम करने वालों, रोपनी, निराई-गुड़ाई से लेकर तमाम सांस्कारिक अनुष्ठानों व मेले-ठेले जाते हुए गीत गाने वाली महिलाओं में सुनाई देगी। यह वही भाषा है जिससे गाँव में एक आदमी अपनी सारी ज़िंदगी काट लेता है, एक बच्चा अपनी जिस थोड़ी-सी भाषा से अपना काम चला लेता है। यह वही भाषा है जिसे बोलकर एक राजनेता चौराहों पर भीड़ जमा कर लेता है और जिसमें आह्वान करने पर लोग घर से बाहर निक़ल आते हैं। ग़लती यह हुई कि आज़ाद भारत में शब्द कोशों, पाठ्यक्रमों का जिस तरह निर्माण किया गया, उसमें कठिन और अनूदित हिंदी का बोलबाला रहा जो न तो जनता की ज़ुबान पर चढ़ सकी, न विद्यार्थियों व अध्यापकों की। अंग्रेज़ी को आज भी नौकरियों में, पढ़ाई में, प्रबंधन में, प्रशासन में वही रूतबा हासिल है जो पहले रहा है। आज जिस तरह की सिंथेटिक भाषा हमारे दिलों-दिमाग़ में जगह बनाए है, वह अपने मूल से कट गई है। जबकि लोगों का दुःख दर्द बयाँ करने वाले लोक गीत हो या उनकी ठेठ ज़ुबान, वह तो देहातों की मिट्टी से ही जुड़ी है।

हिंदी के अखबारों और समाचार-चैनलों पर तथाकथित यह नई हिंदी अपने सबसे सतही और विकृत रूप में दिखाई देती है। सोशल मीडिया के आगमन और विस्तार के साथ एक नई और एक ऐसी हिंदी भी दिख रही है जिसमें एक ही साथ देवनागरी और रोमन दोनों लिपियों का इस्तेमाल जारी है। यह जो नई हिंदी लिखी जा रही है, वह अपने हालात की निहायत ऊपज है जिनका वास्ता हमारे पूरे शासनतंत्र और उसके पीछे की औपनिवेशिक विरासत से है। जो नई चिंता की बात है वह यह है कि अकादमिक दुनिया के दरवाज़ों से होती हुई मीडिया घरानों तक अपनी घुसपैठ कर चुकी इस हिंदी को अब साहित्य में रोपने की तैयारी चल रही है। अब एक लोकप्रिय किस्म की हिंदी लिखने का आग्रह बढ़ा है, जिसके साथ यह कहा जा रहा है कि युवाओं को जो हिंदी समझ आती है उसी में लिखा हुआ साहित्य बिकेगा। आम लोगों को समझ में आने वाली भाषा लिखे जाने की दलील के साथ परोसी हुई हिंदी से ढेर सारे शब्द हटाए

जा रहे हैं। पढ़ाई-लिखाई की हमारी पूरी शब्दावली अब अंग्रेज़ी पर निर्भर है। पाँचवीं-छठी-सातवीं कक्षा जैसे शब्दों के स्थान पर 'फिफ्थ' और 'सिक्स्थ' आदि क्लास का प्रयोग होता है। अब प्रश्न उठता है इसका समाधान क्या है? वास्तव में इसके लिए कोरे नारों और भाषणों की नहीं, बल्कि पूरे हालात के ख़िलाफ़ कई स्तरों पर एक लंबी लड़ाई लड़ने की ज़रूरत है जिसके लिए बुद्धिजीवियों और कलाकारों द्वारा आगे बढ़कर प्रयास किया जाना चाहिए; और यह मुद्दा जन-आंदोलन का रूप ले प्रत्येक प्रबुद्ध नागरिक के भीतर पैठ जाए, तभी यह संभव हो पाएगा।

हिंदी भाषा की ऐसी स्थिति को देखते हुए अब अगर हम चुनावों में हिंदी भाषा के बदलते तेवर की खोज़-बीन करें तो हमें उन राज्यों का विश्लेषण करना होगा। अभी जिन पाँच राज्यों में चुनाव हुए हैं उनमें मणिपुर, गोवा अहिंदी भाषी क्षेत्र है और पंजाब तथा उत्तराखंड में अपनी स्थानीय भाषाएँ हैं। लेकिन उत्तर प्रदेश जो प्रमुख हिंदी प्रदेश भी है जहाँ हिंदी भाषा के साहित्य का आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक पूर्ण विकास हुआ वहाँ चुनावों के बाद उपरोक्त विषय और अधिक चिंतनीय हो गया है और देश के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में चुनाव प्रचार ख़त्म होने के साथ बहस के कई नए मुद्दे उभरे हैं। यह बहस प्रचार की शैली पर है, जिसमें जो शब्द सुने गए, उनका प्रयोग तथा शोर बहुत ख़तरनाक था तथा जिसकी गूँज ज़मीन पर और अनुगूँज आभासी दुनिया में भी देर तक महसूस की जाएगी। प्रतिष्ठा से कहीं आगे की लड़ाई बनते इस दौर में नैतिकताएँ तार-तार हुई। भाषा, आचरण और विचार की नैतिकता टूटी। वैसे पाँचों राज्यों में चुनाव के अंतिम दौर में, ख़ासकर उत्तर प्रदेश में वाद-संवाद की धज्जियाँ उड़ाई गईं। छोटे-बड़े सभी स्टार प्रचारकों ने भाषा और प्रस्तुति की मर्यादाओं की सीमा को नकारते हुए प्रचार को निचले दर्ज़े तक ले जाने का इतिहास रच दिया।

उनके भाषणों में स्थानीय समस्याओं और विकास के मुद्दे न होकर एक-दूसरे को नीचा दिखाने की बातें अधिक थी। मुझे याद है, हिंदी हिंदुस्तान अख़बार के संपादक श्री शशि शेखर ने अपने कॉलम में बार-बार यही लिखा कि नेताओं के भाषणों से किसानों, बुनकरों, और पानी-नदियों के सभी मुद्दे नदारद थे।

हम जब पिछली संसदीय परंपरा का अवलोकन करते हैं तो देखते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् राजनीतिक संवाद-प्रतिवाद में कभी कांग्रेस के मुखर आलोचक रहे श्री राम मनोहर लोहिया ने 1966 में इंदिरा गाँधी को 'गूँगी गुड़िया' कहा था। पर दोनों के बीच कभी तीखी कटुता नहीं रही। इसी तरह श्री अटल बिहारी बाजपेयी की संसद में और संसद के बाहर चुनावी सभाओं में भी शिष्टतापूर्ण, लेकिन तीखे भाषण भारतीय लोकतंत्र की आलोचनात्मक परंपरा की थाती है। उनके शालीन व्यंग्य गहराई तक चोट करते थे।

लेकिन देश के सत्तर साल के लोकतांत्रिक इतिहास में उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव 2017 को ऐसे राजनीतिक आलोचना और प्रतिवाद के अवसर के रूप में याद किया जाएगा, जिसमें संवाद और राजनीतिक आलोचना की मर्यादाएँ तार-तार हो गई। नितांत व्यक्तिगत आक्षेपों से लेकर शर्मिंदा करने वाले आरोप-प्रत्यारोप भी इस चुनाव की ख़ासियत रहे। सिर्फ़ मतदाताओं की अभूतपूर्व ख़ामोशी ने तूफान के पहले की ख़ामोशी के प्रचलित मुहावरे को तोड़ा है। उसने अपने इशारे पर सबको नचाया, सड़क-सड़क दौड़ाया, लेकिन मंजिल किसी को न दिखाई। इस चुनाव में सुप्रीम कोर्ट द्वारा प्रतिबंध करने के बावजूद जाति-धर्म पर आक्रामकता देखी जो सिर्फ़ वोट की राजनीति से प्रेरित थी। इस पुरानी गोलबंदी के नए प्रयासों में ध्रुवीकरण के नए शब्दकोष का ईजाद भी दिखा।

विकास और राजनीति के मूलभूत मुद्दों से कहीं दूर भटक कर पूरा चुनाव अभियान स्तरहीन आरोपों-प्रत्यारोपों और वार-पलटवार में सिमट गया। राजनीतिक प्रचार लीला के कटु-तंज के प्रमाण भाषणों में नहीं, पोस्टरों, बैनरो, पैंफलेट आदि में भी दिखाई पड़े। शब्द बाण युद्ध में कहा गया -- 'वह फिल्म दिलवाले दुल्हनियाँ ले जाएँगे' के शाहरूख थे, पर वह निक़ले 'शोले' के गब्बर सिंह। या सदी के महानायक अब गुजरात के गधे-खच्चरों का प्रचार बंद करे। इसके जवाब में कहा गया कि हम गुजरात में शेर की ही तरह गधों की भी परवरिश करते हैं। इसके साथ 'गाँव में कब्रिस्तान बने, तो शमशान भी बने'।

रमजान पर भरपूर बिजली मिले तो दिवाली पर भी मिले। काशी से चुने गए है तो झूठ न बोले। बी.बी.सी -- बुआ ब्रॉडकास्टिंग कॉर्पोरेशन, बीएसपी -- बहन जी संपत्ति पार्टी। यू.पी. में गोद लिए बेटे की ज़रूरत नहीं। सकैम, यानी समाजवादी पार्टी, काँग्रेस और मायावती। इसका पलटवार था -- सकैम यानी सेव कंट्री फ्रॉम अमित शाह एंड मोदी। 'कसाब' यानी कांग्रेस, स -- सपा, ब -- बसपा। अखिलेश ने पिता को बनवास दिया। खोजेंगे गंगा के गुनाहगार को। भारतीय जनता पार्टी यानी भारतीय जुमला पार्टी। ये वे उदाहरण है जो टेलीविज़न और अख़बारों की सुर्खियों में आ गए। ज़मीन पर जो हुआ, वह इससे ज़्यादा उग्र और अशोभनीय था। अब वार्ताकार किसी की सुनते नहीं, दूसरे को बोलने नहीं देते फिर चाहे बहस का कोई भी मुद्दा हो, मंच भिंडी बाज़ार की तरह अपनी-अपनी ढपली, अपना-अपना राग बजाता रहता है।

इसी बीच प्रधानमंत्री के भाषणों की भाषा को लेकर सोशल मीडिया पर लंबी बहस और चर्चाएँ चली। पत्रकारों ने कहा कि यह भारत के प्रधानमंत्री की भाषा नहीं। यह 'सबका साथ-सबका विकास' की भाषा नहीं। मोदी जी को इस पद की गरिमा के अनुकूल व्यवहार रखना चाहिए। नेताओं के आचरण का यह प्रश्न पूरे विश्व में उठ रहा है क्योंकि इसी तरह हाल में अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव में मुख्य प्रतिद्वंदी डोनॉल्ड ट्रंप और हिलेरी क्लिंटन के बीच संवाद की सीमाएँ भी लाँघी गई थी। क्या यह इस वक़्त की ख़ामी

है? जिसमे हम सभ्य समाज की संचार भाषा की मर्यादाएँ तोड़ रहे है। इसमें आंगिक संचार (बॉडी लेंगुएज) और शाब्दिक संचार, दोनों की ही शालीनता और सभ्यता हम भूल गए हैं। संभवतः नेता भी इसी समय का हिस्सा है इसीलिए उनका आचरण भी छिछला हो गया है। उत्तर प्रदेश में जो हुआ, वह भाषा वैज्ञानिकों के लिए शोध का अच्छा विषय बन गया है। इलाहाबाद हाई कोर्ट की लखनऊ बेंच ने एक जनहित याचिका की सुनवाई करते हुए चुनाव में ऐसे उत्तेजक और अस्तरीय भाषणों पर रोक लगाने के लिए चुनाव आयोग को हिदायत दी हैं। यह याचिका बताती है कि राजनीतिक वाद-संवाद और आक्षेपों की मर्यादा की टूटती सीमाएँ शब्द हिंसा पूरे सभ्य समाज के लिए चिंता का विषय बन गई है। चुनाव प्रचार के तौर-तरीक़ों, भाषा की टूटती मर्यादाएँ, वोटर को लुभाने के हथकंडों ने सोचने को विवश किया कि कहीं यह स्वस्थ लोकतंत्र से पंगु जनतंत्र की ओर जाने का प्रस्थान बिंदु तो नहीं?

अंत में हम भाषा के संस्कार की बात करें तो उसमे बहुत स्थूल क़िस्म की छींटाकशी से लेकर बहुत सूक्ष्म क़िस्म की आलोचना की गुंजाइश रहती है। वह कभी-कभी बिलकुल सड़क छाप हो सकती है तो कभी महलछाप भी बन सकती है। यह पगडंडियों वाली भाषा भी हो सकती है और राजमार्गों वाली भी।

उसमें मंत्र और श्लोक भी हो सकते हैं, गालियाँ और अपशब्द भी। दरअसल अभिव्यक्ति के लिहाज़ से उसमें दुनियाभर के शब्द और विचार समा सकते हैं। लेकिन भाषा का इस्तेमाल करने वाला अपना संस्कार दिखाता है, जिसमें उसका आचरण व्यक्त होता है और आजकल एक-दूसरे को नीचा दिखाकर, साध्य प्राप्त करना मक़सद है, फिर चाहे साधन या भाषा कैसी ही 'वल्गर' या अश्लील क्यों न हो? चुनाव में भी यही लक्ष्य सामने रखा जा रहा है। ''किसी भी तरह सत्ता हासिल करो'' उसके लिए भाषा, शैली, पैसा, सामान, संबंध सिर्फ़ उपयोगी हथियार है।

अभी 'नया ज्ञानोदय' पत्रिका में श्री प्रियदर्शन के शब्दों में, ''नई हिंदी भी सरल नहीं है, वह एक बहुत सूक्ष्म सांस्कृतिक या अपसांस्कृतिक आक्रमण की देन है जिसमें वर्चस्ववादी तबक़े ख़ुद को समझ में आने वाली भाषा लिखवा रहे हैं और उसे स्मृति और परंपरा से बुरी तरह काट रहे हैं। यह खोखली हिंदी हमें खोखला कर रही है।''

❑

उमाकांत खुबालकर

चुनाव प्रचार में नेताओं का मतदाता से संवाद और हिंदी

यह एक जमीनी सच्चाई है कि वर्षों पहले जिस तरह आज़ादी हासिल करने की लड़ाई लड़ने के लिए जनसंपर्क की भाषा हिंदी रही है थी और अब चुनाव का महासमर जीतने के लिए हिंदी एक महत्त्वपूर्ण माध्यम बनी है। अंग्रेज़ी की गुलामी की मानसिकता एवं उसके वर्चस्व की महिमा का गुणगान करने वाले नेता भी हर वर्ग के मतदाता से जुड़ने के लिए उसकी सार्वभौमिकता को स्वीकार करने लगे हैं। बस यूँ कह लीजिए कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तथा कटक से लेकर अटक तक संपर्क की प्रभावशाली भाषा के रूप में हिंदी का बोलबाला है। यह उसकी प्रभामंडल की न रुकने वाली तीव्र रश्मियाँ हैं जिन्होंने इसे आकंठ अपना लिया है। हिंदी भी उसी रूप में अपनी विरासत, शक्ति, संपदा उन्हें सौंप रही है।

हिंदी मात्र एक भाषा ही नहीं, एक विराट चेतना और संस्कारशीलता है जिसने समस्त राष्ट्र को अपने अंतर में बसा रखा है। आप उसे किसी भी संज्ञा से अभिहित कर सकते हैं। उसकी परिसीमा अमर्यादित है। निराकार ब्रह्म की तरह कण-कण में व्याप्त है। आप यह माने या न माने? उसे 'राष्टभाषा' का दर्ज़ा दें या न दें? अगर ''अंग्रेज़ी मस्तिष्क की भाषा है तो हिंदी हृदय को झंकृत करने वाली गतिशील भाषा है।'' दरअसल, अंग्रेज़ यहाँ आकर अंग्रेज़ी की अदृश्य रेखा खींच गए थे तब लोगों ने यह सोचा था कि यह कोई लक्ष्मण रेखा नहीं, भूगोल की विषुवत् रेखा भी नहीं है। अतः इसे लाँघना भी नहीं होगा? समय के रथ के साथ बड़ी रेखा को खींचकर सात समंदर पार करके न्यूयॉर्क तक पहुँचना होगा। यह अतिशयोक्तिपूर्ण उक्ति नहीं, बल्कि ऐतिहासिक एवं ज़मीनी सच्चाई है कि लंदन में आयोजित 'छठे विश्व हिंदी सम्मेलन' के उद्घाटन के अवसर पर तत्कालीन प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर के विशेष प्रतिनिधि ने

सद्भावना संदेश में एक वाक्य पढ़ कर सभागार के हिंदी प्रेमियों की तालियाँ एवं खुशियाँ बटोर ली थी। वह ब्रह्म वाक्य था -- ''Hindi is a beautiful language of the world.'' उस अपूर्व ऐतिहासिक क्षण का मैं भी साक्षी रहा हूँ कि हिंदी को 'हिंडी' कहने वाले गौरांग महाप्रभुओं को हिंदी की इस अदृश्य महाशक्ति के दिव्यत्व का बोध हो गया था कि सुगंधित पुष्प को आप कितना भी दबा कर रखें उसकी स्वभावजन्य ख़ुशबू कहीं रुकती नहीं है। दिक्-दिगंत तक महकने वाली हिंदी की परिव्याप्ति को कई तरह के चोले बदलने वाले राजनीतिज्ञ भी जान चुके हैं कि बड़े विद्वान् ने कहा है कि ''हिंदी एक रूपवती भिखारिन की तरह है, उसे हर कोई भीख तो दे देता है परंतु कोई अपनाता नहीं।'' लेकिन अब यह स्वर्णिम युग आ गया है कि बॉलीवुड से फालीवुड तथा हालीवुड से भी आगे हिंदी, अश्वमेघ यज्ञ के अश्व की तरह ललकार रही, ''अरे बबुआ यदि दम हो तो हमको पकड़ कर तो दिखाओ।'' इसीलिए वर्षों पूर्व केंद्रीय वित्त मंत्री श्री चिदंबरम को अपना अंग्रेज़ी मोह त्यागते हुए यह कहना पड़ा था -- ''काश! मैं हिंदी जानता, तो भारत का प्रधानमंत्री होता।'' वे हिंदी की महाशक्ति को पहचान गए परंतु उसे अपनाने का साहस नहीं कर सके। परंतु एक अन्य अनुकरणीय उदाहरण है, तमिल भाषी राजनेता डॉ. सुब्रह्मण्यम् स्वामी का जिन्होंने हिंदी सीख ली, जिसका यह फ़ायदा हुआ कि रजत शर्मा के चर्चित इंटरव्यू कार्यक्रम 'आपकी अदालत' में देश की असंख्य जनता से जुड़ गए। अपनी चुटीली एवं लाक्षणिक हिंदी प्रयोग से दर्शकों को चमत्कृत कर दिया। अंग्रेज़ी के किसी भी 'टाक शो' में उन्हें दर्शकों की इतनी तालियाँ और प्यार नहीं मिलता। डॉ. स्वामी हिंदी सीख कर देश की जनता के चहेते बन गए तथा उनके दिल में समा गए।

देश के किसी भी हिंदी भाषी या अहिंदी भाषी नेता ने यदि हिंदी को अपनाया है तो, हिंदी ने प्रतिदान स्वरूप उसे अपने गले लगा लिया है। अगर आपने हिंदी को अपने प्राणपण से अपना लिया है तो इसका मतलब यह नहीं है कि उसे अंग्रेज़ी से सौतेला डाह है या अन्य भगिनी भारतीय भाषाओं के प्रति विराग है। हिंदी गंगा की तरह सभी को साथ लेकर प्रवाहित होती है चाहे उसके मुख पर आप कालिख पोतों या गले में पुष्प माला डालो? वह राष्ट्र माता की तरह सब कुछ उच्छिष्ट ग्रहण करके विशुद्ध प्रेम सभी को बाँटती फिरती है। अपनी यात्रा में जिस प्रांत या स्थान विशेष से गुज़रती है, वहाँ की भाषा के शब्द अपने विराट आँचल में समा लेती है। इसीलिए चुनावी माहौल में नेतागण जनता से संवाद करते समय, स्थान विशेष की माटी की गंध अपने वक्तव्य में महका देते हैं। दिल्ली का कोई राजनेता यदि मुंबई में भाषण देता है यदि उस दरमियान महाराष्ट्र के वीर शिवाजी का उल्लेख कर देता है तो वहाँ का निवासी, वक़्ता से प्रभावित हो जाता है। वैसे भी हमें अपने देश की सामाजिक

संस्कृति को जानने की लालसा रहनी चाहिए। यही हमारी राष्ट्रीयता है।

इसी परिप्रेक्ष्य में यह भी उल्लेखनीय है कि अपने राजनैतिक जीवन में जनता को अपने पक्ष में सम्मोहित करने की कला, स्व. ललित नारायण मिश्र (पूर्व रेल मंत्री), अटल बिहारी वाजपेयी (पूर्व प्रधानमंत्री), लाल बहादुर शास्त्री, इंदिरा गाँधी, लालकृष्ण आडवाणी चुनावी सभा में मतदाताओं को अपनी विलक्षण वाक् शैली से मंत्र-मुग्ध कर दिया करते थे। इन महान् नेताओं की चुनावी यात्राओं से चुनाव रण की दिशा ही बदल जाती थी। मतदाताओं की अपार भीड़ को दर्शाने के लिए मीडिया टीम भी दौड़ पड़ती थी। जिस तरह किसी भी राजनैतिक दल को जनता की भीड़ खींचने वाला करिशमाई नेता चहिए, उसी तरह मीडिया को अपनी फुटेज या प्रचार के लिए जन-नायक चाहिए। ऐसी असाधारण क्षमता माननीय नरेंद्र मोदी में है। वह विरोधी खेमे की भीड़ में जनता से प्रत्यक्ष संवाद करते हैं। उनकी ग़लत सोच को ख़त्म कर उनको नई दिशा दे सकते हैं। इस प्रसंग में याद आता है। प्रधानमंत्री बनने के पूर्व स्वर्गीय इंदिरा गाँधी लगभग 17 वर्ष पंडित नेहरू के साथ सैकड़ों जन-सभाओं में शिरकत कर चुकी थीं। इसी भीड़ से जन-नेतृत्व की शक्ति ग्रहण की तथा जन-समूह के मनोविज्ञान को भी समझा। उनके व्यक्तित्त्व के सम्मोहन तथा वक़्तृत्व की अद्‌भुत शैली ने उन्हें लोकप्रिय नेता बना दिया था। इंदिरा गाँधी तथा उनके बाद जनता की भीड़ को प्रभावित करने के लिए लोक लुभावन नारे भी गढ़े जाते थे। इंदिरा ने 'ग़रीबी हटाओ' का नारा दिया था। तत्पश्चात् स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्री ने कोई नारा नहीं दिया था बल्कि भारत-पाकिस्तान का युद्ध जीतने, जनता और सेना का मनोबल बढ़ाने के लिए 'जय जवान -- जय किसान' का नारा बुलंद किया था। मोदी जी ने तो कई मन-लुभावन नारे, वाक्यांश दिए हैं। जिनमें से कुछ हैं -- 'काला धन हटाओ', 'अच्छे दिन आने वाले हैं', 'सबका साथ देश का विकास' इत्यादि।

बहरहाल चुनाव जीतने के लिए जन-प्रिय नेता हो या राजनीति की पगडंडी पर चलने वाला नेता, उसे बार-बार जनता के बीच जाना पड़ता है तथा जाना भी चाहिए। वर्तमान समय में जन-मत में जो परिवर्तन हो रहा है उसका प्रत्यक्ष जायज़ा लेना चाहिए। उनके साथ संवाद साधने की कला हस्तगत होनी चाहिए। उसे भाषा के व्याकरण जानने के बजाय जन-जीवन में प्रचलित शब्द उठाने चाहिए और हिंदी के बगैर जनता से जुड़ना संभव नहीं है चूँकि आज़ादी के बाद हिंदी ने सत्ता के कई पड़ाव देखे हैं और आज यह अपनी सह-भाषाओं के साथ विश्व की सबसे ज़्यादा बोली जाने वाली जन-भाषा के रथ पर आरूढ़ हो गई है।

❑

सुमन

भारत के चुनावों में हिंदी की भूमिका

भारत एक लोकतांत्रिक गणराज्य है जहाँ विभिन्न प्रकार की जातियाँ, धर्म, समूह, संप्रदाय हैं। भारत में इतनी विभिन्नता होने के बावजूद एकता की लहर सदैव प्रवाहित रहती है। इसका मूल यहाँ की उस भाषा में निहित है जो दूर को पास लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य अनवरत रूप से कर रही है और करती रहेगी। ऐसी सामर्थ्यवान भाषा हिंदी है, जिसका प्रयोग संपूर्ण भारत में ही नहीं अपितु समूचे विश्व में किया जाता है। भारतीय समाज में घटित होने वाले प्रत्येक महत्त्वपूर्ण कार्य का प्रचार-प्रसार अधिकांशतः हिंदी में ही किया जाता है। जहाँ तक चुनावों के प्रचार-प्रसार की बात की जाए तो उसमें भी हिंदी का ही प्रयोग होता है क्योंकि यह वह भाषा है जिसका प्रयोग सुशिक्षित से लेकर निरक्षर द्वारा किया जाता है। किंतु, हाँ इतना अवश्य कहा जा सकता है कि चुनावों में जिस हिंदी भाषा का प्रयोग किया जाता है उसका स्वरूप कुछ नया विकृत, प्रभावी और अत्यंत राजनीतिपूर्ण होता है।

प्रायः चुनावों में प्रयुक्त हिंदी में ऐसा शाब्दिक मायाजाल होता है कि जनता बड़ी सहजता के साथ उसमें फँस जाती है क्योंकि उस माया का सीधा संबंध हृदय स्पर्श तरंगों के साथ जुड़ा होता है। यही कारण है कि भारत के चुनावी दंगल में हिंदी के साथ नित नए प्रयोग होते रहते हैं और होते रहेंगे।

भारत में प्रजातंत्रीय शासन प्रणाली है जो प्रायः जन-समर्थन पर टिकी रहती है। सरकार का यह प्रयास रहता है कि वह जन-कल्याणकारी योजनाएँ बनाएँ, जनहित में उन्हें लागू करे और जनता को यह आभास कराए कि उसका प्रयास जनकल्याण है। इसके लिए सरकार अपनी नीतियों एवं योजनाओं का प्रचार-प्रसार कर उन्हें लागू करने में जनता का सहयोग एवं समर्थन चाहती है। जनता और सरकार के बीच सहयोग की यह प्रक्रिया भाषा द्वारा अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त करती है जिसमें हिंदी की भूमिका अतुलनीय है और हमेशा रहेगी।

हिंदी ने भारत की विभिन्न भाषाओं एवं शब्दावली से शब्द ग्रहण कर स्वयं को इतना सशक्त एवं समृद्ध बना लिया है कि वह किसी भी क्षेत्र में हो स्वयं को प्रथम पाती है। इसमें संस्कृत, अरबी, फारसी, तुर्की, उर्दू, अंग्रेज़ी आदि के शब्दों की संपन्नता है। इस कारण यह अधिक जन-संपर्कीय और संप्रेषणीय है। इसीलिए भारतीय चुनावों में विभिन्न पार्टियाँ जनता का मन मोहने के लिए हिंदी के शुद्ध-विशुद्ध रूप का प्रयोग करती हैं और आगे भी इसी प्रकार करती रहेंगी।

भारतीय चुनाव प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार के आयामों का प्रयोग चुनाव के दौरान विभिन्न पार्टियों खूब करती हैं जिसमें वह अनेक प्रकार की कल्याणकारी, जन-हितैषी योजनाओं को जनता के सामने उजागर करती हैं। इस प्रकार की योजनाएँ मुख्यतः शिक्षा, स्वास्थ्य, रोज़गार, बीमा आदि से जुड़ी होती हैं। इन सबके बीच यदि सरकार को ऐसा लगता है कि जनता वश में नहीं आ पा रही है तो वह जनसंपर्क के लिए अति प्रचलित प्राचीन युक्ति का प्रयोग करती है --

''जहाँ काम चलता नहीं था, तीर-ओ-कमान से।
नटवर की विजय होती थी, मुरली की मीठी तान से।।''

अर्थात् संसार में जहाँ सारे सिद्धांत असफल हो जाते हैं, वहाँ मनाने की प्रथा काम आती है। घर-परिवार, समाज, देश-विदेश के बिगड़े हुए रिश्ते मान-मनोबल से सुधारे जाते हैं, तो समाज से जुड़ी भोली जनता को तो इस वशीकरण मंत्र से अवश्य ही वश में किया जा सकता है। इसी प्रभावी मंत्र का प्रयोग पार्टियाँ चुनाव के दौरान मीठे-मीठे बोल बोलकर करती हैं। इसमें उनका कारगर साथ देने वाला विशेष तत्त्व हिंदी होती है।

प्रायः ऐसा देखा गया है कि यदि किसी को मोहना है तो 'उसका दिमाग़ नहीं दिल बदलना दो'। चुनावों में प्रायः विभिन्न पार्टियों के प्रत्याशियों और नेताओं द्वारा भाषण ऐसा ही किया जाता है। भाषण विचारों और भावों के संप्रेषण का अत्यंत प्राचीन और सशक्त माध्यम हैं। आज हर महत्त्वपूर्ण कार्य की शुरुआत भाषणों से ही होती है। भाषण द्वारा श्रोताओं को प्रभावित करना संचार के साधनों में श्रेष्ठ कला है जिसका जीवंत उदाहरण मोदी जी हैं। आज का युवा वर्ग कहीं भी हो पर मोदी के भाषण सुनने के लिए आतुर रहता है। यह कमाल मोदी का नहीं अपितु उनके द्वारा प्रयोग की भाषा और भाषा-शैली का है। सामान्यतः वक़्ता अपने भाषणों के द्वारा पुराने मूल्यों का खंडन करता है या फिर प्रचलित प्रवृत्तियों पर बल देता है या उस पर प्रहार करता है या उसके स्थान पर नए मूल्यों के आग़ाज़ की बात करता है। भाषण में मुख्यतः तीन तथ्यों का सम्मिश्रण होता है, पहला वक़्ता, दूसरा भाषण का विषय और अंतिम जनता। इन तीनों की अपनी-अपनी सीमाएँ और मर्यादाएँ होती है। इन तीनों में सामंजस्य स्थापित करना विशेष महत्त्वपूर्ण होता है। वक़्ता अपने विचारों, सिद्धातों और कल्पनाओं को श्रोताओं

तक इन्हीं से पहुँचाता है।

ई.एम. रोजर एवं शूमकर के अनुसार, ''संचार वह प्रक्रिया है, जिसमें स्त्रोत एवं श्रोता के मध्य सूचना संप्रेषण होता है। इस प्रकार संचार विचारों के आदान-प्रदान से संबद्ध है।''

एडविन एमरी, फिलिप एच. आल्ट एवं एगी ने कहा है -- ''सूचना विचारों और अभिव्यक्तियों को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक संप्रेषित करने की कला का नाम संचार है।'' इसी प्रभावी संचार का प्रयोग चुनावों के दौरान भारतीय नेताओं द्वारा किया जाता है। आमतौर पर यह देखा गया है कि अच्छा भाषण किसी को भी मोहने की शक्ति रखता है यही कारण है कि आज के राजनेता अपने भाषणों में लोकहित, लोक-कल्याण की चर्चा करते हैं तथा वह एक ऐसे वर्ग को केंद्र में रखकर कार्य करने की बात कहते हैं जिसे वास्तव में उस कल्याण की आवश्यकता होती है चाहे वास्तविकता बिल्कुल इसके विपरीत हो।

भारत में जब भी चुनाव का दौर आरंभ होता है तो उसके समानांतर विभिन्न प्रकार की गतिविधियाँ भी घटित होने लगती हैं जिसके कारण कभी दंगे होते हैं तो कभी विरोध प्रदर्शन यहाँ तक विभिन्न पार्टियों के राजनेता स्वयं को श्रेष्ठ ठहराने के लिए सटीक से सटीक और सरल से सरल भाषा का प्रयोग करते हैं। उनके वक्तव्यों में स्पष्ट समाज-कल्याण की झलक जनता के सामने स्पष्ट हो जाती है। जनता को ऐसा प्रतीत होता है। जैसे यही वह मसीहा है जो हमारी नाव को भव से पार लगा सकता है। इस प्रकार के अधिकांश प्रलोभन कार्य हिंदी में ही किए जाते हैं चाहे वह विज्ञापन हो यो फिर चुनाव का प्रचार।

डॉ. इंदु बाली ने भाषण और वक्तव्य के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए ठीक ही कहा है -- ''मानवीय इतिहास इस तथ्य से भरा पड़ा है कि जब भी इतिहास कोई परिवर्तन या नाटकीय मोड़ लेता है तो इसके मूल में कोई न कोई सशक्त भाषण होता है। यूनान रोमन साम्राज्य के दिनों से लेकर आज तक यही सत्य प्रमाणित है। शस्त्र एवं शास्त्र-शक्ति की वजह लोग भाषण-शक्ति के द्वारा अधिक सफलता पाते देखे गए हैं।'' इतना ही नहीं उन्होंने भाषण-कला की डॉक्टर की औषधि से सटीक तुलना करते हुए कहा है कि राजनेता जनता की नाड़ी अपने हाथ में लेकर उसकी सोच को अपने अनुकूल मोड़ देता है।

भारत के चुनावों में राजनेता अपने पक्ष को सबल करने के लिए चुनावी प्रचार-प्रसार के लिए हिंदी का प्रयोग करते हैं। उनके द्वारा भोली जनता को मोहने के लिए सरल, स्पष्ट, सपाट लुभावनी मुहावरेदार हिंदी का प्रयोग किया जाता है। उनके वक्तव्यों में शेर-ओ-शायरी, कविता, कहावतों और चुटकुलों आदि का प्रयोग एक और भाषा (हिंदी) का नया रूप सामने ला रही है तो दूसरी ओर जनता में विनोदपूर्णता उत्पन्न करती है। जिसके कारण जनता के हृदय पर उसकी अमिट छाप रह जाती है। यह छाप भी हिंदी के कारण ही अमिट होती है।

जनमत निर्धारण की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले अनेक तत्त्व होते हैं। इस प्रकार के तत्त्वों में किसी विशेष वर्ग की शिक्षा, संस्कृति एवं जीवन के प्रति दृष्टिकोण आदि शमिल होते हैं। किंतु कभी-कभी इनसे भी अधिक प्रभावित करने वाले दबाब समूह होते हैं। जो किसी समूह या समूह के लोगों पर सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक स्तर पर उन्हें सक्रिय या निष्क्रिय बनाने में सदैव क्रियाशील बने रहते हैं तथा समय-समय पर विचारधारा को इस स्तर तक प्रभावित करते हैं कि उसे अपनी इच्छानुसार कार्य नहीं करने देते। इस प्रकार वह व्यक्ति समूह के निकट पहुँचता है और इसी तरह अनेक व्यक्ति आगे चल कर जनमत का निर्धारण करते है। जनमत पर ही लोकतंत्रीय सरकार टिकी होती है। जब तक जनमत सरकार के पक्ष में होता है, तब तक विशेष राजनीतिक पार्टी की सरकार सत्तासीन रहती है, किंतु जैसे ही जनमत उनका साथ छोड़ देता है, उस पार्टी की सरकार भी गिर जाती है और दोबारा मतदान के द्वारा सरकार गठन की प्रक्रिया आंरभ हो जाती है।

निष्कर्षतः यह कहना अर्थपूर्ण होगा कि भारत में राजनैतिक पार्टियाँ अपने लाभानुकूल जनता का मन मोहने का भरसक प्रयास करती है। इस प्रयास को साकार करने में हिंदी उनका पूर्ण सहयोग करती है। किंतु हाँ; इतना सब होने के बाद भी हिंदी दिन-प्रतिदिन राजनैतिक स्वरूप में कभी विकृत तो कभी समृद्ध हो रही है। यह किसी-न-किसी रूप में संपूर्ण भारतवर्ष में घटित होने वाले चुनावों का ऐसा सशक्त माध्यम है। जिसके बल पर राजनेता सीधे ही जनता के हृदय परिवर्तन का कार्य सफलतापूर्वक कर लेते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत के चुनावों में हिंदी की प्रभावी ही नहीं अपितु अमूल्य भूमिका है। जो भारतीय चुनावों की प्राण तत्त्व है और रहेगी।

❑

संदर्भ

1. आधुनिक जनसंचार और हिंदी, हरिमोहन (प्रो.) तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, 2000
2. जनसंचार माध्यमों में हिंदी, चंद्र कुमार (डॉ.), क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली, 2000
3. भाषा की भूमिका, (शर्मा) आचार्य देवेंद्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1966
4. लोकसंपर्क, राजेंद्र, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़, 1995
5. जनसंपर्क : स्वरूप और सिद्धांत, राजेंद्र (डॉ.), संजय प्रकाशन, दिल्ली, 2007
6. स्वतंत्र भारत में राजनीति, एन.सी.ई.आर.टी, दिल्ली पाठ्यपुस्तक ब्यूरो, नौएडा, 2015

डॉ. उषा देव

भाग्य-विधाता

चेतन विधायक ओम प्रकाश का इकलौता पुत्र है। आँख खुलते ही उसने घर के बाहर तीन बड़ी-बड़ी कारें खड़ी देखी हैं। सुबह से शाम तक 'स्वतंत्र पार्टी' (काल्पनिक नाम) के ही नहीं; अन्य कई प्रकार के काम निकालने वालों का ताँता लगा रहता है। पहले तो चेतन का दाख़िला एक नामी-गिरामी स्कूल 'सुसंस्कृति' (काल्पनिक) में हो जाना कोई अचरज की बात नहीं थी। ये स्कूल डोनेशन के नाम पर कितने रुपए बिना रसीद दिए लेते हैं--इसका यदि वे हिसाब-किताब नहीं रखते या फिर रख नहीं पाते--तो इस मुद्दे को हम (साधारणजन) अपनी सिरदर्द न बनाएँ तो ही श्रेयस्कर है।

हाँ, तो स्कूल के कमरे ही नहीं; बस भी वातानुकूलित है। पर चेतन की मम्मी मँजरी की एक ही ज़िद्द थी कि चेतन को अपना ड्राइवर वातानुकूलित कार में स्कूल छोड़कर आएगा ही नहीं वरन् दोपहर को दूसरे रंग की कार में वापिस लाएगा। ओम प्रकाश स्वयं सरकारी स्कूल तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के पत्राचार (ओपन लर्निंग) से तृतीय श्रेणी पाकर पार्टी मुख्यालय में उठता-बैठता था और कई एक जंतर-मंतर एवं विपक्षी पार्टियों के विरोध में हुए धरनों में बुलंद आवाज़ के नारे लगाता रहा। धीरे-धीरे पार्टी का कार्यकर्ता बन गया। जीवन में कुछ पाने की तीव्र ललक के चलते पार्टी के करणीय एवं अकरणीय कामों को गुप-चुप कर उठा। सो, इस अथक परिश्रम का परिणाम यह हुआ कि 15-16 साल में विधायक पद को पाने में सफल हो गया और वह भी आरक्षित स्थान पर।

मँजरी भी बतौर कार्यकर्ता उस पार्टी के मुख्यालय में आती-जाती थी। कॉलेज में पढ़ती थी और ज़रा ज़्यादा महत्त्वाकाँक्षी थी। दोस्ती तो कई कार्यकर्ताओं से हुई और अंत में ओम प्रकाश के जीवन-दर्शन से सहमति के चलते शादी कर ली। जानती थी कि माँ-बाप इस संबंध को स्वीकार नहीं करेंगे पर अपने भविष्य की चिंता विशेष थी।

सोचती थी कि जाति-पाँति में क्या रखा है? दो क़िस्म के प्राणी हैं -- नर और मादा। तीसरा भी है (किन्नर) -- पर उससे कई अपेक्षाएँ पूर्ण न हो पाएँगी--अतः इन दो प्रकार के जननेंद्रियों वालों ने उसको मुख्यधारा से छिटका कर अलग कर दिया है।

विधायक बनते ही ओम की बाँछें खिल ही गईं। क्षेत्र के पुलिसकर्मियों, बिल्डर्स, दुकानदारों का ही नहीं, शराब और नशीली चीज़ों आदि के कारोबारियों आदि को भी आए दिन उससे वास्ता पड़ता ही था। सो, कमाई के असंख्य साधन बन गए थे।

मँजरी को समझ न थी कि जो व्यक्ति सरलता से विवाह-पूर्व उससे शारीरिक संबंध बना सकता है और पार्टी के ग़लत आदेशों को सिर माथे पर रखकर क़दम-ब-क़दम आगे बढ़ने का मक़सद भी रखे हुए है वह भविष्य में कुछ विशेष कर गुज़रने का कलेज़ा भी रखता होगा। दूसरी बार की विधायकी मिलने के बाद दो-तीन वर्षों में दिल्ली, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश में आलीशान कोठियाँ बन गई थीं जो डिज़ाइनर फर्नीचर, पर्दे इत्यादि से लैस थीं। तीन-चार गाड़ियाँ निवास-स्थान के बाहर हर वक़्त खड़ी रहतीं।

स्वयं मँजरी नौकरी योग्य न्यूनतम विशेषता हासिल न किए थी। वैसे नौकरी में रखा ही क्या है? ईमानदारी से की जाने वाली नौकरी केवल परिवार को अदना छत, साधारण खान-पान ही तो दे पाती है! दूसरे घर में कोई किसी प्रकार की कमी भी तो न थी। बैंक खाते कहीं ओम तथा कहीं उसके नाम थे। हाँ, अब कहाँ फार्म-हाउस ख़रीदा गया है या फिर कहाँ ज़मीन ख़रीदी गई--न ओम हिसाब दे रहा था; न ही उसकी इस पचड़ों में पड़ने की तबियत ही रह गई थी। कारण, उसे ओम के प्यार पर पूरा-पूरा भरोसा था। घर में अन्य किसी प्रकार की असुविधा भी तो न थी। यह नहीं सोचा था कि यदि पाँचों उँगलियाँ घी में हैं; तो सिर भी कभी कड़ाही में हो सकता है।

जब ओम को सांसद पद के लिए टिकट मिल गया तो दौड़-धूप तेज़ करनी ज़रूरी थी। द्वार पर पार्टी के कार्यकर्ताओं, बेरोजगारों, मनचले नौजवानों एवं युवतियों की भीड़-सी लगी रहती थी। किसी को पोस्टर बनवाने का ठेका दिया जा रहा था तो किसी को गली-गली, मुहल्ले-मुहल्ले में नारेबाज़ी का। सब कार्यकर्ताओं के लिए पास के भोजनालय से चाय, समोसा, ब्रैड पकौड़ा, कुलचे-छोले आदि थोड़े-थोड़े अंतराल में आते ही रहते थे। मँजरी को इन बैठकों में कभी-कभार ही आने को कहा था। ओम ने प्यार भरे लहज़े में कहा था, ''तुम्हें दौड़-भाग नहीं करनी। महारानी हो। कभी बहुत मन हो तो आ जाना।'' उसके लिए पति परमेश्वर था। आख़िर दिलो-दिमाग़ की निचली परत पर अभी भी भारतीय नारी के न्यूनतम आदर्श चिह्नित थे।

मँजरी का ज़्यादा समय टी.वी. के सामने बैठे-बैठे या फिर मॉलस् में शॉपिंग करने

वगैरहा में गुज़रता था। चेतन के लिए आया, नौकर, ड्राईवर ही नहीं, ट्यूटर्स भी ठीक-ठीक काम करने के लिए तैनात रहते थे।

सभी कार्यकर्ता शाम को कार्यालय (किराए पर एक मंज़िला कोठी ली हुई थी) में मीटिंग करते। ओम स्वयं उस समय उपस्थित रहना अपना धर्म मानता था। हर कार्यकर्ता एवं कर्त्री ख़ुशी-ख़ुशी से उस-उस दिन की गई अपनी भाग-दौड़ का बढ़-चढ़ कर वर्णन करते और साथ ही दूसरे दिन के कार्यक्रम की रूप-रेखा बताते। ओम जी कहते, ''बस सांसद बन जाऊँ तो आप सबको क़ाबिलीयत से भी बढ़-चढ़कर नौकरी या धंधे पर लगा या लगवा दूँगा।'' कहो, ऐसा पुख़्ता आश्वासन किसमें जोश नहीं भरेगा?

जैसे-जैसे चुनाव की तिथि समीप आ रही थी वैसे-ही-वैसे ये मीटिंग्स् ब्लॉक के वेलफेयर सेक्रेटरी के यहाँ उपयुक्त शामियाना लगाकर की जाने लगीं। अब जल-पान के साथ-साथ काजू बर्फ़ी, ख़स्ता कचौरियाँ, नमकीन आदि भी परोसा जाने लगा। वास्तव में यह ख़र्चा क्या ओम का हो रहा था? नहीं उस-उस इलाके के दुकानदार, ठेकेदार, व्यापारी लोग करने में अपना सौभाग्य मान रहे थे। चढ़ते सूरज को सदैव नमन होता रहा है।

दिनोंदिन ओम के विधायक रूप में किए गए कार्यों की सूची लंबी होती जा रही थी। उसकी पार्टी में ऐसे-ऐसे चहुर्मुखी प्रतिभाशाली व्यक्ति भी जुड़ गए थे जो लेखन, भाव-अभिव्यक्ति आदि में माहिर थे। वे स्कूल-कॉलेज या अन्य कई प्रकार के विभागों की परीक्षाओं में उत्तीर्ण न हो पाए तो क्या? वे कई एक कलाओं के धनी थे जैसे--पोस्टर के लिए नए-नए डिज़ाइन बनाना, तुकबंदी से बातों को प्रस्तुत करना व अच्छा भाषण तैयार करना इत्यादि।

इधर, ओम जी उनका ही नहीं वरन् उनके परिवार-जनों का पूरा-पूरा ध्यान रखते। खाना-पीना, ज़ेब ख़र्च और नए-नए परिधानों को भी भेंट करते। ग़लती से किसी की माताश्री या पिताश्री ने तीर्थयात्रा की इच्छा व्यक्त कर दी तो स्वयं ही टिकट, होटल आदि का रिज़र्वेशन ही नहीं; वहाँ प्रसाद के लिए अपनी ओर से पर्याप्त धन-राशि दे देते थे। आख़िर विधायक के रूप में बटोरा गया अनाप-शनाप धन सांसद रूप में सफलता पाने के काम न आएगा तो क्या फ़ायदा?

लोक सभा चुनाव में मात्र दो महीने रह गए थे। भाग-दौड़ रफ़्तार पकड़ती जा रही थी। मीडिया भी पीछे क्यों रह जाता? हर बात की सूचना मोबाइल पर दी जा रही थी। प्रत्येक विचारवान् व्यक्ति का रुझान किसी-न-किसी पार्टी की विचारधारा की ओर होता ही है। साथ ही, अपने क्षेत्र का व्यक्ति यदि सांसद बन जाए तो क्षेत्रवासियों की भी बन आती है। स्वार्थ-सिद्धि कार्यप्रणाली का आधार रहा है, है, और रहेगा भी।

नहीं तो कर्ण (कुंती पुत्र) दुर्योधन की मित्रता कई एक अवसरों पर छोड़ भी सकता था।

मज़े की बत तो यह थी कि प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के हरकारों को इन मीटिंग्स् की सूचना गुपचुप दी जाती थी। सो, चुनाव में किस पार्टी के किस उम्मीदवार की जीत की आशा कितने प्रतिशत है -- आदि का ब्यौरा प्राइवेट टी.वी. चैनल्स् वाले बड़े उत्साह से प्रसारित करते। कोई माई का लाल यह पता करवाने में आज भी समर्थ नहीं है कि चुनाव में उम्मीदवार अपनी ज़ेब से कितना ख़र्च करता है और पार्टी कितना?'' भ्रष्टाचार हो रहा है--कहकर एक-दूसरी पार्टी पर कीचड़ उछालती फिर रही हैं। बस जनता ईमानदार रहे--नारा ज़ोरों-शोरों से लगाया जाता है। ओम के घर क्या; मुहल्ले में कार खड़ी करनी भी मुमकिन न थी। कार्यकर्त्ताओं, लाभांश पाने की लालसा वाले अपनी लंबी-चौड़ी कारों से मुहल्ले की शोभा में चार-चाँद लगा रहे थे। वास्तव में, इस मजमे में कुछ जन तो पार्टी के वफ़ादार थे ही; तो उनमें से काफ़ी अपनी छवि बनाने की तमन्ना रखे थे।

अब मुहल्लों में जन-संपर्क के नाम पर प्रति सप्ताह मीटिंग्स होने लगीं। लच्छेदार वक्तव्य ही नहीं निकट भविष्य में सुंदर सुनहली योजनाओं की रूप-रेखाओं को प्रस्तुत किया जाता। घर-घर में बस ''ओम प्रकाश ही हमारे अमूल्य वोट का हक़दार है'', कहा जाने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि साधारण-जन, 'अन्य किसी को वोट दूँगा, तो व्यर्थ जाएगा'--ऐसा सोच अपने मन में 'ओम' के नाम का ही जाप करने लगा।

पता नहीं, देशवासियों का 63-64 साल का अनुभव कब काम आएगा? क्या वायदे पूर्व लोक सभा सांसदों ने नहीं किए थे? या फिर नगर निगम पार्षदों ने न किए? क्या प्रत्येक प्रदेश की जनता की उम्मीदें इन लोगों से पूरी तो नहीं; कुछ सब्र करने की हद तक हो पाई हैं? वह समय ज़रूर आएगा जब जनता इन सब कामों की विस्तृत जानकारी हासिल करने को आमादा हो जाएगी। चहुँःदिश अराजकता का आलम होगा। तब ये मुखिया बने बड़े कहे जाने वाले पदस्थ लोग धन के बल पर विदेशों में भाग उठेंगे।

मँजरी तो आश्वस्त एवं बेख़बर थी। वह तो साधारण नारी की नाईं कपड़े, साज-शृंगार (हीरों की अँगूठियाँ, कंगन, गले के सैट, नित बढ़ता बैंक बैलेंस, कोठियाँ, फार्म हाउस इत्यादि-इत्यादि) एवं अन्य कई प्रकार की विलासिता में आकंठ डूबी हुई मदहोश-सी जीवन का लुत्फ़ उठा रही थी। प्रकृति का नियम है कि जो-जो मनोऽनुकूल चीज़ें होती हैं हम उन्हें अपना अधिकार मानते हैं। संतुष्टि का बिंदु दूर और दूर होता जाता है।

पब्लिक फ़िगर बने व्यक्ति के लिए 'संयम' शब्द एवं अर्थ विष-तुल्य हो जाता

है। प्रारंभ में स्वार्थवश उठाए गए ग़लत फैसले फिर स्वभाव का अंग कब बन जाते हैं--पता ही नहीं चलता। प्रभुता, धन-संपन्नता रूपी सीढ़ी का अगला पाया ऐंद्रिय-लोलुपता या संतुष्टि हुआ करता है (अपवादों के लिए इस क्रम में गुंजाइश ज़रूर है)। देखने एवं अनुभव में यही तथ्य सामने आता है कि दृढ़-निश्चयी भी कुसंगति की तरंगों में डूबे या न डूबे; पर गीला अवश्य हो जाया करता है। मन की आँखें रूप-बोध कराने वाली इन आँखों से पहले ही बंद हो जाती हैं।

मोहिनी नामक युवती कार्यकत्ताओं के इस समूह में अगुआ पद पर जा पहुँची (रूप, भाव-प्रकाशन में दक्ष, नए-नए ढंग से पार्टी को आगे बढ़ाने की योजनाओं की प्रस्तुति आदि विशेषताओं के कारण) थी। वह प्रतिदिन स्वयं द्वारा किए गए कार्यों की, उनके प्रभाव की, भावी येाजनाओं आदि की रूपरेखा ओम जी को देना अपना कर्त्तव्य मानती थी। इधर ओम भी उसके प्रत्येक काम की दाद दे उठते थे। पार्टी कार्यालय में कार्यकर्ताओं की उपस्थिति में दोनों कभी तो आमने-सामने तो कभी पास-पास की कुर्सियों पर बैठकर चाय-नाश्ता लेते। मोहिनी बीच-बीच में आज कहाँ किससे उसने क्या कहा बताती जाती। ओम प्रशंसात्मक शब्दावलियों में 'बहुत ख़ूब--बहुत ख़ूब' कहता और कह उठता, ''मोहिनी जी, आप समाजशास्त्र में एम.ए. किए हुए हैं। नैट क्लीयर नहीं हुआ, पी-एच.डी. में दाख़िला नहीं मिला तो क्या हुआ; सच में ही समाज के किस व्यक्ति को कैसे समझाना है--इसमें मेरा वश चले तो आपको डि-लिट् की उपाधि दे देता। ये यूनिवर्सिटियाँ क्या घास खाकर आप जैसों की क़ाबिलीयत जान सकती हैं। बस, सांसद बन जाऊँ--एक एन.जी.ओ. बना उसका सर्वेसर्वा आपको बना दूँगा। और यदि दो तीन बार इस पद पर प्रतिष्ठित रहा तो नोबेल पुरस्कार न दिलवा दिया तो मेरा नाम बदल देना।''

मोहिनी पर इन शब्दों का पूरा-पूरा जादू चढ़ता गया। वह स्वयं को भावी-स्वप्नों में ही डूबा लेती। ज़रा और उत्साहित हो उत्तरोत्तर इस क्षेत्र में बढ़ती गई। इधर जब ओम उससे मिलते तो मुस्कुराते एवं बढ़ कर अगवानी का भाव रोम-रोम से व्यक्त कर उठते। अन्य मुख्य-मुख्य कार्यकर्ताओं को उनकी दिनोंदिन बढ़ती समीपता का आभास हो तो रहा था; पर सब दम साधे अपनी-अपनी स्वार्थपूर्ति को मद्देनज़र रखे थे और इस मैत्री को स्वाभाविक मानने के लिए विवश-से थे। शायद पुरुष के इस ओर बढ़ते क़दम को लगाम पत्नी नामक प्राणी ही लगा सकने में कुछ सीमा तक सफल हो सकती है; और कई क्या अधिकतर स्थितियों में नहीं भी। वैसे तो मँजरी ओम के आदेशानुसार दस-पाँच दिन बाद ही घंटे-आध-घंटे के लिए पार्टी-कार्यालय में आती थी। उसे तो सब ठीक-ठाक व्यवस्थित ढंग से होता दिखाई देता था। वह भी तो दिवा-स्वप्नों में खोई-सी थी। ओम सांसद बन जाए--यही उसकी हार्दिक तमन्ना थी।

अटल सच है कि नर-नारी का सबंध ही--अग्नि के सरीखा है। दोनों पक्षों का अपनी-अपनी सीमाओं में रहना (मानासिक एवं कायिक, वाचिक) ही प्रत्येक के लिए कल्याणकारक होता है। शास्त्र (मनु-स्मृति, 2.213-15) के कथन का सार इतना मात्र है कि बलवान् इंद्रिय-समूह विद्वान् (नर/नारी) को भी अपने वश में कर लेता है। कहने को कहते आए हैं और आज भी कह उठते हैं कि पर-पुरुष या स्त्री के प्रति पिता/भाई और माता/बहिन का क्रमशः भाव होना चाहिए। पर जब 'चाहिए' शब्द कहते हैं तो 'ऐसी उम्मीद करते हैं'--की आशा अभिव्यक्त ही होती है। वास्तव में, अन्य वाँछित बातों की तरह इसका पूर्णतः पालन मानव-समाज में नहीं होता। कारण, मन तो चंचल है। जोख़िम उठाना कई नर/नारी का स्वभाव/मज़बूरी बन जाता है। इस विषय में जाति-पाँति, अमीर-ग़रीब तक सवाल नहीं रह जाता।

मतदाताओं ने ओम के प्रति अपनी वफ़ादारी दिखा दी। वह निर्वाचित हो गया। उसका मन-कमल पूर्णतः खिल गया। साथ ही, कार्यकर्ताओं की भागदौड़ भी सफलीभूत हो गई। इलाके के लोग उत्साहित हो ढोल-ढमाक्कों को साथ लेकर ओम की कोठी के बाहर आ पहुँचे। आतिशबाज़ी, नाच-गाने होने लगे। नर-नारी एक-दूसरे को बधाई देते हुए मुँह पर गुलाल लगाने लगे। बहुत से कार्यकर्ता फूलों की मालाएँ ले उपस्थित हुए। वयोवृद्धों को थमाते जाते और वे उत्साहित हो ओम जी के गले में डालते जाते। साथ-साथ चल रहे मुख्य कार्यकर्ता और बंधु-जन जब देखते कि मुस्कुराते एवं विनम्रता की प्रतिमूर्ति बने ओम जी के गले की मालाओं का भार बढ़ गया है तो ज़रा झुक कर एक माला के अतिरिक्त अन्य मालाओं को आहिस्ता-आहिस्ता एक-एक कर उतारते और अपनी कलाई पर रख लेते। बड़े-बड़े थालों में गुलाब की पंखुरियाँ भी आ गई थीं। सब बारी-बारी उन्हें अपनी-अपनी मुट्ठियों में भर-भर कर ओम जी पर बरसा रहे थे। पौराणिक कथाओं में वर्णित वे-वे दृश्य--जहाँ देवताओं द्वारा फूलों की वर्षा किए जाना कहा जाता है; आज सजीव हो उठे।

मँजरी और चेतन इस विजयोत्सव में पीछे क्योंकर रहते? औरतें मँजरी को मुबारक देने के लिए उतावली-सी हो रही थीं। पति की सफलता में उसका गौरवान्वित होना स्वाभाविक ही था। चेतन तो कभी भाग कर ढोल की ताल पर नाच रहे लोगों में जा सम्मिलित होता; तो कभी गुलाल लेकर हम उम्र लड़के-लड़कियों के चेहरे पर लगाता। न जाने कितने लड्डुओं के डिब्बे नामी-गिरामी स्वीट-हाउस से लाए गए थे। सबसे पहले स्वयं ओम जी अपने हाथों से लोगों को खिला उठे। फिर यह कार्य स्वयं उपस्थित-जन स्वयं ही करने लगे। मँजरी हरेक को हाथ जोड़कर धन्यवाद ही नहीं दे रही थी; वरन् इस विजय का श्रेय भी उन्हें दे रही थी।

दो-तीन घंटे इस विजयोल्लास में बीत गए। ''अब थोड़ा विश्राम करना चाहूँगा'', कह ओम जी घर की ओर अभिमुख हुए। जनता-जनार्दन का जोश बरकरार था। कार्यकर्ताओं के अग्रणी अनिरुद्ध ने घोषणा की कि रात्रि-भोज उनकी ओर से दिया जा रहा है। ''आप सब सपरिवार आकर हमें कृतार्थ करें।''

आश्चर्य! वे जन जो पिछले छः महीने से ओम जी से मेहताना पा रहे थे--वे ही रात्रि भोज; नहीं-नहीं प्रीति-भोज का ख़र्चा उठा रहे हैं--ऐसा इंगित कर रहे थे।

उससे भी अधिक आश्चर्य तो इस बात पर हो उठता है कि बीसवीं शताब्दी के पाँच-छः दशक से लेकर आज इक्कीसवीं का दूसरा दशक व्यतीत होने को है--पर सब छोटे-से बड़े स्वार्थ पूर्ति को ही मद्देनज़र रखकर चल रहे हैं। कौन बिल्ली के गले में घंटी बाँधे?

कोई माई का लाल है जो नगर निगम पार्षद, प्रदेश राज्य सरकार, विधायक या फिर संसद सभा के नुमाइंदों का चुनाव लड़ने की प्रक्रिया में उन-उन का क्या ख़र्च हुआ--इसका हिसाब माँगे? या फिर पार्टियों को कहाँ-कहाँ से धनराशि प्राप्त हुई--पता लगाएँ? हाँ, ख़र्च क्या हुआ या हो रहा हे इसकी चिंता चुनाव लड़ने वालों को क़तई नहीं होती। सच में, हिसाब तो व्यक्ति तब रखता है जब उसकी श्रम-साध्य पूँजी ख़र्च होती है।

हाँ, देश-रक्षक बनने के लंबे-चौड़े वायदे--जनता में उम्मीद ज़रूर जगा देते हैं। पर जनता तो रोटी, कपड़ा और मकान--इन आधारभूत, जीवन-यापन रूप न्यूनतम साधनों को जुटाने में रत हो जाती है। यह नहीं कि आज जनता जागरूक नहीं हुई है वरन् कई एक प्रकार की विवशताओं से त्रस्त है। और जिस दिन वह वास्तव में ही इन सब उलझनों को झटक कर उठ खड़ी हुई तो पिछली सदी से आज तक के इन बड़े कहे जाने वालों (उद्योगपतियों, राजनेताओं, मंत्रियों, पुलिसकर्मियों, न्यायाधीशों, सेनाध्यक्षों आदि-आदि) के घोटालों, कुकर्मों, धन-संपत्ति आदि का लेखा-जोखा माँगेगी ही नहीं; स्वयं सज़ा देने के लिए आमादा हो जाएगी। पर, ऐसी हालत में गेहूँ के साथ घुन पिस जाएगा और होगा बहुत बड़ा विनाश। इन सब बातों का इतिहास ही नहीं; आज संसार के कई एक देशों में हो रही उथल-पुथल भी गवाह है। हे ईश्वर, हे परमपिता परमेश्वर, हे अदृश्य सर्वोच्च शक्ति अपनी इस संतान-मानव को बुद्धि, ज्ञान और विवेक प्रदान करो।

ओम जी कार की पिछली सीट पर जा बैठे थे। शरीर आराम की मुद्रा में था; पर दिमाग़ में घोड़े सरपट भाग रहे थे। ठीक है एक तमन्ना पूरी हो गई थी। अब अगली इच्छा जागृत भी होनी ही स्वाभाविक थी। अब मन ही मन एक योजना बन

गई। ''पार्टी मुखिया से किन शब्दों से क्या-क्या कहा जाए कि वे किसी महत्त्वपूर्ण विभाग का मंत्री-पद मुझे दे दें''--सोच जारी थी। नाटकीयता का पूरा-पूरा ख़ाका तैयार कर लिया गया था। ''हाँ, चलो मंत्री न भी बनूँ तो भी करोड़ों के वारे-न्यारे हैं ही। सांसद को मिलने वाला वेतन, भत्ता, बड़ा-सा बंगला, नौकरों की ही नहीं, अंगरक्षकों की फ़ौज भी बहुत बड़ी उपलब्धि है।''

मोहिनी का ध्यान हो आया था।

''अरे, आज वह कितनी प्यारी लग रही थी। पर लोगों और विशेषकर मँजरी के सामने मैं उसे विशेष धन्यवाद के शब्द भी न कह पाया। कार में उसका नंबर मिलाना और उससे बात करना उचित नहीं। ये ड्राइवर लोग कार चलाते हुए आगे देख ज़रूर रहे होते हैं; पर इनके कान पीछे लगे होते हैं। इस पद पर पहुँच कर सावधानी बरतना परमावश्यक है। क्या हम (सांसद, विधायक इत्यादि) मानव-मन नहीं रखते? हमें किसी से लगाव या प्यार हो जाता है--तो क्या यह अपराध है? ठीक है पत्नी है, बेटा है। पर जो दिलो-दिमाग़ को सुकून, ठंडक मोहिनी से मिलती है--उसका तो कोई जवाब नहीं। चलो, कार से उतर कर मोबाइल पर चंद शब्द कह उसके और अपने मन को राहत दे लूँगा।''

''सर, मुख्यालय का गेट आ गया है। क्या गाड़ी अंदर पार्क कर लूँ?''

गेट-कीपर ने सलाम करते हुए गेट को खोल दिया। कार रोकते ही ड्राइवर ने फुर्ती से निक़ल कर कार के पीछे का दरवाज़ा खोला। ओम जी ने बाहर निक़लते हुए कहा, ''कार में ही बैठना।'' बस 15-20 मिनट बाद ही वापिस जाना है।

लॉन पार करते हुए मोहिनी से संक्षिप्त बात की'', मोहिनी सॉरी, आज उस भीड़-भाड़ में मैं तुमसे कुछ बात न कर सका।''

''हाँ, में आपकी स्थिति को पूरी तरह समझती हूँ। मैंने भी तो अपने तन, मन को बड़ी कठिनाई से काबू किया था।''

''मैं पार्टी-प्रधान से मिलने आया हूँ। फिर समय मिलने पर बात करूँगा। इस जीत का जश्न दोनों मिलकर किसी ख़ास जगह मनाएँगे।''

''ठीक है--ठीक है।''

पार्टी-प्रधान संजय जी के पास अन्य कई नए-पुराने सांसद पहले से ही विराजमान थे। सब उत्साहित एवं बढ़-चढ़ कर अपनी ही नहीं; पार्टी के द्वारा किए गए प्रयासों की भूरि-भूरि (सच्ची-झूठी) तारीफ़ कर रहे थे। आधा घंटा व्यतीत हो गया था; पर ओम जी को तो बात करने का सुअवसर चंद सैकेंड ही मिल पाया था। मन-ही-मन सोच उठे, ''यहाँ तो ये मुँह लगे लोग अपनी ही अपनी हाँक रहे हैं। आज मेरी तिकड़म

न चल पाएगी। पार्टी-प्रधान ऐसे ही तो नहीं बनाए गए। ये भी घुटे हुए जन हैं। उधर रात्रि भोज भी आज ही रख दिया है। वहाँ मेरी उपस्थिति अनिवार्य है।''

उपस्थित-जनों को उठते हुए-से हाथ जोड़कर बोले, ''मेरे समर्थकों ने इस जीत की ख़ुशी में रात्रि-भोज का आयोजन कर रखा है। सो, आप मुझे जाने की इजाज़त दें।''

''बहुत अच्छा।'' एक साथ सब के मुख से शब्द निक़ल पड़े। अभी ओम जी ने पीठ मोड़ी ही थी कि वे एक-दूसरे को कनखियों से देख उठे। कारण, इन पद्धतियों पर चल-चल कर वे भी इस मुकाम पर पहुँचे थे। वह तो नया-नया खिलाड़ी मैदान मारकर आया था।

मँजरी तो उसके लिए पलकें बिछाए बैठी थी। ओम की अगवानी करते हुए पूछ उठी, ''कुछ बात बनी?''

''कैसी बात?''

''मैं समझी थी कि आप पार्टी के सिरमौर संजय जी से विशेष महत्त्वपूर्ण पद के लिए प्रार्थना करने गए हैं।'' आज सांसद निर्वाचित पति ओम को 'तुम' न कह 'आप' कह उठी थी।

''ओफ, तुम्हें पद की पड़ी है। पहले एक अच्छा क़ाबिल सांसद तो ख़ुद को साबित कर लूँ।''

''दुरुस्त फ़रमाया।''

''पता नहीं, घर बैठे-बैठे क्या-क्या दिवा-स्वप्न लेती रहती हो।'' ओम उसका उत्तर सुने बिना ही उसी स्वर में कह उठा, ''प्रीति-भोज के लिए चेतन और तुम भी तैयार हो जाओ। मैं दस-बीस मिनट आराम करना चाहता हूँ।''

''ठीक है, सरला के हाथ चाय भिजवाती हूँ।''

''नहीं-नहीं, वहाँ कॉफी और हलका-सा नाश्ता करके आया हूँ।''

मँजरी के फ़ोन करते ही ब्यूटी-पॉर्लर की संचालिका बीना जी एक सहायिका के साथ आ पहुँचीं। दोनों ने मिलकर मँजरी के रूप-रंग में चार चाँद लगा दिए। यहाँ तक कि मँजरी को साड़ी भी पहना कर दो जगह पिन-अप भी कर दिया। इस ख़ुशी के मौके पर वे मेहताना लेने को तैयार न हो रही थीं। लेकिन मँजरी ने कहा, ''नहीं-नहीं, आपने अपना क़ीमती समय दिया है; मैं मुफ़्त में काम कराना उचित नहीं मानती।'' ख़ैर, आज उन्हें आशातीत पारिश्रमिक मिल गया।

दस क़दम की दूरी पर एक सरकारी स्कूल में देखते ही देखते शामियाना लगाया गया। मेज़-कुर्सियाँ सज गईं। दो-तीन हलवाइयों की टीम ने आदेशानुसार तीन सब्ज़ियाँ,

दही-पकौड़ी, सलाद, भठूरे, पूड़ी-कचौड़ी, गुलाब-जामुन, आइसक्रीम आदि-आदि हाथों ही हाथों तैयार कर मेज़ों पर पहुँचा दिए।

इस प्रकार के भोज पर गली-मुहल्ले के बच्चे, स्त्रियाँ, बूढ़े ही नहीं, पार्टी के असंख्य कार्यकर्ता तथा जाते-आते राहगीर भी सम्मिलित हो जाया करते हैं। रात के शायद बारह-एक बजे तक यह आनंद-भोज चलता रहा।

इस अवसर पर मोहिनी की उपस्थिति न होने का प्रश्न ही नहीं। मँजरी ओम जी के वामस्थ खड़ी थी तो वह (मोहिनी) दो क़दम आगे हाथ जोड़े आने वालों का स्वागत करते हुए कह उठती, ''आइए, आइए।'' ओम जी मन ही मन उसके प्रति कृतज्ञता भाव से ओत-प्रोत हो रहे थे। जब कभी ओम जी से आँखें चार होतीं तो दोनों के चेहरे पर मुस्कुराहट की रेखाएँ उभर आतीं।

राजनीति एवं राजनेता का पथ कंटीला, पथरीला, टेढ़ा-मेढ़ा, ऊबड़-खाबड़ हुआ करता है। उस पर भी इस रुतबे को हासिल करने के लिए पानी की तरह बहाया गया पैसा दिलो-दिमाग़ में भूचाल एवं झंझावत पैदा कर देता है। यही मुख्य कारण है कि निर्वाचित हुआ शख़्स सूद समेत ही नहीं; दस गुणा धन बटोरने के नए-नए तरीक़ों को ईजाद कर उठता है। कहता तो है, ''मैं समाज एवं देश का सेवक हूँ''; पर दीमक-सा राजकोष, कल्याणकारी योजनाओं का पैसा चाटने में हर्ज़ नहीं मानता। हाँ, यदि चुनाव-प्रक्रिया को सरल कर दिया जाए तो भविष्य में कुछ अच्छा होने की उम्मीद की जा सकती है। चुनाव लड़ने वाले प्रत्येक उम्मीदवार को बस दस मिनट टी.वी. एवं रेडियो पर अपने विचार रखने का प्रावधान हो। न रैलियाँ हों, न गली-मुहल्ले में पोस्टरबाज़ी। इनसानी-ऊर्जा, घंटे, जीवन ही नहीं; रुपए-पैसों का अपव्यय होता है। पोस्टर में लगने वाला काग़ज़ हज़ारों विद्यार्थियों की कॉपी-किताब को सस्ते में मुहैय्या करवाने में सफल हो सकता है। हर पार्टी टोपी, कंधावर आदि का प्रचलन कर उठी है। कोई सफ़ेद, गुलाबी तो कोई केसरिया रंग को पार्टी-चिह्न-सा बना उठे हैं। लाखों भारतीय ग़रीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रहे हैं। तन ढकने को पर्याप्त वस्त्र नहीं है। तो इस प्रकार का फिजूल ख़र्चा कहाँ तक उपयुक्त कहा जाएगा?

ओम जी के कार्यकर्ताओं ने हरे रंग की टोपियाँ और कंधावर धारणा स्वयं ही नहीं किए थे वरन् रैलियों, मुहल्ला-सभाओं में भी लोगों में बाँटा था; क्या मतदान के बाद उनका सदुपयोग हुआ? नहीं। बस, वे किसी के घर की अलमारी के कोने में जा पड़े और फिर कूड़ेदान के हवाले कर दिए जाएँगे।

सुरक्षा को मद्देनज़र रखकर ओम जी को बड़ा-सा बंगला मिला और मिली अन्य कई एक सुविधाएँ। आए दिन अध्यक्ष जी के यहाँ मीटिंग्स् होतीं। कई एक मुद्दों पर

क्या कहा जाए, मीडिया के किस बेतुके प्रश्न का क्या उत्तर देना होगा आदि की चर्चा होती। नित मॉलस्, ज्वेलरस् की ओपनिंग सैरेमनी, स्कूल के वार्षिक पुरस्कार उत्सव आदि पर ओम जी को सादर निमंत्रित क्या जाने लगा।

चेतन बचपन से ही मिली सुविधाओं के कारण उपभोगी-प्रवृत्ति का होता चला जा रहा था। जिस चीज़ की इच्छा व्यक्त करता वही तुरंत जुटा दी जाती। उधर मँजरी 'महिला मंडल क्लब' में प्रतिष्ठित स्थान पा गई थी। आए दिन पार्टियों में जाना अपना कर्त्तव्य मान बैठी थी। दसवीं तक कक्षा-दर-कक्षा बिना अनुत्तीर्ण करने की नीति ने चेतन को नौंवी तक पहुँचा दिया। उसकी दोस्ती भी बड़े-बड़े उद्योगपतियों, व्यवसायियों, प्रशासनिक उच्च अधिकारियों के पुत्र-पुत्रियों से थी। कभी किसी फार्म-हाउस में नाइट-पार्टी होती तो कभी किसी होटल में भोर तक ज़श्न मनाया जाता। घर के तीनों प्राणी अलग-अलग ढंग से ही नहीं वरन् विचारधारा पर अमल करते हुए अति व्यस्त जीवन जी रहे थे।

न पिता ओम को पता था; न ही माँ मँजरी को कि उनका होनहार चेतन ड्रग्स, ड्रिंक्स, डॉंस और कई एक अनैतिक कार्यों में आकरण डूबता चला जा रहा है। इन सबके सरगना नौजवान व्यापारी उसकी माँगों को पूरा करते और वह अपनी गाड़ियों में उनके साथ बैठकर पुलिस को भ्रमित करने में सफल होता रहा।

यही नहीं, हथियारों की तस्करी करने का अज़ीबो-ग़रीब तरीक़ा भी ढूँढ़ लिया था। हाँ, एक-दो पुलिस ऑफिसर ने दबे स्वर में ओम जी से इस विषय पर बात की ज़रूर। पर वे तो पुत्र-मोह ही में नहीं; धन-लोलुपता में सराबोर थे। साथ ही, विदेश यात्राओं में दस-ग्यारह समर्थकों की टुकड़ी में मोहिनी को ले जाना न भूलता था। मोहिनी को एक एन.जी.ओ. चलाने के लिए तरह-तरह की मदद की और विदेशों से डॉलर में अनुदान-राशि प्राप्त करवाई। इतना ही नहीं, तीन-चार साल में प्रमुख-प्रमुख कार्यकर्त्ताओं को अच्छी पोजिशन पर पहुँचा दिया। हाँ, जिनके लिए अपने प्रदेश में कुछ अच्छा प्रबंध न कर पाए उन्हें अपने रसूख़ के बल पर अन्य प्रदेशों में काम दिलवा दिए।

ओम जी एक सफल सांसद के रूप में जाने माने जा रहे थे। सो, पाँच साल बाद पुनः इस पद को प्राप्त करने में सफल हुए। मोहिनी अपनी एन.जी.ओ. के संपर्क में आए स्कूली छात्र-छात्राओं, महिलाओं, पुरुषों को चुनाव प्रक्रिया के दिनों पार्टी के कार्यकर्त्ताओं के रूप में लेकर जलसों, रैलियों, जन-सभाओं में पहुँचती।

मँजरी को ओम जी ने एक दिन ख़ूब खड़ी खोटी सुना दी। गुस्से में लाल-पीले होते हुए बोले, ''मुझे तो अपने कामों से फ़ुरसत नहीं है और तुम न जाने किन ग़लत कामों में डूबी हुई हो। जानती हो चेतन ने क्या किया है? पुलिस आफिसर जान-पहचान का न होता तो तुम्हारा लाड़ला जेल में सड़ता।''

''ऐसा क्या कर दिया है उसने कि तुम मुझ पर झल्ला रहे हो।''

''सुनने की हिम्मत है तुममें?''

''कुछ कहो तो?''

''अभी जनाब बारहवीं पास नहीं हो पाए; कॉलेज का मुँह नहीं देखा, दोस्तों की मदद से एक लड़की को होटल में बुलाया और...''

''फिर... फिर...''

''पुलिस का मुँह बंद रखने का जुगाड़ मुझे करना ही पड़ा।''

''अब कहाँ है?''

''मैंने उसे उसके बैड-रूम में पहुँचाया है। पर आज तुम देर रात तक कहाँ थीं?''

''क्लब की सदस्या श्रीमती रंजना जी का पचासवाँ जन्मदिन था। उन्होंने पाँच-सितारा होटल में पार्टी दी थी।''

''अरे, उसी होटल से तो तुम्हारे लाड़ले को पुलिस वाला लाया था।''

''कहीं यह विरोधी पार्टी वालों की चाल तो नहीं? वे चेतन को मोहरा बनाकर आपको बदनाम कर रहे हों।''

''हाँ, जो भी हुआ, उसको ढकने के लिए तुम्हारा यह प्वाइंट बड़ा सटीक है।''

बस दोनों मुस्कुरा दिए। यही है इन बड़े-बड़े (राजनेता, उद्योगपतियों आदि की) कथा-वार्ता। देश की उन्नति हो रही है--बस कह मात्र रहे हैं।

❑